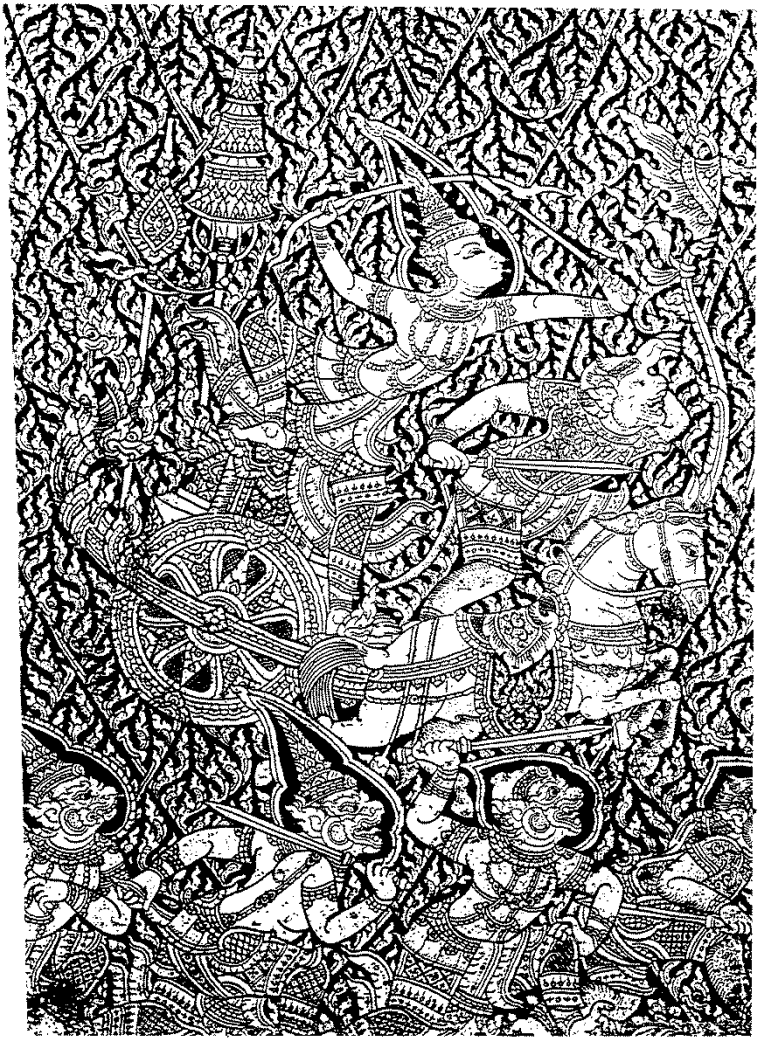

राम और सीता। सैन्यदल

रामकीर्ति

(रामाकियन)

रामायण

का

थाई रूप

प्रस्तुति

स्वामी सत्यानंद पुरी

अनुवादक

डॉ. करुणा शर्मा

रामकीर्ति : रामायण का थाई रूप

प्रस्तुति– स्वामी सत्यानंद पुरी

अनुवादक– डॉ. करुणा शर्मा

© **भारत का राजदूतावास, बेंकाक** द्वारा प्रकाशित

ISBN: 978-616-341-026-9

Printed by Embassy of India, Bangkok

श्रद्धेय गुरुवर

प्रोफेसर पूरन चंद टंडन

को

जिनकी असीम एवं अनंत शुभकामनाएं

सतत् मेरा पथ–प्रदर्शन करती हैं।

राजदूत
Ambassador & Permanent
Representative to ESCAP

सत्यमेव जयते

भारत का राजदूतावास, बेंकाक
Embassy of India, Bangkok

आमुख

थाई रामायण 'रामकीर्ति' (रामाकियन) की स्वामी सत्यानंद पुरी द्वारा अंग्रेजी में रूपांतरित पुस्तक को हिंदी में अनुदित करने वाली डॉ करुणा शर्मा को उनकी इस पुस्तक के विमोचन के अवसर पर मैं हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ

'राम की कीर्ति' अथवा 'रामकीर्ति', जैसेकि थाई लोग इसे कहते हैं, थाई भाषा के गौरव ग्रंथों में उत्कृष्ट मानी जाती है। 'रामकीर्ति' के पहले कवि होने का श्रेय थाईलैंड में वर्तमान चक्री वंश के संस्थापक राजा राम एक को जाता है। यद्यपि 'रामकीर्ति' वाल्मीकि की 'रामायण' का थाई रूप समझी जाती है, किंतु यह पूर्णतया 'रामायण' जैसी नहीं है।

थाईलैंड के रामायणीय साहित्य को वर्णित करने वाले महान काव्य ग्रंथ 'रामकीर्ति' से बाहरी संसार का परिचय स्वामी सत्यानंद पुरी जी के विद्वत्तापूर्ण शोधकार्य के माध्यम से हुआ जिन्होंने 'रामकीर्ति' का रूपांतरण अंग्रेजी में 1940 ई. में किया था। 'रामकीर्ति' के अंग्रेजी रूपांतरण के महत्व का अनुमान तो इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि इस के तीन संस्करण अब तक प्रकाशित किए जा चुके हैं। फिर भी थाईलैंड का रामायणीय साहित्य विश्व के सामान्य हिंदी–भाषियों की पहुँच से दूर बना रहा।

इस रिक्तता की आपूर्ति थम्मासॉट विश्वविद्यालय, बैंकॉक की अभ्यागत प्राध्यापक, हिंदी चेयर, डॉ. करुणा शर्मा द्वारा 'रामकीर्ति' का हिंदी अनुवाद करके की गई है। डॉ. करुणा शर्मा की यह प्रकाशित पुस्तक अपने में अलग प्रकार की है, जो रामायणीय साहित्य को भारत, थाईलैंड तथा विश्व के अन्य देशों में रहने वाले हिंदी भाषियों के बीच प्रसारित करने में उत्प्रेरक का कार्य करेगी। यह रामायण और 'रामकीर्ति' के तुलनात्मक अध्ययन को सुसाध्य बनाएगी। सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह है कि यह हिंदी साहित्य के संवर्धन में सहायक सिद्ध होगी।

भारत और थाईलैंड के मध्य साहित्यिक और सांस्कृतिक संबंधों के संवर्धन हेतु डॉ. करुणा शर्मा के किए गए प्रयासों की प्रशंसा करता हूँ। भारतीय राजदूतावास, बैंकॉक के लिए बड़े ही संतोष का विषय है कि यह ऐसी रचना के प्रकाशन में सहायता कर रहा है जो प्रारंभिक साहित्यिक कार्य में ज्ञान, चिंतन और शोध की नई संभावनाएं उजागर करेगी जिससे भारत और थाई देश की अनगिनत पीढियाँ प्रेरित होंगी।

हर्ष श्रृंगला

15 अगस्त 2015

हर्षवर्धन श्रृंगला

46, Soi 23 (Prasarnmitr), Sukhumvit Road, Bangkok 10110

मन की बात

अज्ञात की खोज के लिए मानव–मन सदा जिज्ञासु बना रहता है। उसकी यही जिज्ञासा नित नई संरचना के लिए उसे प्रेरित करती है। बैंकॉक में स्थित थम्मासॉट विश्वविद्यालय में अभ्यागत प्राध्यापक के रूप में नियुक्त हुए कुछ ही महीने बीते थे कि ज्ञात हुआ कि थाईलैंड में रामायण है 'रामकीर्ति, जिसे थाई लोग 'रामाकियन' कहते हैं। आदि कवि वाल्मीकि द्वारा आज से हजारों वर्ष पूर्व रचा गया और आज भी सर्वोत्तम ग्रंथ के रूप में प्रतिष्ठित 'रामायण' चूंकि भारतीयों की रग–रग में प्रवाहित होने वाला एक ऐसा ग्रंथ है जिसका नाम सुनकर ही श्रद्धाभाव जाग्रत हो जाता है। ऐसा ही मेरे साथ भी हुआ। 'थाईलैंड में रामायण!' मन में जिज्ञासा हुई कि क्या यहाँ की रामायण वाल्मीकि की 'रामायण' जैसी है अथवा उन दोनों में कुछ अंतर है? यदि अंतर है तो वह क्या है? इस जिज्ञासा का समाधान स्वामी सत्यानंद पुरी द्वारा अंग्रेजी में प्रस्तुत पुस्तक, 'रामकीर्ति' को पढ़कर हुआ।

अब मन में यह भाव जागा कि इसे यहाँ रहने वाले हिंदी प्रेमियों, भारत तथा विश्व के हिंदी प्रेमियों तक कैसे पहुँचाया जाए ताकि वे भी थाईलैंड की रामायण से परिचित हो सकें। इसके लिए एक ही रास्ता था–अंग्रेजी में रूपांतरित 'रामकीर्ति' का हिंदी में अनुवाद। अनुवाद करते समय मेरे सम्मुख कुछ तथ्य विशिष्ट रूप से उजागर हुए जैसे यह वाल्मीकि की रामायण पर आधारित होते हुए भी उससे काफी भिन्न है। इस पर अन्य देशों के जनजीवन, कला एवं संस्कृति के साथ–साथ थाई–भाषा, संस्कृति एवं कला का भी प्रभाव परिलक्षित होता है जैसे *भरत* का *बरत* में परिवर्तित हो जाना। भारतवर्ष की अन्य रामायणों जैसे तमिल रामायण, बंगाली रामायण से भी यह प्रभावित है। पात्रों में भी कुछ नाम तो ज्यों के त्यों रामायण से मिलते हैं, कुछ नाम थोड़े से बदले हुए हैं और कुछ नाम पूरी तरह से भिन्न हैं। यही बात पात्रों के जीवन चरित्रों के संदर्भ में भी कही जा सकती है। रामायण में राम सर्वोच्च देवता के रूप में प्रतिष्ठित हैं जबकि रामकीर्ति में राम ईस्वर के अधीनस्थ देवता के रूप में सामने आते हैं।

हिंदी में अनुदित इस रामायण में हिंदी प्रेमियों की श्रद्धापूर्ण भावनाओं का आदर करते हुए राम, सीता, लक्ष्मण, भरत, हनुमान, ऋषि आदि के लिए सम्मानजनक भाषा का प्रयोग किया है। अनुवाद करते समय भाषा को सरल,

बोधगम्य और रोचक बनाने का भी प्रयास रहा है। इसके बावजूद कहीं कोई मात्रिक अशुद्धता अथवा अनुवाद के क्रम में कोई त्रुटि रह गई हो तो सुझाव आमंत्रित हैं।

परम चेतना की दिव्य कृपा के बिना प्रारंभ किया गया कोई कार्य संपन्न हो सकता है! उसके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन शब्दों की सीमा से परे है। स्वामी सत्यानंद पुरी जी के प्रति आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने अपने अनथक प्रयासों से थाई भाषा से अंग्रेजी भाषा में 'रामकीर्ति' का वृतांत प्रस्तुत किया, उनकी प्रस्तुति ही इस अनुवाद की आधार भूमि बनी है। कुछ माह पूर्व लिया गया संकल्प आज पुस्तक के रूप में सामने न आ पाता यदि संस्कृत एवं थाई भाषा के विद्वान माननीय प्रो. चिरापत जी का पथ प्रदर्शन तथा 'थाई हिंदी परिषद' के संयोजक तथा सहायता करने में अग्रणी माननीय श्री सुशील धानुका जी का उत्साहवर्धक सहयोग न मिलता। मैं हृदय से कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ 'थाई–भारत कल्चरल लॉज, बैंकॉक' की प्रबंधक समिति की, जिन्होंने हिंदी अनुवाद के लिए प्रस्ताव पहुँचते ही उसे अविलंब स्वीकृति दी। आभारी हूँ 'भारतीय अध्ययन केंद्र' की निदेशक डॉ नंग्लुकसाना और सचिव श्री अरुण चैट्टी की जिन्होंने अंग्रेजी पुस्तक की व्यवस्था की।

सदा की तरह जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में मेरा साथ निभाने वाले अपने पतिदेव श्री राजेंद्र शर्मा के सहयोग के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने की जब बात आती है, तो मौन रह जाने के अतिरिक्त मेरे पास विकल्प ही नहीं रहता। इस पुस्तक के अनुवाद के समय आने वाली कठिनाईयाँ दूर ही न हो पातीं यदि उनका विशेष सहयोग मुझे न मिलता। मेरी प्रिय मित्र डॉ मंजु लता और शिल्पाकॉन विश्वविद्यालय के ऐसोसिएट प्रोफेसर डॉ बम्रुंग खाम–एक का विशेष योगदान अविस्मरणीय रहेगा।

मैं कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ भारतीय राजदूतावास, बैंकॉक' के सरल, सौम्य, मृदुभाषी तथा हिंदी के प्रचार–प्रसार में विशेष रुचि रखने वाले माननीय राजदूत श्री हर्षवर्धन श्रृंगला जी के प्रति, जिन्होंने इस पुस्तक के प्रकाशन का प्रस्ताव रखने पर तुरंत अपनी स्वीकृति दी। भारतीय दूतावास के ही डी.सी.एम. पद पर कार्यरत माननीय श्री जी. बाला सुब्रह्मण्यम और प्रथम सचिव श्री राजेश

स्वामी जी के प्रकाशन के लिए किए जाने वाले प्रयासों के प्रति विनम्र कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

इस पुस्तक को हिंदी प्रेमियों को सौंपते हुए मुझे जो सुखद–विलक्षण आनंद की अनुभूति हो रही है, उसे व्यक्त करना संभव नहीं। आशा है कि इस अनुवाद से थाईलैंड की रामायण के प्रति जिज्ञासुओं की जिज्ञासा अवश्य ही शांत होगी।

डॉ करुणा शर्मा

ईमेल–karunajee1957@gmail.com

प्राक्कथन

काव्यात्मक प्रतिभा की उन सभी श्रेष्ठ कृतियों में जिन्होंने संपूर्ण विश्व के साहित्य पर अपनी अमिट छाप छोड़ी है, कोई भी रामायण महाकाव्य से श्रेष्ठ नहीं हो सकती क्योंकि उसका विस्मयकारी प्रभाव भारत की सीमाएं पार करके अन्य देशों के धर्म, कला और साहित्य को भी कई अज्ञात शताब्दियों से सुव्यवस्थित रखे हुए है। यदि विश्व ने कभी ऐसा कवि दिया है जिसकी अमर कलम ने न केवल साहित्य के विशाल क्षेत्र में बल्कि धर्म और कला के क्षेत्र में भी एक विशिष्ट धार्मिक विश्वास स्थापित किया है, तो वे केवल वाल्मीकि हैं, संस्कृत काव्य के जनक, मानवता के प्रथम कवि। विद्वत्ता उस चेतना को खोज पाने में विफल रही है जिसने कभी उस कवि को इतना अधिक प्रेरित किया कि उसकी कलम के हल्के से स्पर्श मात्र ने अनन्त प्रेरणा के भण्डार का सृजन किया जो बहुत लंबे समय से न केवल अपनी मातृभूमि वरन् भारत से भी बहुत दूर देशों की भी सांस्कृतिक चेतना का पोषण करती आ रही है।

वाल्मीकि की मातृभूमि से बहुत दूर, कवियों ने उनकी रचना के असीम भंडार में से अनेक उत्कृष्ट साहित्य को एकत्रित किया है और अपने साहित्य को समृद्ध किया है। कलाकारों ने चिरसम्मानित कला को प्राप्त करने की प्रेरणा प्राप्त की और स्वयं को अमर बना लिया, कृषकों ने उन्हें अपने खेतों में और लोगों ने नदियों में नाव खेते हुए अपने परिश्रम की थकान को दूर करने के लिए उन्हें गुनगुनाया। वास्तव में किसी अन्य कवि की कलम मानव मन को इतना अधिक प्रभावित करने में सफल नहीं रही जितनी कि वाल्मीकि की कलम।

वे लोग भी, जो अभी तक संदेहग्रस्त हैं कि क्या राम ऐतिहासिक राजा थे–जिसकी सच्चाई से कोई भी भारतीय इंकार नहीं करता, निस्संदेह, स्वीकार करेंगे कि जिस राम का सृजन वाल्मीकि की कलम से हुआ है, वह अब भी जीवित है और आने वाले समय में भी सदैव जीवित रहेगा। भारतीय इतिहास राम जैसे कर्तव्यपरायण पुत्रों से, सीता जैसी निष्ठावान पत्नियों से और लक्ष्मण जैसे समर्पित भाईयों से भरा हुआ है, फिर भी इस आदि महाकवि के अनुपम सृजन के सामने उनकी चमक वैसे ही फीकी पड़ जाती है जैसे कि तारों का प्रकाश चंद्रमा के रुपहले प्रकाश में धुंधला पड़ जाता है। बीती सदियों में कवि

गण अपने संरक्षक राजाओं को अमर बनाने का प्रयास कर चुके हैं, किंतु उन सब के प्रयत्न साहित्य के सुखद संगीत में उच्चतम स्तर की बहुत थोड़ी सी ध्वनि, यद्यपि मधुर, उत्पन्न करने में सफल हुए। लेकिन वह गीत, जिसका जन्म मानव सभ्यता के अज्ञात पालने में हुआ था और वह भी आधे–अधूरे इतिहास के धुंधले दिनों में, थाईलैंड जैसे सुदूर देशों में आज भी साहित्यिक संगीत में गूँज रहा है।

थाईलैंड के रामायण से संबद्ध साहित्य में एक अनोखी बात देखने में आती है कि 'रामायण' शब्द ही उनके साहित्य में देखने को नहीं मिलता और इसका लेखक भी जनसाधारण के लिए अज्ञात है। हालांकि वे 'राम की कीर्ति' अथवा 'रामकीर्ति' जैसे थाई लोग उसे पुकारते हैं, से बहुत अच्छी तरह परिचित हैं, यह बात राजा राम छह के शासन से पहले तक पता नहीं थी। जब उन्होंने रामकीर्ति के उद्भव की विद्वत्तापूर्ण व्याख्या की तब वे लोग रामायण के मूल नाम और इसके लेखक वाल्मीकि को जान पाए और केवल वही लोग इसके बारे में जान पाए जिन्होंने थाई भाषा के प्रतिष्टित ग्रंथों में सक्रिय रुचि ली थी। जहाँ तक जनसाधारण का संबंध है, वे आज भी इसके मूल नाम और इसके लेखक से अनभिज्ञ हैं।

जैसे एक प्रसिद्ध गीत का रचयिता धीरे–धीरे उन लोगों की दृष्टि से लुप्त हो जाता है जो उसके संगीत के जाल में फँस जाते हैं, ऐसे ही वाल्मीकि का अस्तित्व भी जनसाधारण के लिए समाप्त होता प्रतीत होता है क्योंकि वे इसके संगीत के आकर्षण से इतने अधिक सम्मोहित हो गए कि उनमें इसके रचनाकार को ढूंढने की इच्छा ही नहीं बची। वास्तव में वह कवि सौभाग्यशाली होता है जो अपनी काव्यमय प्रतिभा की ज्योति में वैसे ही छिपा रहता है, जैसे चकाचौंध करने वाली अपनी किरणों से सूर्य। हम खिली हुई धूप का आनंद लेते हैं किंतु हमारी आँख उसकी चकाचौंध को वेध कर सूर्य को देखने में असमर्थ होती है।

थाईलैंड की संस्कृति पर रामायण के प्रभाव की अभिव्यक्ति तीन अलग–अलग क्षेत्रों में हुई है, वे हैं, साहित्य, कला और नाट्यशास्त्र। यद्यपि थाईलैंड में रामायणीय साहित्य के पहले परिचय के संकेत, जहाँ तक पीछे जाए

ईसा की तेरहवीं शताब्दी के समय के मिलते हैं, फिर भी इसका तब तक पता नहीं चला जब तक रत्नाकोसिन काल (लगभग 1781ई.) शुरु नहीं हुआ था, जब राम की कीर्ति की अभिव्यक्ति सुंदर काव्यात्मक ग्रंथ में हुई जो आज भी थाई के गौरव ग्रंथों में उत्कृष्ट मानी जाती हैं। उन प्रारंभिक शताब्दियों में रामायण का प्रभाव अक्सर राजाओं और कुलीन व्यक्तियों के नामों और साहित्यिक उद्धरणों के रूप में पाया जाता है। रामकीर्ति का पहला कवि होने का श्रेय राजा राम एक को जाता है जो वर्तमान में शासन करने वाले चक्री वंश के संस्थापक थे। इसके बाद इनके पुत्र राजा राम दो (1809–1824ई.) के द्वारा ग्रंथ का नाट्य रूपांतरण किया गया और तब से यह मुखौटे के रूप में खेला जाने लगा। अपने अभिनेताओं और अभिनेत्रियों की भड़कीली पोशाकों से अलंकृत, उनके कोमल स्वरूपों की सुर–तालबद्ध क्रियाओं से आकर्षक और मुग्धकारी मधुर धुनों से सराबोर, ये मुखौटों वाले खेल सार्वजनिक समारोहों में आज भी खेले जाते हैं और आज के चलचित्रों और फिल्मों के समय में भी दर्शकों को आकर्षित करते हैं।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि मुखौटे से संबंधित पहला साहित्य अयुध्या (1349–1647ई.) के समय का है। किंतु बहुत से रामायणीय नाटकों के समान, इनके कथानक भी रामायण की कुछ एकाकी घटनाओं पर निर्भर होते थे और उनमें कोई निरंतरता भी नहीं होती थी जैसी कि राजा राम दो के बाद वाले मुखौटों में हम पाते हैं। थोनबुरी के राजा, जो राजा राम एक के एकदम पूर्ववर्ती थे, ने भी रामायण की कुछ घटनाओं को पद्य रूप में लिखने का प्रयास किया, जो अब भी विद्यमान हैं।

लेकिन मुखौटों का मंचन शुरु होने से बहुत पहले एक विशेष प्रकार का नाटक प्रचलित था, थाई भाषा में उसे ह्नांग कहा जाता था जिसका अर्थ होता था खाल अथवा त्वचा, जिसमें सभी रामायणीय आकृतियाँ खाल काटकर बनाई जाती थीं, उनको विशिष्ट पात्र के रंग के अनुरूप रंग दिया जाता था क्योंकि प्रत्येक रामायणीय पात्र का अपना एक विशेष रंग होता था जैसे राम का

हरा रंग, लक्ष्मन का सुनहरा रंग आदि, और वे मंच पर नाटक करते थे, वे बहुत कुछ कठपुतलियों के समान हुआ करते थे, किंतु उन पर नियंत्रण डोरी के स्थान पर हाथ से किया जाता था। ह्नांग प्रायः रात में होने वाले उत्सवों में खेले जाते थे, लेकिन अब उनका समय लगभग समाप्त हो चुका है और खाल की इस प्रकार की आकृतियाँ थाई कला की दुर्लभ वस्तु के रूप में संग्रहालयों में शरणागत हो चुकी हैं। यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि थाइलैंड में ह्नांग जावा से आया था और संस्कृत के छाया नाटक का रूपांतर है।

इनके अतिरिक्त, हम रामायण का प्रभाव पूर्ण रूप से ललित कलाओं में देख सकते हैं, उनमें एमरॉल्ड बुद्ध के मंदिर की दीवारों पर बनाई गई रामायण पर आधारित चित्रकारी उल्लेखनीय हैं। इस श्रंखला में लगभग दो सौ चित्र हैं जो राजा राम एक के समय के हैं। रामायणीय आकृतियाँ पंखों, तकियों आदि पर भी काढ़ दी जाती हैं, और नीलो धातु की वस्तुओं पर उन्हें उत्कीर्ण किया जाता है जैसे पेटियों के सिर, सिगरेट के डिब्बे आदि। वास्तव में, हम कह सकते हैं कि राम के महान यश के चारों ओर ललित कलाओं का विशेष प्रचलन शुरू हो गया है जिन्हें हम निश्चित तौर पर थाई ललित कलाओं की रामायणीय पद्धति से नामित कर सकते हैं। इस बात से कोई भी इंकार नहीं कर सकता कि रामकीर्ति के बिना और अपनी संस्कृति के विभिन्न क्षेत्रों में इसके अनेक प्रकार के योगदानों के बिना थाईलैंड बहुत कुछ अपनी पारंपरिक महत्ता खो देगा। रामकीर्ति ने आकृतियों और मुहावरों, विचारों और प्रेरणाओं से उसे अविरत प्रवाह प्रदान किया है और अपनी काव्यात्मक व्याख्या के कल्पनाप्रधान आकर्षण से यह आज के समय में भी प्रशिक्षित तथा अप्रशिक्षित सभी को एक समान बाँधे हुए है, जबकि पूर्व का गौरव पश्चिम की चकाचौंध के सामने धीरे–धीरे धुंधला पड़ता जा रहा है।

जैसी राम की महानता है, उसका विस्तृत वर्णन है, किंतु यह रामायण से कभी भी प्रत्यक्षतः प्रभावित नहीं हुई। रामकीर्ति अपने कलेवर में उत्तरी भारत से मलाया तक के बहुत से देशों में प्रसिद्ध रामायणीय कहानी–किस्सों को समाए हुए है। इससे निस्संदेह यह पता चलता है कि जिस मार्ग से राम की कहानी ने थाईलैंड में प्रवेश किया, वह बहुत से अलग–अलग देशों से होकर गुजरता है। हालांकि, जहाँ तक इसके कथानक का संबंध है, यह रामायण की

प्रमुख कहानी से पूर्णतया मेल खाता है, फिर भी इसका विवरण अपने मूल से इतना अलग हो जाता है कि हम उसको पूरी तरह भुला देते हैं और इस कारण हम यह सोचने लगते हैं कि हम राम का पूरी तरह से एक बिल्कुल अलग वृतांत पढ़ रहे हैं। संस्कृत रामायण वाल्मीकि के नारद से प्रश्न पूछने से प्रारंभ होती है, उससे भिन्न रामकीर्ति नारायण के तीसरे अवतार को अपना प्रारंभिक विषय बनाती है। इससे रामकीर्ति के मूल का श्रेय पुरानी पुस्तक 'नारायणा सिप्पांग'–नारायण के दस अवतार को जाता है, जिसके अनुसार नारायण के दस अवतारों का क्रम इस प्रकार है– 1. वराह 2. कच्छप 3. मत्स्य 4. भैंसे को मारने के लिए भैंसा 5. त्रिपुरम से शिव लिंग को लुभाने के लिए तपस्वी 6. हिरण्यपाकासुर को मारने के लिए सिंह (नृसिंह) 7. तवन नामक राक्षस को धोखा देने के लिए कुबड़ा (वामन) 8. कृष्ण 9. अप्सरा (अध्याय 4 में) 10. राम। दूसरी रोचक विशेषता यह है कि जहाँ रामायण के सभी रूपांतरों में राम अथवा नारायण को सभी देवताओं में सर्वोच्च स्थान प्राप्त है, वहीं हम रामकीर्ति में उनकी स्थिति देवताओं में सर्वोच्च ईस्वर के अधीन पाते हैं।

हम इस पर भी संक्षेप में विचार विमर्श करना उचित समझते हैं कि रामकीर्ति में जो रामायणीय नाम हैं, वे मूल रामायण से किस तरह से भिन्न हैं। पुस्तक का ध्यानपूर्वक अवलोकन प्रमाणित करेगा कि व्यक्तियों और स्थानों के नामों के संदर्भ में तीन विभिन्न प्रकार की व्यवस्थाएं देखी जा सकती है। पहली, कुछ नाम तो पूर्ण रूप से वैसे ही लिए गए हैं जैसे राम, हनुमान आदि, दूसरी, कुछ नाम मूल से पूर्णतः भिन्न हैं जैसे मंथरा का नाम कुक्की, जो निश्चित रूप से संस्कृत शब्द कुब्जी का विकृत रूप है और तीसरी, ये कुछ रूपांतर के साथ हैं जैसे सत्रुघ्न का नाम सत्रुद, कुवेर का नाम कुपेरन।

इसप्रकार के परिवर्तनों और रूपांतरणों का श्रेय भाषा की ध्वन्यात्मक विशिष्टताओं को दिया जा सकता है। कभी–कभी दो वर्णों के मध्य में आने वाले 'अ' को पहले वर्ण को दूसरे वर्ण से मिलाने के क्रम में लुप्त कर दिया गया है, जबकि शब्द का अंतिम 'अ' प्रायः मौन कर दिया गया है जैसे कि हम प्रायः बंगाली भाषा में देखते हैं। इसलिए 'गरुड़' का उच्चारण 'खुत' है। इसके अतिरिक्त, मौलिक रूप से अल्पभाषी भाषा होने के साथ–साथ शब्द के सही वर्णविन्यास के स्थान पर शब्द की ध्वनि से चिपक जाने की प्रवृत्ति के कारण

हम प्रायः अल्प उच्चारण के साथ शब्द का परिवर्तित रूप पाते हैं। 'लक्ष्मण' 'लक्षण' लिखा जाता है, जो थाई भाषा में सामान्य शब्द है, इसमें पहले अक्षर की ध्वनि को बनाए रख बाकी ध्वनियों को समाप्त करते हुए इसका उच्चारण 'लक' किया जाता है। थाई भाषा की एक अन्य विशिष्टता यह है कि इसमें एक वर्ग के तीसरे और चौथे वर्णों का उच्चारण एक ही तरह से किया जाता है, जिसकी ध्वनि संस्कृत के दूसरे वर्ण के समान होती है। इसप्रकार 'ग, घ' का उच्चारण संस्कृत के 'ख' की तरह होता है। यह रामायणीय नामों में बदली हुई ध्वनि के कारणों में से एक माना जा सकता है। इसलिए हम पाते हैं कि शब्द 'भरत' का उच्चारण 'फ्रौट' होता है और 'बरत' लिखा जाता है। संयोग से यह देखा जा सकता है कि 'a' का अल्प उच्चारण होता है जैसे ditto में 'o' ।

लेकिन फिर भी कुछ परिवर्तित और रूपांतरित नाम ऐसे हैं जो भाषा की ध्वन्यात्मक विशिष्टताओं को पूरा नहीं करते, और ये वे नाम हैं जो हमें रामायण के थाई रूपांतर के उद्‌गम के बहुत नजदीक ले जाते हैं, क्योंकि ये निश्चित रूप से रामकीर्ति के कलेवर में छोड़े हुए विभिन्न प्रभावों को दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, कुपेरन नाम पर विचार किया जा सकता है। यद्यपि बहुत सी थाई रचनाओं में हम प्रायः संस्कृत शब्द कुवेर पाते हैं जबकि रामकीर्ति में धन के स्वामी का नाम हमेशा कुपेरन ही रहा है, जो कुवेर के लिए तमिल शब्द है और इसलिए तमिल प्रभाव को भी इसमें सरलता से पहचाना जा सकता है। रामकीर्ति में वर्णित रामायणीय नामों का संपूर्ण अध्ययन, निस्संदेह, राम की कीर्ति के थाई रूप के उद्‌गम तक पहुँचाने में उपयोगी सिद्ध होगा। लेकिन यह इतना अधिक विस्तृत है कि इसे प्राक्कथन की कुछ पंक्तियों में नहीं लिखा जा सकता, इसलिए यहाँ हम इस विषय पर पूर्ण विवेचन नहीं कर रहे हैं, इससे हमारा आशय है कि इसे एक अलग पुस्तक में और एक उचित समय पर करना होगा, जब हमारे पाठकों को थाई रूपांतर के विषय में यथेष्ट बोध हो जाएगा।

इसलिए इस पुस्तक का एकमात्र उद्‌देश्य यह ध्यान में रखा गया है कि रामकीर्ति का स्पष्ट रूप, इसकी विशेषताओं में किसी प्रकार की काट–छाँट किए बिना अपने पाठकों तक पहुँच सके, ताकि यह इन सभी अतिरिक्त दंतकथाओं के उद्‌गम स्थान तक पहुँचाने में हमारा मार्गदर्शन कर सके।

संक्षेप में, मैं यह स्वीकार करता हूँ कि पुस्तक अपने को पूरा कर पाने में phya Anuman Rajathon और Phra Sara Prasert बहुमूल्य सुझावों के लिए, एमरॉल्ड बुद्ध के मंदिर की दीवारों की आकृतियों के चित्रों को लेने के लिए Phya Ratnabimba की कृपालु अनुमति के लिए, Luang vuddhi Variron को 'मणिमेखला टैंटालाइजिंग रामासुर' की प्लेट* देने के लिए और Nai Aree Subal का उनकी अपनी पेंटिग्स की फोटो लेने के इन सभी की ऋणी है।

इन सभी महानुभावों के प्रति अपना सहृदय आभार व्यक्त करता हूँ।

स्वामी सत्यानंद पुरी

---

*ये फोटो इतनी पुरानी हैं कि इन्हें दोबारा संतोषप्रद तरीके से प्रस्तुत करना संभव नहीं है। पाठकों की जानकारी के लिए कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों को रेखांकित किया गया है, (जो आभार के साथ Chud Sad Suan Tua Lakorn Lae Buddha –Silpa' by S.Karnchanadul, बैंकॉक, B.E.2540 से लिए गए हैं।)

द्वितीय संस्करण

प्राक्कथन

रामकीर्ति कुछ समय से उपलब्ध नहीं थी। किंतु सियाम की संस्कृति तथा साहित्य में रुचि रखने वाले विदेशी विद्वानों की सतत् मांग पर थाई–भारत कल्चरल लॉज और स्वामी सत्यानंद पुरी फाउंडेशन ने इस पुस्तक के द्वितीय संस्करण का प्रकाशन किया है।

हम आशा करते हैं कि यह पुस्तक अपने बहुमूल्य उद्देश्य को पूरा करेगी।

अप्रैल 1949,

बैंकॉक

Phya Anuman Rachathon

अध्यक्ष

थाई–भारत कल्चरल लॉज

और

स्वामी सत्यानंद पुरी फाउंडेशन

तृतीय संस्करण

प्राक्कथन

रामकीर्ति के दूसरे अंग्रेजी संस्करण को प्रकाशित (1949) हुए लगभग 50 वर्ष बीत चुके हैं। **रामायण** एक भारतीय महाकाव्य है जिसका थाई संस्कृति पर गहन प्रभाव है, फिर भी **रामकीर्ति** पूरी तरह से **रामायण** जैसी नहीं है। दोनों रूपांतरणों के सामाजिक मूल्यों और नैतिक मानदंडों की निरंतरता और भिन्नता को समझने की दृष्टि से थाई और भारतीय, दोनों के लिए अध्ययन और तुलना करने हेतु यह रामकीर्ति या रामायण का थाई रूप एक महत्वपूर्ण गौरव ग्रंथ बना रहेगा।

यह हमारे परामर्शदाता श्री करुणा **कुसलाशय** थे जिन्होंने हमें इस ग्रंथ के गौरव का स्मरण करवाया और थाई–भारत कल्चरल लॉज की विनम्र अनुमति से एक बार फिर इस महान कार्य को आप लोगों के समक्ष प्रस्तुत करने का मुझे सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

Chatsumarn Kabil Singh

निदेशक

भारत अध्ययन केंद्र

थम्मासॉट विश्वविद्यालय

अप्रैल 1, 1998

स्वामी सत्यानंद पुरी का संक्षिप्त जीवन परिचय

थाई–भारत कल्चरल लॉज के संस्थापक स्वामी सत्यानंद पुरी का जन्म 3 मार्च, 1902 को भारत के बंगाल राज्य में हुआ था। उन्होंने कलकत्ता विश्वविद्यालय से संस्कृत तथा दर्शनशास्त्र में प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त कर स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की।

अपनी उपाधि प्राप्त करने के बाद, उन्होंने दो वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालय में अध्यापक के रूप में कार्य किया। इस समय में उन्होंने दर्शनशास्त्र तथा संस्कृति पर कुछ पत्रिकाएं संपादित कीं और उन्होंने कलकत्ता में 'सोसाइटी ऑफ ओरियंटल कल्चर' की स्थापना की जिसके अध्यक्ष डॉ सर्वपल्ली राधाकृष्णन थे। पौरोहित्य–दीक्षा लेने के कुछ ही समय बाद वे महान भारतीय कवि रबींद्रनाथ टैगोर के आग्रह पर सन् 1932 में भारत छोड़कर थाइलैंड चले आए।

यद्यपि थाईलैंड के लिए वे बिल्कुल अजनबी थे तथापि स्वामी सत्यानंद पुरी ने थोड़े ही समय में थाई लोगों और भारतीयों का दिल जीत लिया और साहित्यिक, सामाजिक और सांस्कृतिक कार्यों में उनसे सहायता और सहयोग प्राप्त किया।

यहाँ आने के तुरंत बाद, उन्होंने थाई भाषा सीखनी शुरू कर दी और छह महीने के अंदर ही उन्होंने भाषा पर पर्याप्त अधिकार कर लिया। इसी भाषा में उन्होंने चूलालोंकोर्न विश्वविद्यालय के एक समारोह में भाषण दिया जोमहामहिम राजा प्रजाधिपॉक और रानी रंभाई बरनी (Their Majesties King Prajadhipok and Queen Rambhai Barni) की कृपालु उपस्थिति से सुशोभित था।

वे 3 मार्च 1942 को, जो संयोग से उनका जन्मदिन था, जापानी अधिकारियों के निमंत्रण पर सिंगापुर गए। वहाँ से वे टोकियो के लिए हवाईजहाज पर चढ़े और फिर समाचार आया कि आइस की खाड़ी में विमान दुर्घटनाग्रस्त हो गया। यह दिन था 24 मार्च 1942।

थाईलैंड में अपने दस वर्ष के प्रवास के समय उन्होंने थाई, अंग्रेजी और संस्कृत में निम्नलिखित पुस्तकें लिखीं :

अंग्रेजी–(English)

1. दि ओरिजिन ऑफ बुद्धिस्ट थॉट्स।(The Origin of Buddhist Thoughts)
2. रामाकियन (Ramakien)

संस्कृत–(Sanskrit)

धर्मपदार्थकथा(पालि भाषा के धम्मपदाथ्थकथा का अनुवाद)(Dharmapadarthakatha)

(Translation of Pali Dhammapadatthakatha)

थाई–Thai

ए सिस्टम ऑफ इंडियन लोजिक, प्रिंसिपल्स ऑफ डिबेट(A System of Indian logic, Principles of Debate)

ए हैंडबुक आफ टर्का फिलॉसिफी(A Handbook of Tarka Philosophy)

एफौरिज्म आफ योगाफिलोसिफी विद एक्सप्लेनेटरी कोनोटेशन (दो भाग)(Aphorisms of Yoga Philosophy with explanatory connotation)(Two Volumes)

ओरियंटल फिलासिफी(पार्ट–1); और (Oriental Philosophy)(Pt.I); and दि लाइफ ऑफ महात्मा गांधी(The Life of Mahatma Gandhi)

विषय–सूची

अध्याय		पृष्ठसंख्या
1	अयुध्या के प्रथम राजा अनोमतान का जन्म	3
2	राम और उनके भाईयों का जन्म	7
3	लंका का सृजन	10
4	दसकंठ का पूर्ववृत्त	13
5	दसकंठ का मंडो के साथ विवाह	16
6	बाली और अंगद का उद्भव	20
7	हनुमान का जन्म। उनकी बाली से भेंट	25
8	अंगद का जन्म	28
9	दसकंठ का अमरत्व	29
10	सीता का जन्म	30
11	राम का काकनासुर से सामना	33
12	राम और सीता का विवाह	35
13	राम और रामासुर का युद्ध	37

14	राम का वनवास	38
15	राम की चरणपादुकाओं का अधिष्ठापन	40
16	राम का गोदावरी पर आगमन	42
17	राम और लक्षण का सम्मानखा और उसके दल से सामना	44
18	सीता का अपहरण	47
19	राम द्वारा सीता की खोज। उनकी हनुमान से भेंट	50
20	राम की सुग्रीव से भेंट	53
21	बाली का वध	57
22	युद्ध की तैयारी	59
23	हनुमान की लंका यात्रा। उनके साहसिक कार्य	61
24	हनुमान की सीता से भेंट। लंका–दहन	65
25	दसकंठ का स्वप्न। राम के प्रति बिभेक की श्रद्धा	69
26	सेतु का निर्माण। लंका की किलाबंदी	74
27	राम का अपहरण। मैयराब का वध	78
28	कुंभकरण का वध	83
29	लक्षण का इंद्रजीत से सामना	90
30	इंद्रजीत का वध	95
31	दसकंठ और उसके मित्रों से सामना	100

32	मालिवग्गब्रह्म का निर्णय	106
33	विशाल भाला कपिलाबद	109
34	जीवन का अमृत	114
35	जीवात्मा का पात्र	117
36	दसकंठ का वध	123
37	सीता की अग्नि परीक्षा	130
38	राम की अयुध्या वापसी	133
39	लंका में विद्रोह	137
40	सीता का निर्वासन	141
41	मंकुट और लब का जन्म	147
42	राम का अश्वमेध यज्ञ। पिता और पुत्र के बीच युद्ध	150
43	सीता का पाताल में प्रवेश	155
44	राम का जंगल में प्रवास	158
45	राम और सीता का पुनर्मिलन	160

रामकीर्ति

(रामाकियन)

अध्याय 1

अयुध्या के प्रथम राजा अनोमतान का जन्म

प्राचीन समय की बात है, जब संसार अपनी आदिम अवस्था में था, चक्रवाल पर्वत की चोटी पर हिरन्त्यक्ष[1] नाम का एक राक्षस रहता था जो शक्ति और आकार में विचित्र था। अत्यधिक स्वर्णिम आकृति के कारण भयानक और ईश्वरीय कृपादृष्टि से अपराजेय वह राक्षस इतना अधिक खुंखार था कि कुछ ही समय में उसके अत्याचार असहनीय हो गए। अपनी चमत्कारिक शक्तियों से निडर और मदहोश हो, उसके अंदर का दानव संपूर्ण सृष्टि को, उसके अभागे निवासियों सहित, नष्ट करने के लिए जागृत हो उठा। भारी विध्वंस करने पर भी संतुष्ट न हो वह सारे संसार को समाप्त करने के लिए टूट पड़ा। उसने धरती को फाड़कर उसमें से जम्बुद्वीप, उत्तरकुरु और अमरगोयना नामक तीन दीर्घाकार टुकड़े निकाले, उनको लपेटकर उन्हें अपनी काँख में ऐसे दबा लिया जैसे कि मात्र वे कागज के बंडल हों और नीचे गोता लगाकर पाताल लोक[2] चला गया।

यद्यपि वह अजेय था तथापि उसके कर्मों के प्रतिफल का दिन भी नजदीक आ रहा था। उसकी निरंकुश धृष्टता और क्रूरता ने देवताओं के दिलों में भी भय पैदा कर दिया था। इसीलिए ईस्वर से सुरक्षा पाने हेतु वे कैलास पर्वत[3] की ओर दौड़ पड़े। करुणामय ईस्वर को उन तीनों लोकों के अभागे निवासियों पर सहज ही दया आ गई। इसलिए उन्होंने नारायण[4] को बुलवाया और हिरंता के क्रूर पंजों से संसार को बचाने के लिए उन्हें आदेश दिया।

---

[1]सं. हिरण्याक्ष

[2]पाताल

[3](सं. कैलास)

[4]रामकीर्ति के अनुसार, नारायण का स्थान शिव के अधीन है–एक ऐसी विशिष्टता जो शायद यह दिखाती है कि रामायण को संभवतः पहली बार शिव संप्रदाय ने प्रस्तुत किया था।

तदनुसार नारायण ने वराह का रूप धारण किया और गोता लगाकर नीचे पाताल लोक में चले गए, जहाँ वह राक्षस अपनी सुरक्षा की कल्पित धारणा कर विश्राम कर रहा था। वे वस्तुतः पूरी शक्ति से आपस में भीषण संघर्ष करने लगे। अंत में विजय नारायण के ऊपर प्रसन्न हुई और हिरंता को पराजित कर मार दिया गया।

फिर नारायण क्षीरसागर में स्थित अपने घर लौट आए और वैदिक मंत्रों का जप करने लगे। जब नारायण की आवाज अपने चारों ओर के शांत वातावरण में गूंज उत्पन्न कर रही थी, तभी समुद्र की सतह पर एक पूर्ण विकसित सुंदर फूल के साथ कमल का एक कोमल पौधा उग आया और इसकी कोमल और सुगंधित पंखुड़ियों के बीच एक शिशु दिखाई दिया जो रमणीयता में देवताओं से भी उत्कृष्ट था। नारायण ने उस बालक को अपनी बाहों में ले लिया और उसे ईस्वर को समर्पित करने के लिए कैलास पर्वत की ओर चल पड़े।

ईस्वर की दैवीय इच्छा से शिशु का संसार का पहला राजा होना नियत था और दानवों के अत्याचारी शासन से संसार को मुक्त कराने के एकमात्र उद्देश्य के लिए नारायण के वैभवशाली वंश[1] की स्थापना करना था।

यह चमत्कारिक बालक कल्याणकारी राज्य की शुरुआत कर सके, इसके लिए जम्बुद्वीप नामक देश चुना गया और उसकी राजधानी का निर्माण करने का दायित्व इंद्र को सौंपा गया।

इसलिए ईस्वर के आदेश का पालन करने के लिए इंद्र नीचे जम्बुद्वीप आ गया जहाँ वह अचनागवी, युगाग्र, दाह और याग नामक चार ऋषियों से मिला।

---

[1]यह उल्लेखनीय है कि यहाँ राम का वंश सूर्यवंश नहीं है जैसाकि मूल रामायण में है बल्कि उसे नारायण के वंश से जाना जाता है।

उन्होंने देवताओं के राजा इंद्र को अपने निवास स्थान द्वरावती[1] के जंगल में राजधानी बनाने का परामर्श दिया। इसलिए नारायण के वंशज राजाओं की राजधानी उस जगह स्थापित की गई, जहाँ कभी द्वरावती का जंगल हुआ करता था और जिन चार ऋषियों ने उस जगह को राजधानी बनाने की सलाह दी थी, उन के नामों के चार प्रारंभिक वर्णों के आधार पर उसका नाम अयुध्या रखा गया। तब उस बालक का अनोमतान[2] नाम से अयुध्या के राजा के रूप में राज्याभिषेक कर दिया गया तथा उसे दानवों के दमन और संसार की रक्षा के लिए नारायण के अवतार के रूप में स्वीकार किया जाने लगा। उसे अलौकिक शक्तियाँ प्रदान की गईं और उसे चार शस्त्र–तीर, त्रिशूल, गदा और चक्र दिए गए ताकि वह संपूर्ण और निश्चित रूप से अपने दैवीय कर्तव्यों का पालन कर सके। इसके अतिरिक्त, इंद्र ने इस बात को ध्यान में रखकर कि कहीं अनोमतान की मृत्यु के साथ नवस्थापित वंश समाप्त न हो जाए, उन्हें मणिकेसर नाम की एक रानी भेंट की। उनसे अजपाल[3] नामक पुत्र का जन्म हुआ। जब अजपाल परिपक्व हो गया, अनोमतान ने उसे अयुध्या की गद्दी पर प्रतिष्ठापित कर दिया और स्वयं स्वर्ग सिधार गया।

1स्पष्ट रूप से यह नाम महाभारत से लिया गया है। शायद, महाभारत के अप्रत्यक्ष प्रभाव के कारण, अथवा किसी भ्रम वश यह नाम रामायण की कहानी में जोड़ दिया गया है।

[2] अनोमतान स्पष्ट रूप से रघु हैं। लेकिन यह नाम बहुत विचित्र है। तमिल मूल के किसी संदर्भ के बिना यह तमिल भाषा को प्रतिध्वनित करता है। यद्यपि किसी भी निश्चित निष्कर्ष पर पहुँचना बहुत कठिन है तथापि कुछ संकेत देखे जा सकते हैं। सबसे पहले लेखक 'अनोमा' नाम से परिचित कराता है। यदि ऐसा है, तब यह पालि शब्द अनोमा हो सकता है। (सं. अनावामा) जिसका अर्थ है 'महा यशस्वी'। अथवा यदि यह शब्द 'अनोमतान' है तब यह शब्द 'अनो' और 'मैत्री' शब्दों से उत्पन्न हुआ माना जा सकता है, जिसका अर्थ होता है–जिसकी माँ नहीं है। चूंकि बालक बिना माता के पैदा हुआ था, इसे 'अनोमता' कहा गया हो, या 'अनोमतान' जो इसका विकृत रूप है।

[3] वाल्मीकि– अज

अपने पिता की तरह राजा अजपाल ने भी देवताओं और लोगों की इच्छापूर्ति करते हुए, दानवों से संसार की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए सौंपे हुए दायित्व का निर्वाह किया। इसलिए जब अर्द्धदेव ब्रह्म, जो ईस्वर से चमत्कारिक गदा प्राप्त कर अदमनीय हो गया था, को उसने फौरन उस तलवार से पराजित कर दिया जो उसे साधुता का मार्ग न छोड़ने वाले एक दूसरे अर्द्धदेव मालिवग के माध्यम से ईस्वर से प्राप्त हुई थी। बहुत वर्षों तक शानदार शासन करने के बाद अपने पुत्र दसरथ को वंश परंपरा का दायित्व सौंपकर, वह मृत्यु को प्राप्त हो गया।

अध्याय दो

राम और उनके भाईयों का जन्म

अजपाल की मृत्यु के उपरांत, उनके पुत्र दसरथ अयुध्या के सिंहासन पर विराजमान हुए। उनकी तीन रानियां थीं जिनके नाम कौसुरिया, समुद्रजा और कैयाकेशी[1] थे। यद्यपि वे अपने राजसी वैभव तथा दांपत्य प्रेम से सुखी थे तथापि वे हमेशा बहुत दुखी रहते थे क्योंकि किसी भी रानी ने उन्हें एक पुत्र और सिंहासन का उत्तराधिकारी प्रदान नहीं किया था।

अंत में उन्होंने वसिट्ठ[2], स्वामित्र[3], वज्जावग्ग और भारद्वाज नामक चार ऋषियों की सहायता ली। यद्यपि वे ऋषि राजा की किसी भी प्रकार की सहायता करने के लिए तैयार थे, किंतु उन्हें आशंका थी कि उनके पास जो दैवीय शक्ति है, वह नारायण के वंश के लिए ऐसा योग्य पुत्र प्रदान करने में सक्षम नहीं हैं जो संसार को दानवों के पंजों से मुक्त कराने के लिए नियत था। इसके अलावा उस समय दानव संपूर्ण सृष्टि का विनाश कर रहे थे, अतः उनका विनाश करने के लिए अयुध्या के सिंहासन पर एक योग्य राजा की आवश्यकता थी। इसलिए उन्होंने राजा को सलाह दी कि वे शिशु हेतु यज्ञ संपन्न करवाने के लिए महान शक्तिसंपन्न कोलायकोटि नामक ऋषि से सहायता मांगें। चूंकि कोलायकोटि[4], ऋषि सिंगमुनि के पुत्र थे और उनका जन्म हिरण से हुआ था, इसलिए मुख तो उनका हिरण का था जबकि शरीर मनुष्य का। जब वे युवा

---

[1]सं. कौसल्या, सुमित्रा और कैकेयी

[2]वसिष्ठ

[3]विश्वामित्र

[4]'कोलायकोटि' स्पष्ट रूप से 'ऋष्यश्रृंग' हैं। किंतु यहाँ पर सिंगमुनि (ऋष्यश्रृंग का विकृत रूप) पिता दिखाई पड़ते हैं। स्पष्ट रूप से यह पिता विभंडक और पुत्र ऋष्यश्रृंग के बीच किसी भ्रांति के कारणवश ही है।

उन्होंने ऐसी घोर तपस्या की, जिसके कारण रोमाबत्तन[1] देश में, जहाँ वे तपस्या कर रहे थे, सूखा पड़ गया। इसलिए उस देश के राजा ने उन्हें गृहस्थ जीवन के प्रति लुभाने के लिए अपनी पुत्री को भेजा। स्त्री के प्रति सरलता से आकर्षित होने वाले युवा ऋषि ने अपनी तपस्या को त्याग दिया जिसके फलस्वरूप उस देश में बहुत अधिक बारिश हुई और वे महल में राजा के दामाद के रूप में रहने लगे।

अब दसरथ के द्वारा आमंत्रित किए जाने पर वे अयुध्या आए और उन्होंने आवश्यक यज्ञ करने का दायित्व संभाल लिया। किंतु यज्ञ आरंभ करने से पहले उन्होंने ईस्वर से परामर्श करना अच्छा समझा। इसलिए वे उन चार ऋषियों के साथ कैलास पर्वत की ओर चल दिए। इस सच्चाई को ध्यान में रखकर कि उस समय संसार तीनों सर्वोच्च देवताओं के द्वारा दिए गए वरदानों के कारण अपराजेयता की सीमा तक पहुँची दानवों की अमानवीय शक्ति से उत्पीड़ित था। ऋषि कोलायकोटि ने ईस्वर से कहा कि वे नारायण से प्रार्थना करें कि वे दसरथ के पुत्र के रूप में अवतार धारण करें और संसार पर मंडराती हुई आपदाओं से उसे छुटकारा दिलाएं। तदनुसार नारायण से प्रार्थना की गई जिन्होंने इस शर्त पर अवतार धारण करना स्वीकार किया कि उनके साथ ही लक्ष्मी, अनंत नाग, गदा, चक्र और शंख भी अवतार धारण करें [2] जिसे ईस्वर ने तत्काल स्वीकार कर लिया।

ईस्वर ने ऋषियों को लौटने और यज्ञ करने की सलाह दी और कहा कि अग्नि में से एक अर्द्धदेव निकलेगा जिसके सिर पर एक ट्रे होगी जिसमें

---

[1] वाल्मीकि के अनुसार, देश का नाम 'अंगरा' था जबकि शासक राजा का नाम 'रोमापद' था। निस्संदेह राजा का नाम गलती से देश के नाम के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

[2] यहाँ अवतार की विशेषता के वैभिन्न्य को स्पष्ट किया गया है कि यह भारतीय दृष्टि से कैसे अलग है। भारतीय रामायण के अनुसार स्वयं नारायण ने दसरथ के चार पुत्रों के रूप में अवतार धारण किया था।

दिव्य खाद्य–पदार्थ के चार केक होंगे। तभी एक कौआ उस ट्रे पर झपटेगा और एक केक के मात्र आधे टुकड़े को लेकर दक्षिण दिशा की ओर उड़ जाएगा। बाकी बचे हुए केक दसरथ की रानियों में बाँट देना ताकि वे उनके चार पुत्रों को जन्म दे सकें।

ईस्वर की सलाह का अक्षरशः पालन किया गया और प्रत्येक घटना उनके कहे अनुसार घटती गई। नारायण कौसुरिया के पुत्र राम के रूप में अवतरित हुए जो हरे रंग के थे; चक्र कैयाकेशी के पुत्र बरत के रूप में, जो लाल रंग के थे; नाग और शंख दोनों एक साथ समुद्रजा के पुत्र लक्षण[1] के रूप में, जो पीले रंग के थे; जबकि गदा समुद्रजा के ही पुत्र सत्रुद के रूप में, जो बैंगनी रंग के थे। इन चारों में राम सबसे बड़े थे फिर क्रमशः बरत, लक्षण और सत्रुद थे।

---

[1] थाई वर्तनी में 'लक्ष्मण'

अध्याय 3

लंका का सृजन

जब अर्द्धदेवता यज्ञ की अग्नि में से बाहर आए तभी ईस्वर की भविष्यवाणी के अनुरूप एक कौआ वहाँ पहुँच गया। वह एक केक के आधे हिस्से को लेकर दक्षिण दिशा की ओर उड़ गया जो वास्तव में लक्ष्मी की अवतार, सीता की उत्पत्ति के लिए नियत स्थल था।

उस समय दक्षिण दिशा में लंका द्वीप स्थित था जिस पर दानवों का शासन था। जैसाकि पहले से ही नियत था, लंका के राजा दसकंठ द्वारा अपनी महारानी मंडो की संतुष्टि के लिए दिव्य भोजन को चुराने के लिए कौआ भेजा गया था। यह घटना हमें इस बात को स्पष्ट करने के लिए प्रेरित करती है कि दसकंठ लंका का राजा कैसे बना और मंडो उसकी रानी कैसे बनी।

निलाकल पर्वत की चोटी पर कौओं का एक बड़ा घोंसला होने के कारण सबसे पहले लंका का नाम रंगका[1] पड़ा। साहपति ब्रह्मा[2] ने अपने भक्त सहमालिवान[3] के लिए इस द्वीप का सृजन किया, अतएव वह लंका का पहला राजा बना। लेकिन नारायण से भयभीत होने के कारण उसने अपने द्वीप–राज्य को छोड़ दिया और पाताल लोक की ओर भाग गया।

अपनी सृष्टि को अशासित और असुरक्षित पाकर उन्होंने विश्वकर्मा को निलाकल पर्वत पर एक सुंदर नगर–निर्माण का आदेश दिया। इसके पूरे होने

---

[1]ठेठ थाई भाषा से व्युत्पन्न नाम है। दोनों शब्द ही थाई हैं । 'रंग' का अर्थ घोंसला और 'का' का अर्थ कौआ है।

[2]शायद यह शब्द साहमपति ब्रह्म बुद्धवादी अवधारणा से उद्धृत किया गया हो,
[3]सं. माल्यवान

के पश्चात् उन्होंने इसका नाम विजय लंका[1] रखा और अपने भक्तों में से एक दूसरे चतुरवक्त्र को इसका राजा बनाकर सिंहासन पर बैठा दिया और साथ ही रानी मलिका को उसकी पत्नी बना दिया।

चतुरवक्त्र की मृत्यु के बाद उसका पुत्र लैस्टियन सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। वह एक भयानक दुर्जेय राक्षस था, उसकी पाँच रानियाँ थीं जिनके नाम थे–श्रीसुनंदा, कुपेरन की माता; चित्रमाली, देवनासुर की माता; सुवर्णमलाई, अश्धाता की माता; वर प्रभा, मारन की माता; और रजता जो छह पुत्रों और एक पुत्री की माता थी, जिनके नाम दसकंठ, कुंभकर्ण, बिभेक, दूषन, खर, त्रिशिरा और सम्मानखा थे।[2]

उस समय कालनाग पाताल का राजा था। जैसाकि बताया जा चुका है कि लंका का भूतपूर्व राजा सहमालिवान पाताल में शरण ले ले चुका था, पाताल में उसका ठहरना कालनाग को स्वीकार्य नहीं था क्योंकि उसे निरंतर यह भय लगा रहता था कि किसी दिन यह भूतपूर्व राजा उसके शासन के खिलाफ विद्रोह कर उसका राज्य छीन सकता है। इसलिए उचित अवसर पाकर उसने सहमालिवान के विरुद्ध आक्रामक हमला कर दिया। उस समय सहमालिवान के लंका के तत्कालीन राजवंश के साथ अच्छे संबंध थे और वह राजा चतुरवक्त्र को पहले ही श्रद्धांजलि अर्पित कर चुका था। इसलिए उसने लैस्टियन से सहायता मांगी जिसे उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया और शीघ्र ही उसने कालनाग को पराजित कर दिया। लैस्टियन के शस्त्रों के प्राणांतक प्रहार से बचने के लिए और कोई रास्ता न पाकर उसने अपनी पुत्री काल–अग्गी को उसे भेंट कर दिया और अपनी जान बचाकर भाग गया। लैस्टियन ने युवा राजकुमारी को स्वीकार कर उसका विवाह अपने पुत्र दसकंठ के साथ कर दिया।

---

[1] 'विजय' शब्द का एक विशेष प्रकार का अन्तर्वेश, परंपरा के प्रमाणीकरण के साथ यह स्वीकार किया जा सकता है कि बंगाल के एक राजकुमार विजय सिंह ने लंका को सबसे पहले जीता था और उसके नाम पर ही लंका का नाम 'सिंहल' पड़ा।

[2] वाल्मीकि–क्रमशः पुलस्त्य, विभीषन और सूर्पनखा।

जब वह वृद्ध हो गया, उसने अपने राज्य को अपने दस पुत्रों में विभाजित कर दिया ताकि उसकी मृत्यु के उपरांत वे लड़ाई–झगड़ा न करें। उसके इस विभाजन के अनुसार दसकंठ लंका के राजा के रूप में उसका उत्तराधिकारी बना, जबकि कुपेरन कालचक्र का राजा बना दिया गया और उसने पुष्पक विमान को प्राप्त किया। देवनासुर चक्रवाल का शासक बना; अश्धाता बदकान का; मारन सोलाश का; खर रोमागल का; दूषन जनपद में चरिक का और त्रिशिरा मज्जावरी का शासक बना; जबकि सम्मानखा का विवाह राजा जिव्हा से कर दिया गया।

अध्याय 4
दसकंठ का पूर्ववृत्त

अपने सभी भाईयों और सौतेले भाईयों में दसकंठ सबसे अधिक भयानक था। उसके अदमनीय स्वभाव और साहस ने उसकी प्रजा और सैनिकों को अप्रत्यक्ष रूप से एक समान आज्ञाकारी बना दिया था। लेकिन जिस अजेय शक्ति का वह स्वामी था, वह उसने इस जन्म में प्राप्त नहीं की थी, बल्कि वह उसे पूर्वजन्म की कुछ घटनाओं से विरासत में मिली थी, जब वह स्वर्ग का परम सुख भोगा करता था।

कैलास पर्वत पर नंदक नाम के अर्द्धदेवता को उन देवताओं के पैरों को धोने का दायित्व सौंपा गया था जो ईश्वर के प्रति सम्मान व्यक्त करने आते थे। ऐसे निम्न पद पर होने के कारण वह उन देवताओं के निरंतर मनोरंजन का साधन बन गया जो सदा उसके सिर या गालों को थपथपाने अथवा उसके बालों को खींचने में आनंद लेते थे। लेकिन जिन बातों से उपहास करने वाले देवता हँस हँस कर खुश होते थे, वही बातें बेचारे नंदक की आँखों में दुख के आँसुओं का कारण बन गई थीं। साल पर साल बीतते गए, युग पर युग बीतते गए, वह अब भी उनके मनोरंजन और परिहास का केंद्र बना हुआ था। उसके सिर के बाल इतने अधिक कम हो गए कि उसका सिर गंजे के सिर की तरह चिकना दिखाई देने लगा। इस प्रकार का और अधिक अपमान सहने में असमर्थ वह ईस्वर के पास गया और उनसे एक वरदान देने की प्रार्थना की कि वह अपनी अंगुली से जिस किसी की तरफ संकेत करे, उसकी तत्काल मृत्यु हो जाए।

उसकी दीर्घकालीन और निष्ठावान सेवाओं से प्रसन्न होकर ईस्वर ने उसकी प्रार्थना को सहज ही स्वीकार कर लिया। परिणामस्वरूप उसकी अलौकिक शक्ति से अनभिज्ञ देवता जब हमेशा की ही तरह उसके साथ मनोरंजन करने के लिए आए, वैसे ही नंदक के अंगुली उठाते ही वे भीषण मृत्यु को प्राप्त हो गए।

अंत में इंद्र ईस्वर के पास पहुँचे और उनके भक्त की विनाशकारी शक्ति को समाप्त करने हेतु उनसे दया करने के लिए याचना की। इसलिए ईस्वर ने नारायण को नंदक को परास्त करने और देवताओं की रक्षा करने का आदेश दिया। तदनुसार नारायण ने स्वर्गिक अप्सरा का रूप धारण किया और नंदक के साथ दिखावटी प्रेम प्रदर्शित करने लगे। उनके दिखावटी प्रेम ने उसके हृदय में कामवासना की आग इतनी अधिक प्रज्ज्वलित कर दी कि उसने स्वर्गिक अप्सरा से कामसंबंधों के लिए कहा। उस स्वर्गिक युवती ने उसकी कामवासना को इस शर्त पर स्वीकार किया कि पहले वह उसके साथ नृत्य करे। नंदक ने उसके प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार कर लिया और वे दोनों नृत्य करने लगे। नृत्य करते समय अप्सरा ने अपनी अंगुली से अपने पैरों की ओर संकेत किया। अपनी अंगुली की अनर्थकारी शक्ति के भूल जाने पर नंदक ने भी वैसा ही किया। परिणामस्वरूप उसके पैर टूट गए। इस अवसर को चूके बिना नारायण फौरन अपने स्वरूप में आकर नंदक को मारने के लिए तैयार हो गए। अपने आपको उनकी चालबाजी से छला हुआ पाकर उसने वीरता के सारे नियमों के विरुद्ध उनकी उस पौरुषहीन नीति के लिए काफी भला–बुरा कहा। उसकी फटकार के बाद नारायण ने कहा कि आने वाले जन्म में नंदक दस सिर और बीस भुजाओं के साथ जन्म लेगा, फिर भी वे एक सिर और दो हाथ वाले मानव के रूप में उसका वध करेंगे। इसप्रकार नंदक ने अपने पूर्व जन्म में नारायण द्वारा कहे गए वचनों को पूरा करने के लिए दसकंठ के रूप में जन्म लिया।

जब ईस्वर को पता चला कि नंदक ने दसकंठ के रूप में जन्म ले लिया है, तब उन्होंने नारायण की उस समय सहायता करने के लिए कुछ उपाय सोचे, जब लड़ाई में उसे पराजित करने के लिए वे अवतार धारण करेंगे। इसलिए उन्होंने लंका के राजा के विरुद्ध लड़ाई में नारायण के अवतार राम की सहायता करने के उद्देश्य से, वैस्सुज्नन नामक देवता को दसकंठ के भाई के रूप में जन्म लेने का आदेश दिया। वैस्सुज्नन का जन्म बिभेक के रूप में हुआ, उसे अज्ञानता के अंधकार को भेदने वाली आँख के रूप में कार्य करने और भविष्य के गर्भ में छिपे रहस्यों को उजागर करने के लिए एक रहस्यमय शीशा प्रदान किया गया। यही

कारण था कि बिभेक दसकंठ की अत्यंत गुप्त योजनाओं को उजागर करने में सक्षम हो सके और अप्रत्यक्ष रूप से उसकी मृत्यु का कारण बने।

अध्याय 5
दसकंठ का मंडो के साथ विवाह

यद्यपि दसकंठ का विवाह पहले से ही पाताल की राजकुमारी काल–अग्गी के साथ हो चुका था, फिर भी उसके मंडो[1] नाम की एक दूसरी रानी भी थी जिसे ईस्वर ने उसे प्रदान किया था।

मंडो एक साधारण स्त्री नहीं थी। वास्तव में उसका जन्म हिमालय के जंगलों में तप कर रहे किन्हीं चार ऋषियों की चमत्कारिक शक्ति से हुआ था। उन ऋषियों का प्रातः का भोजन दूध होता था जो गायों के एक झुंड द्वारा स्वतः ही शीशे के बरतन में भर दिया जाता था। प्रतिदिन भरपेट दूघ पी लेने के पश्चात वे बचे हुए दूध को निकट में रहने वाले मेंढक को दे दिया करते थे।

अब, उसी समय में पाताल में एक नाग–कन्या रहती थी जो असामान्य रूप से कामुक थी। चूंकि उसकी यौन सुख की इच्छा अपने प्रदेश में असंतुष्ट बनी रहती थी, इसलिए उसने अपना घर छोड़ दिया, एक छेद किया और ऊपरी दुनिया में आ गई। यहाँ पर उसे कोई ऐसा नहीं मिला जिसके साथ वह अपने यौन सुख को संतुष्ट कर पाती। अंत में उसका सामना एक सर्प से हुआ जिसे उसने अपने साथ शारीरिक सुख भोगने के लिए आमंत्रित किया।

चारों ऋषि जब जंगल से अपनी प्रतिदिन की आवश्यकता हेतु फलों को इकट्ठा करके लौट रहे थे, तब उन्होंने नाग कन्या को आपत्तिजनक अवस्था में देखा। उन्होंने उसके कामातुर मन में आदर जगाने के लिए उसकी पूँछ पर चोट की। इसप्रकार देखे जाने से लज्जित होकर और चार साधुओं द्वारा चोट पहुँचाए जाने के कारण वह नाग कन्या उन ऋषियों से बदला लेने की भावना

---

[1]वाल्मीकि– मंदोदरी। किंतु थाई भाषा में तालव्य ध्वनि के स्थान पर गल्टरल d के रूप में उच्चरित होता है, इसलिए इस शब्द का अर्थ 'मेंढक' होता है और तदनुसार मंदोदरी की उत्पत्ति एक मेंढक के कारण हुई बताई गई है।

को मन में पाले हुए तुरंत अपने प्रदेश में नीचे चली गई। फिर एक उपयुक्त अवसर पाकर वह दोबारा उस संसार में आई और दूध वाले शीशे के बरतन में जहर उगल दिया।

लेकिन वह मेंढक उसके द्वारा प्रतिशोध में की जाने वाली हत्या के इन निर्दयी प्रयासों का दृष्टा था। चारों ऋषियों के प्रति कृतज्ञ उस जीव ने घातक खतरे से उन्हें सावधान करने के उद्देश्य से जहर के बरतन में छलांग लगा दी और मौत को गले लगा लिया।

हमेशा की तरह चारों ऋषि सुबह का दूध पीने आए और उसकी सतह पर मरे हुए मेंढक को देखा। भूलवश उन्होंने उसे एक लालची जीव समझा, फिर भी तरस खाकर उन्होंने मंत्रोच्चारण से उसे पुनर्जीवित कर दिया। लालच के लिए अनुचित ढंग से फटकारे जाने पर उसने उनके सामने सच्चाई प्रगट कर दी। वे बहुत खुश हुए और उसके कृतज्ञतापूर्ण उपकार को चुकाने के लिए, जिसके कारण वे उसके ऋणी हो गए थे, उन्होंने उस बदसूरत मेंढक को सभी कन्याओं में सबसे सुंदर युवती के रूप में बदल दिया, उसे मंडो नाम दिया और उसे ईस्वर को समर्पित कर दिया जिन्होंने आगे उसे एक दासी के रूप में उमा को सौंप दिया।

अब, कैलास पर्वत पर एक दुर्घटना घटी। दिशाओं का अधिष्ठाता देवता विरुलहक ईस्वर के प्रति श्रद्धा व्यक्त करने के लिए कैलास पर्वत पर यह सोचते हुए चढ़ रहा था कि ईस्वर उस समय शिखर पर सभी देवताओं का स्वागत कर रहे होंगे, इसलिए वह अपनी सच्ची भक्ति को दर्शाते हुए प्रत्येक कदम पर दण्डवत करते हुए चलने लगा।

संयोगवश, ऐसा हुआ कि उस समय ईस्वर वहाँ नहीं थे। इसलिए श्रद्धा भाव को व्यर्थ में व्यक्त करते देख सराभू नाम की छिपकली ने हँसकर उसकी खिल्ली उड़ाई। विरुलहक ने ऊपर देखा, निस्संदेह उसने ईस्वर को वहाँ नहीं देखा किंतु उसकी नजर सराभू पर पड़ी। उसे एकदम भीषण क्रोध आ गया। उसने उस सांप को जिसे वह अलंकारयुक्त कपड़े की तरह कंधे पर लटकाए रहता था, उतारा और उस पर फेंक दिया। इससे सराभू की मौत हो

गई। किंतु उसने जिस शक्ति का प्रयोग कर उसे फेंका था, उसने पर्वत के एक हिस्से को नीचे झुका दिया।

जब ईस्वर ने पर्वत को एक तरफ झुका पाया तो उन्होंने घोषणा की कि जो कोई भी इसे पूर्ववत् स्थिति में लाने में सफल होगा, उसे उसका मनचाहा पुरस्कार दिया जाएगा। देवताओं ने भरसक प्रयत्न किए किंतु कैलास स्थिर रहा।

तब ईस्वर ने दसकंठ को बुलवाया, जिसने उसे उठाने के लिए अपने आप कहा। उसने ब्रह्मा के समान अपने शरीर का विस्तार किया और अपनी संपूर्ण शक्ति उसे पूर्ववत् स्थिति[1] में लाने के लिए लगा दी। उसका प्रयास सफल रहा। पुरस्कार के रूप में वह उमा को पाना चाहता था। चूंकि ईस्वर अपने वचन को नहीं तोड़ सकते थे, इसलिए उमा उसे दे दी गई। दसकंठ ने उमा को ग्रहण किया। लेकिन उसने उनके शरीर को अत्यधिक गरम पाया। फिर भी उसने उन्हें अपने सिर पर उठाया और लंका के लिए चल पड़ा।

देवता ईस्वर की प्रतिज्ञा के अमंगलकारी परिणामों के प्रति सचेत होकर उमा को उन्हें वापस दिलाने का उपाय खोजने लगे। इसलिए नारायण ने अपने आप को एक बूढ़े माली के रूप में परिवर्तित कर लिया। फिर वह एक वृक्ष की जड़ को ऊपर करके वृक्षारोपण का अभिनय करने लगे। जब दसकंठ ने यह देखा तो उसने उसे उसकी मूर्खतापूर्ण कार्यविधि के लिए डाँटा। लेकिन बूढ़े व्यक्ति ने उसे मुँह तोड़ जबाब दिया कि वह तो उससे भी ज्यादा मूर्ख है क्योंकि वह तो एक ऐसी अशुभ औरत को ले जा रहा है जिसका शरीर भीषण रूप से इतना गरम है कि वह उसके सारे वंश को जलाकर समाप्त कर

---

[1]बंगाली रामायण में एक दंत कथा है जिसके अनुसार यह रावण ही था जिसने कैलास पर्वत को उठाया था जब भगवान शिव ने उसे अपने अंगूठे से दबाकर नीचे कर दिया था। अपनी इस अलौकिक शक्ति के कारण उसे कुछ वरदान देकर पुरस्कृत किया गया था।

देगा। उसे, इससे अच्छी मंडो नाम की स्त्री को पसंद करना चाहिए। इसलिए दसकंठ ने उमा को ईस्वर को लौटा दिया और उसके स्थान पर मंडो को ले लिया।

लंका वापस जाते समय रास्ते में उसे खिडकिन[1] के राजा, बाली के महल के ऊपर से गुजरना पड़ा। बाली मंडो के सौंदर्य पर मुग्ध हो गया। दसकंठ के द्वारा उसके महल के ऊपर से गुजरने के बहाने उसने उसे लड़ने की चुनौती दी। विजय बाली के पक्ष में हुई और मंडो विजेता की पत्नी हो गई।

पराजित और अपमानित हो दसकंठ लंका वापस आ गया। अंत में उसके आचार्य अंगद की मध्यस्थता से मंडो उसे वापस लौटा दी गई।

रानी मंडो

दसकंठ

[1] सं– किष्किन्धा

अध्याय 6

बाली और सुग्रीव का उद्‌भव

दसकंठ का बाली से अपनी हार स्वीकार करने का कारण उसकी दिव्य उत्पत्ति थी जिसके कुछ स्पष्टीकरण की आवश्यकता है।

साकेत के राजा गोतम[1] निस्संतान थे। इसलिए उनका विशाल राज्य भी उन्हें खुशी और संतोष नहीं दे पाया। अंत में उन्होंने अपना राज्य सिंहासन त्याग दिया और सन्यास का आश्रय लिया। दो हजार वर्ष के लंबे समय तक वे ध्यान में लीन रहे। उनकी दाढ़ी इतनी लंबी हो गई कि वह उनकी गोद को छूने लगी और दो बुनकर पक्षियों ने इसकी ओट में अपना घोंसला बना लिया। एक दिन मादा पक्षी ने कुछ अंडे दिए। नरपक्षी ने अपनी पत्नी से अंडे सेने के लिए कहा जबकि वह स्वयं हिमवान पर स्थित एक झील पर खाने की तलाश में चला गया। झील खिले हुए कमलों से भरी हुई थी। उस सौंदर्य ने उसे मुग्ध कर लिया और वह उड़ते हुए नीचे एक पूर्ण खिले हुए कमल पर जा बैठा। जिस फूल पर वह बैठा था, उसके चारों ओर पर्याप्त मात्रा में भोजन पाकर और नए स्थान के अनूठेपन को देखकर वह बिल्कुल भूल गया कि शाम होने वाली है। इसलिए जब सूर्यास्त हुआ और कमल ने अपनी पंखुड़ियाँ बंद कर लीं तो वह सारी रात उसके बीजकोश में बंदी बना रहा।

अगली सुबह जब वह घर पहुँचा, उसके शरीर में से अब भी कमल की खुशबु आ रही थी। मादा पक्षी ने उस खुशबु का अनुभव किया। उसने स्त्री विचार से इसे किसी दूसरे बुनकर पक्षी की खुशबु मान लिया जिसके साथ संभवतः उसके पति ने पिछली रात बिताई थी। इसलिए उसने अपने पति को विश्वासघात करने के लिए भला–बुरा कहा। नर पक्षी ने उसके दोषारोपण का

---

[1]'गोतम' स्पष्ट रूप से अहल्या के पति 'गौतम' हैं। यहाँ पर उनको राजा के रूप में प्रस्तुत किया गया है। यहाँ पर 'साकेत' के प्रयोग में विचारों में भ्रांति दिखाई देती है। वास्तव में 'साकेत' अयोध्या का ही दूसरा नाम है, कोई दूसरा देश नहीं।

खंडन किया और दृढ़तापूर्वक कहा कि यदि वह विश्वासघात का अपराधी हो तो तपस्वी के सारे पाप उसे लग जाएं।

इस बात से गोतम को बड़ा झटका लगा क्योंकि वह अपने को सदा निष्पापी समझता था। इसलिए उसने बुनकर पक्षी से उसके आरोप का कारण पूछा और उसे मालूम हुआ कि निस्संतान होने में ही उसका पाप निहित है।

अतः उसने यज्ञ किया और उस यज्ञ की अग्नि से काल–अचना नामक एक सुंदर युवती निकली। गोतम ने उसे अपनी पत्नी बना लिया। समय आने पर उसने एक कन्या को जन्म दिया। पिता ने उसका नाम स्वाहा रखा।

अब इंद्र और दूसरे देवता चिंतन कर रहे थे कि वे अपनी शक्ति और सामर्थ्य को कैसे विभाजित करें और दसकंठ के विरुद्ध लड़ाई में राम की सहायता के लिए सैनिकों की उत्पत्ति कैसे करें। अंत में उन्होंने काल–अचना के बारे में सोचा। इसलिए इंद्र नीचे आए और उनकी अलौकिक शक्ति से काल–अचना ने गर्भ धारण किया। समय आने पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम काकशबिरि रख दिया। कुछ समय बाद आदित्य नीचे आए और उनके द्वारा उसने सुग्रीव नामक दूसरे पुत्र को जन्म दिया। उनके जन्मदाताओं से अनभिज्ञ गोतम ने उन्हें अपना ही पुत्र समझा। किंतु स्वाहा अपनी माता के निष्ठाहीन व्यवहार की प्रत्यक्ष साक्षी थी।

जब एक दिन गोतम सुग्रीव को अपनी गोद में उठाए, काकश को अपने कंधे पर बिठाए और स्वाहा का हाथ पकड़ कर नहाने जा रहे थे, पिता के पुत्रविषयक प्रेम ने उसे बहुत दुख पहुँचाया। वह यह कहने से अपने को नहीं रोक पाई कि वह अपनी संतान को तो पैदल ले जा रहे हैं और दूसरों की संतान के प्रति अधिक दयालु हो रहे हैं। इस पर गोतम स्तब्ध रह गए। इसलिए उन्होंने अपनी पुत्री से इस आक्षेप को लगाने का कारण पूछा जिसे उसने तुरंत बता दिया।

परंतु गोतम अपनी प्रिय पत्नी के इस प्रकार के निष्ठाहीन व्यवहार की बात पर विश्वास करने के लिए तैयार नहीं थे। इसलिए वे सभी बच्चों को नदी किनारे ले गए और इस प्रार्थना के साथ उनको पानी में फेंक दिया कि उनका

अपना बच्चा तो तैरकर उनके पास आ जाए और दूसरों के बच्चे बंदर के रूप में बदल जाएं और जंगल में चले जाएं। उनकी प्रार्थना सत्य सिद्ध हुई और तदनुसार काकश और सुग्रीव, जो अब बंदर बन चुके थे, ने पास के ही वन में आश्रय ले लिया। गोतम घर आए और अपनी निष्ठाहीन पत्नी को शाप दिया कि वह एक पत्थर के रूप में बदल जाए ताकि जब नारायण दानवों के विनाश के लिए अवतार धारण करें तो पत्थर के रूप में उसका प्रयोग पुल बनाने के लिए हो और इसप्रकार वह सदा के लिए समुद्र में डूबी रहे।

काल–अचना[1] को अपनी पुत्री पर बहुत क्रोध आया क्योंकि उसने उसके रहस्य का उद्‌घाटन कर दिया था। इसलिए उसने उसे शाप दिया कि वह एक हाथ से टहनी को पकड़ कर एक पैर पर खड़ी रहे और केवल हवा से अपना भरण–पोषण करे। परंतु उसे उस शाप से केवल तभी मुक्ति मिलेगी, जब वह एक शक्तिशाली वानर बच्चे को जन्म देगी।

इंद्र और आदित्य ने जब अपने बच्चों की दुर्दशा देखी, उन्होंने उनके लिए एक नगर का निर्माण किया और उसका नाम खिडकिन रखा। तब उन्होंने मंत्रों की शक्ति से संसार के सभी वानरों को आने और सबसे बड़े वानर काकश के राजाधिकार में उस नगर में बसने के लिए कहा। इसप्रकार काकश सभी वानरों का राजा बन गया।

तब एक घटना घटी जिसने काकश और सुग्रीव को बहुत विशिष्टता प्रदान की। स्वर्ग में वसंत ऋतु थी। सभी देवता उस मनोहर ऋतु को बड़े ही हर्षोल्लास से मना रहे थे। समुद्र की देवी, मणिमेखला भी उस समारोह में भाग लेने के लिए आ रही थी। उस समय उस देवी के पास एक रहस्यमय मणि थी

---

[1]काल–अचना स्पष्ट रूप से अहल्या ही है। लेकिन यह कहानी मूल वाल्मीकि की कहानी से अलग हो जाती है, जिसके अनुसार यह इसप्रकार है–ब्रह्मा के आँसुओं से वानर का जन्म हुआ। एक बार जंगल में घूमते हुए वह अकस्मात एक शापित झील में नहा लिया। जब वह इससे बाहर आया तो वह एक सुंदर युवती के स्वरूप में बदल चुका था। इंद्र और आदित्य इसके सौंदर्य पर मोहित हो गए। परिणामस्वरूप दो बच्चों का जन्म हो गया। एक उसके बालों से जन्मा, जो बाली कहलाया और दूसरा उसकी गरदन से जन्मा, इसलिए सुग्रीव कहलाया। सुबह होने पर वानर अपने असली स्वरूप में आ गया। तब उसे बह्मा के द्वारा किष्किन्धा का राजा प्रतिष्ठापित किया गया।

जिसकी ख्याति दूर–दूर तक फैली हुई थी। अतुलनीय शक्ति वाला राक्षस रामासुर भी स्वर्ग को जाने वाले रास्ते में ही था जब उसने मणिमेखला को उस मणि से खेलते हुए देखा। उसको अपने अधिकार में करने की इच्छा से वह देवी का पीछा करने लगा। चूंकि रामासुर[1] अपनी अपराजेय वीरता के लिए विख्यात था, इसलिए उसके द्वारा मणिमेखला का पीछा किए जाने पर सभी देवी–देवताओं का हृदय भय से भर गया और वे बिना देरी किए अपने घरों को भाग गए। लेकिन इतने विशालकाय राक्षस के द्वारा अपना पीछा किए जाने से मणिमेखला को एक अनूठा आनंद मिल रहा था। इसलिए वह मणि दिखाकर उसे तरसाने लगी। रामासुर चाहे जितनी भी तेजी से दौड़ लेता, वह उसको नहीं पकड़ सकता था। लगातार तरसाने वाली, पर अपने आप को कभी भी उसके अधिक पास न होने देने वाली मणिमेखला अब तक उसकी पहुँच से बाहर थी। अंत में वह बहुत क्रुद्ध हो गया और अपनी कुल्हाड़ी फेंककर उसे मारने का प्रयास किया। लेकिन कुल्हाड़ी से देवी को कोई नुकसान नहीं पहुँचा। इसने केवल उसके क्रोध को अधिक बढ़ाने में सहायता की जो अब अपनी सीमा लाँघ चुका था।

ठीक उसी समय अत्यधिक शक्ति वाला अर्जुन[2] नाम का कोई देवता रामासुर के रास्ते में आ गया। अतः अब उसके क्रोध को एक नया लक्ष्य मिल गया। उसने अभागे देवता को पकड़ लिया और उसे सुमेरु पर्वत पर दे मारा। इतने प्रचंड आवेग को सहने में असमर्थ पर्वत एक ओर झुक गया। इससे खुश होकर कि उसका क्रोध संतुष्ट हो चुका है, रामासुर अपने निवास को वापस लौट गया। जब ईस्वर ने सुमेरु पर्वत को झुकी हुई स्थिति में देखा, उन्होंने

---

[1] रामासुर स्पष्ट रूप से परशुराम हैं। लेकिन यहाँ उन्हें राक्षस कहा गया है, जो कि भारतीय अवधारणा से बिल्कुल अलग व्याख्या है क्योंकि इसमें उन्हें नारायण के एक अवतार के रूप में माना गया है। यह रामासुर उस रामासुर से बिल्कुल ही अलग है जिसने राम का सामना किया था। इस पर ध्यान देना आवश्यक होगा कि परशुराम की विभिन्न गतिविधियों के आधार पर एक जैसा 'रामासुर' नाम रखकर अलग–अलग व्यक्तित्व की संरचना की है।

[2] अर्जुन निस्संदेह कर्तवीर्जार्जुन है जो कोई भगवान नहीं था बल्कि एक राजा था।

तीनों लोकों के सभी प्राणियों को उसे उठाने के लिए बुलाया। उन्होंने पर्वत को सर्प से लपेटा और उसे ऊपर उठाने लगे। किंतु उन सभी के प्रयास निष्फल रहे। सुमेरु पर्वत वैसा ही झुका रहा, जैसा पहले था। अंत में सुग्रीव ने स्वेच्छा से अपनी सेवाएं अर्पित कीं। उसने सर्प के मध्य भाग को दबाया। स्पर्श के प्रति अति संवेदनशील होने के कारण उसने अपने शरीर से पर्वत को चारों ओर से जकड़ लिया। उसी समय काकश ने अपना कंधा सुमेरु पर्वत के साथ लगाया और उसे सीधा खड़ा कर दिया।

बुद्धि और शक्ति के अद्‌भुत प्रदर्शन से प्रसन्न होकर ईस्वर ने दोनों भाईयों को पुरस्कृत किया। काकश को त्रिशूल मिला जिसकी सहायता से वह किसी के विरुद्ध लड़ सकता था और उसे 'बाली',[1] बलवान की उपाधि मिली। जबकि उस समय अनुपस्थित सुग्रीव के लिए उन्होंने तारा नाम की एक किशोरी को उसके भाई की देखरेख में भेज दिया। उसे एक पात्र में रख दिया गया। नारायण ने ईस्वर के इस निर्णय पर यह कहते हुए अप्रसन्नता जताई कि एक युवक के साथ एक किशोरी को भेजना वैसा ही है जैसा मधुमक्खी के सामने फूल रखना। किंतु बाली ने उन्हें आश्वस्त किया कि यदि वह अपने वादे से मुकरेगा तो राम के वाणों से मृत्यु का आलिंगन करेगा। बाली घर पर आया और तारा के सौंदर्य को निहारा। उसने उसे इतना अधिक वशीभूत कर लिया कि वह अपने वादे को भूल गया और उसे अपनी पत्नी बना लिया।

बाली

[1] मूल रामायण से भिन्न व्याख्या, जहाँ इसका अर्थ है, 'बालों से उत्पन्न', बाली अपनी माता के बालों से उत्पन्न हुआ था।

अध्याय 7

हनुमान का जन्म, उनकी बाली से भेंट

जब बाली खिडकिन के सिंहासन पर स्थायी रूप से प्रतिष्ठापित कर दिया गया, तब उसका परिचय हनुमान नामक एक बहुत शक्तिशाली वानर से करवाया गया। वास्तव में वह बाली की सौतेली बहन स्वाहा का पुत्र होने के कारण उसका भानजा था।

यह बताया जा चुका है कि स्वाहा को अपनी माँ काल–अचना के द्वारा शाप दिया गया था कि वह तब तक एक पैर पर खड़ी रहेगी जब तक वह एक वानर बच्चे को जन्म नहीं दे देती। संयोग से ईस्वर की दृष्टि उसकी दुर्दशा पर पड़ी और उन्हें उस पर दया आ गई। इसके अतिरिक्त, उसमें उन्हें राक्षसों के विरुद्ध लड़ाई में राम की सहायता करने की संभावना दिखाई दी। इसलिए उन्होंने अपनी शक्ति और साथ ही अपने सभी दिव्यास्त्रों की शक्तियों को विभाजित कर दिया और वायु से उन शक्तियों को लेकर स्वाहा के मुख में रख देने के लिए कहा ताकि उसके एक ऐसा पुत्र हो जिसका शरीर सभी अस्त्रों के समुच्चयन से बना हो। गदा उसकी मेरुदंड होगी ताकि वह आसमान में विचरण कर सके। त्रिशूल उसका शरीर, हाथ और पैर होने के साथ–साथ उसका विशेष अस्त्र होगा जो उसके वक्षस्थल से सदा चिपका रहेगा ताकि वह जब चाहे उसे बाहर निकाल सके। चक्र उसका सिर होगा, जबकि वायु को उसका पिता होने का आदेश दिया गया।

तदनुसार वायु ने ईस्वर की आज्ञा का पालन किया और तत्क्षण ही स्वाहा[1] ने गर्भधारण कर लिया। तीस महीने के लंबे अंतराल के बाद उसने

---

[1]स्वाहा निस्संदेह वाल्मीकि की अंजना हैं, यद्यपि उसकी व्याख्या मूल से बिल्कुल अलग है, जहाँ पर वह केसरी की पत्नी और कुंजर की पुत्री के रूप में जानी जाती है और वह स्वयं पुंजिकस्थली नामक एक स्वर्गिक परी थी जिसे वानर के रूप में जन्म लेने के लिए शाप दिया गया था।

सोलह साल के लड़के के समान बड़े, एक सुंदर सफेद वानर बच्चे को जन्म दिया। सामान्य मार्ग के स्थान पर वह अपनी माँ के मुख से बाहर आया। उसके पिता वायु ने उसका नाम हनुमान रखा। उसकी माता ने उसे बताया कि उसके शरीर पर कुछ विशेष चिन्ह हैं जैसे दोनों कानों में कुंडल, दो चमकीले तीक्ष्ण दाँत (श्वदंत) और एक सफेद घुंघराला बाल। लेकिन वे नारायण के अतिरिक्त अन्य सभी के लिए अदृश्य रहेंगे। इसलिए जो कोई भी उनको देख पाने में सक्षम होगा, वह अवश्य ही उनका अवतार होगा जिनकी सेवा हनुमान को ईमानदारी और निष्ठावान सिपाही की तरह करनी होगी। इस बच्चे को जन्म देने के बाद स्वाहा को शापित जीवन से छुटकारा मिल गया।

अब, एक दिन बालक हनुमान अपनी वानरीय शरारतें करते हुए बगीचे में खेल रहा था। संयोग से बगीचा देवी उमा का था। उन्हें जब यह पता चला कि उनका प्रिय बगीचा हनुमान की अपराजेय शक्ति से नष्ट किया जा चुका है, उन्होंने उसे तुरंत शाप दे दिया कि उसकी शक्ति कम होकर आधी रह जाएगी। लेकिन परेशान हनुमान द्वारा अनुनय–विनय करने पर अंततोगत्वा उन्होंने उसे एक वरदान देने की कृपा की कि वह अपनी मौलिक शक्ति को पुनः प्राप्त कर लेगा जब नारायण राम के अवतार के रूप में उसके शरीर का सिर से पांव तक स्पर्श करेंगे।

कुछ दिनों के बाद उसके पिता वायु उससे मिलने आए। वे अपने पुत्र को ईस्वर के पास ले गए जिन्होंने उसे सिखाया कि कैसे रूप बदला जाता है और कैसे अदृश्य हुआ जाता है। वानर को कृपा करके अमरत्व का वरदान भी दे दिया गया। चूंकि हनुमान बाली और सुग्रीव के भानजे थे, इसलिए ईस्वर ने उन्हें कैलास पर्वत पर आने के लिए कहलवाया ताकि वे उनका परिचय उनके मामाओं से करवा सकें।

इसके अतिरिक्त, उनकी त्वचा की सूखी पपड़ी से ईस्वर ने बाली के लिए जम्बुबान[1] नामक वानर का सृजन किया जो औषध में निपुण हुआ। जब

---

[1]मूल रामायण के अनुसार जम्बुबान ब्रह्मा के पुत्र थे।

बाली और सुग्रीव ईस्वर से मिलने आए, तब उन्होंने नवसृजित वानर को पोष्य बालक के रूप में बाली को दे दिया। अतः हनुमान और जम्बुबान दोनों भाईयों के साथ उनके देश खिडकिन चले गए।

हनुमान

अध्याय 8

अंगद का जन्म

उस समय जब मंडो दसकंठ को वापस दी गई थी, वह गर्भवती थी। इसलिए महल छोड़ने से पहले बाली के अनुरोध पर अंगद ने उसके गर्भाशय से भ्रूण बाहर निकाल कर बकरी के गर्भाशय में रख दिया। जब प्रसव का समय आया, तो उसने बच्चे को बकरी के गर्भ से बाहर निकाला और उसे अपना नाम 'अंगद' दे दिया और उसे उसके पिता बाली को वापस कर दिया।

जब वह बालक दस वर्ष की उम्र का हुआ, उसे धार्मिक संस्कार हेतु नदी में स्नान के लिए ले जाया गया। अब, एक वानर के साथ मंडो के कलंक को निरंतर उस बच्चे में पाकर दसकंठ ने उसे मारने का मन बना लिया। इसलिए उसने अपने को एक विशाल केकड़े के रूप में परिवर्तित कर लिया और पानी में छिपा रहा। लेकिन वह वानर सेना की चौकसी निगाहों से नहीं बच सका। परंतु भरसक प्रयास करने पर भी वे उसे पकडने में असफल रहे। इसलिए बाली को सूचित किया गया। वानरराज को देखकर लंका का राजा अपने स्वरूप में आ गया। तत्काल उनके बीच एक भयंकर युद्ध छिड़ गया। अंत में दसकंठ को बंदी बना लिया गया और उसे वानर समूह के लिए हँसी का पात्र बना दिया गया। सात दिनों तक बेचारा राजा तिरस्कार और अपमान का घृणित केंद्र बना रहा। अंत में निराश और अपमानित कर उसे छोड़ दिया गया।

अंगद बाली का पुत्र

अध्याय 9

दसकंठ का अमरत्व

इसप्रकार बाली द्वारा दूसरी बार प्राणघातक अपमान करने और शर्मिंदगी से हराने पर, दसकंठ ने फिर अपने आचार्यों से सलाह ली। अंगद ने अपने प्रिय शिष्य को यज्ञ का आयोजन करने की सलाह दी जिसके द्वारा वह अपनी आत्मा को अपने शरीर से बाहर निकाल कर उसे किसी दूसरी जगह रखने की चमत्कारिक शक्ति प्राप्त कर सकेगा जिससे कोई भी अस्त्र उसे मार नहीं सकेगा चाहे वह उसके शरीर को घायल कर दे। दसकंठ ने उनके निर्देशों का पालन किया। उसका यज्ञ सफल हुआ। अब उसके द्वारा प्राप्त चमत्कारिक शक्ति अमरता के निकटतम थी। अतः उसने उसकी राक्षसी निरंकुशता को और भड़का दिया, जो अब सभी लोकों में एकाएक हिंसक तरीके से फैलने लगी।

सबसे पहले पुष्पक विमान को पाने के लिए उसने अपने भाई कुपेरन पर आक्रमण किया। दसकंठ की शक्ति का सामना करने में असमर्थ वह पुष्पक को वहीं छोड़कर आकाश मार्ग से ईस्वर के पास भाग गया। क्रोधावेश में ईस्वर ने एक हाथी दाँत दसकंठ के वक्षस्थल पर फेंका। अपंग हुआ वह लंका वापस चला गया और विश्वकर्मा से हाथी दाँत को बाहर निकालने के लिए सहायता मांगी।

स्वास्थ्य लाभ के बाद उसने स्वयं को नर मछली के रूप में बदल लिया और मादा मछली से प्रणय निवेदन किया। परिणामस्वरूप एक मत्स्य कन्या का जन्म हुआ जिसका नाम सुवर्णमच्छा रखा गया। बाद में उसने एक हाथी का स्वरूप धारण किया और एक हथिनी के साथ सहवास किया। उसकी हथिनी पत्नी ने उसे दो बच्चे दिए। उनके शरीर राक्षसी थे और सिर हाथी के। एक का नाम किरिधर और दूसरे का नाम किरिवन रखा गया।

अध्याय 10

सीता का जन्म

बिभेक
दसकंठ का भाई

जनक

यद्यपि दसकंठ की कई उपपत्नियाँ थीं, किंतु रानी मंडो उसके दिल की रानी बन गई थी। अपनी रानी की इच्छा को पूरा करने के लिए दसकंठ खुशी से अपनी जान भी दे सकता था।

अब दशरथ द्वारा यज्ञ किए जाने पर अग्नि में से निकले दिव्य भोजन की सुगंध दूर–दूर लंका तक फैल गई। इसने रानी की लोलुपता को इस हद तक भड़का दिया कि उसने दसकंठ से इस भोज्य के लिए प्रार्थना की। वह मंडो के अनुरोध को अस्वीकृत न कर सका क्योंकि वह उसे दिल से बहुत प्रिय थी।

इसलिए उसने काकना नामक राक्षसी को कौए का रूप धारण करने और भोजन चुराने की आज्ञा दी। वह केक के मात्र आधे टुकड़े को ही चुराने में सफल हो पाई जो उसने लाकर मंडो को दे दिया।

इसके कारण रानी ने गर्भ धारण कर लिया। एक कन्या का जन्म हुआ जो वास्तव में लक्ष्मी का अवतार थी। जैसे ही कन्या ने आँखें खोलीं, वह चिल्ला पड़ी, 'रावण को मार डालो, रावण को मार डालो।' लेकिन उसकी आवाज उसके माता–पिता को सुनाई नहीं दी।

उसके जन्म के बाद बिभेक सहित ज्योतिषियों को आमंत्रित किया गया और उनसे सलाह ली गई। उन्होंने भविष्यवाणी की कि कन्या की नियति में दसकंठ के संपूर्ण वंश का विनाश निर्धारित है। इतनी डरावनी भविष्यवाणी से घबराकर दसकंठ ने अपने भाई बिभेक को आदेश दिया कि इस कन्या के साथ जैसा वह उचित समझे, व्यवहार करे। बिभेक ने उसको एक पात्र में रख दिया और एक राक्षस को उसे नदी में फैंकने का आदेश दिया।

अब लक्ष्मी के दिव्य प्रभाव के कारण नदी की सतह पर एक कमल उग आया जिसने पात्र को ग्रहण कर लिया। समुद्र की अधिष्ठात्री देवी मणि मेखला ने दूसरे सभी देवी–देवताओं के साथ मिलकर उस कन्या की रक्षा की, जबकि लक्ष्मी के दिव्य प्रभाव से वह पात्र संयोगवश राजा जनक नामक एक ऋषि के स्नान स्थल पर पहुँच गया।

जनक मिथिला के राजा थे। राजसी वैभव से ऊब कर उन्होंने संसार को त्याग दिया था और नदी के किनारे वे एक तपस्वी जीवन जीने लगे थे। एक दिन जब वे रोजाना की तरह स्नान करने आए, उन्होंने स्नान स्थल के सामने एक तैरते हुए पात्र को देखा। जिज्ञासु राजा ने उसका ढक्कन खोला और मंडो के नवजात शिशु को उसमें पाया। उसे तत्काल पिलाने के लिए दूध न पाकर उन्होंने प्रार्थना की कि उनकी अंगुली के अग्रभाग से दूध निकल आए और कन्या को भूखे मरने से बचा ले।

वे न तो अपने राज्य वापस लौटना चाहते थे और न ही बच्चे के कारण अपना तापसी जीवन खतरे में डालना चाहते थे। इसलिए वे बच्चे सहित पात्र को

जंगल में ले गए। वहाँ उन्होंने पेड़ के नीचे एक गड्ढा खोदा और प्रार्थना की कि यदि इस कन्या की नियति में राजा के अवतार के रूप में नारायण की पत्नी होना तय है तो पात्र को ग्रहण करने के लिए इस गड्ढे में एक कमल खिल जाए और वास्तव में उनकी प्रार्थना से गड्ढे में एक कमल खिल गया। जनक ने सहायता के लिए देवताओं का आह्वान किया, पात्र को उसकी पंखुडियों में रख गड्ढे को मिट्टी से ढक दिया और देवताओं के संरक्षण और सुरक्षा में बच्चे को छोड़ दिया।

अब तक जनक को पात्र मिले हुए सोलह साल बीत चुके थे। इतने लंबे समय तक जनक की कोई आध्यात्मिक उन्नति नहीं हुई। अतः तापसी जीवन का आगे निर्वाह करने में असमर्थ उन्होंने अपने राज्य वापस लौटने का निर्णय किया। लेकिन पात्र में रखे बच्चे के प्रति प्रेम ने उन्हें उसके बिना वापस न जाने दिया। इसलिए उन्होंने अपने सेवक सोमा को पात्र को खोद निकालने का आदेश दिया। किंतु उन्हें आश्चर्य हुआ कि पात्र को पुनः प्राप्त करने के उसके सारे प्रयास निष्फल हो गए। परेशान और अचम्भित राजा जनक ने अपने एक सेवक को, खोदने और जोतने के औजारों सहित सैनिकों की एक टुकड़ी को लाने के लिए, मिथिला भेजा।

उनके सारे प्रयत्नों के बावजूद पात्र अब भी उनकी पहुँच के बाहर था। अंत में राजा जनक ने स्वयं अपने हाथ में हल उठाया और उसे खोजना शुरू कर दिया। सभी उपस्थित लोगों को उस समय आश्चर्य हुआ जब पात्र तुरंत दृष्टिगोचर हो गया और पात्र के मध्य में कमल की पंखुड़ियों पर, अपने सौंदर्य की कांति से सभी की आँखों को चौंधियाती हुई, अत्यंत सुंदर युवती बैठी थी। चूंकि कन्या हल की क्यारी से निकली थी, अतः उसे सीता नाम दिया गया।

जनक अपनी पोष्य पुत्री सीता और सेवकों के साथ राजधानी लौट आए। कुछ ही समय में सीता निस्संतान रानी रत्नामणि की आँखों का तारा हो गई और राज्य में दूर–दूर तक सभी की प्रिय हो गई।

अध्याय 11

राम का काकनासुर से सामना

जहाँ तक राम और उनके भाईयों का संबंध है, जब वे यथेष्ट आयु के हुए, उन्हें शिष्य के रूप में ऋषि वसिट्ठ और ऋषि स्वामित्र को सौंप दिया गया। कुछ ही समय में वे ज्ञान के सभी क्षेत्रों में दक्ष हो गए। अपने शिष्यों की प्रगति से संतुष्ट हो, गौरवान्वित आचार्यों ने एक यज्ञ का आयोजन किया ताकि वे उन बाणों को प्राप्त कर सकें जो इतने शक्तिशाली हों कि राक्षसों से उन्हें बचा सकें। जब पवित्र अग्नि प्रज्ज्वलित की गई, ईस्वर ने नीचे अग्नि के मध्य में बारह बाण गिराए, प्रत्येक के लिए तीन बाण जिन पर उनके नाम अंकित थे। उनमें से राम को ब्रह्मास्त्र, अग्निवत और ब्लैवत प्राप्त हुए जो सभी बाणों में सर्वोत्तम थे।

इसप्रकार विध्वंसक अस्त्रों को चलाने में निपुण और उन्हें धारण करने में शक्तिसंपन्न होकर वे चारों भाई घर वापस आ गए जिससे माता–पिता और प्रजा में हर्ष छा गया।

कैयाकेशी के पिता, राजा कैयाकेश का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। चूंकि राजा इस समय वृद्धावस्था में थे, इसलिए उनके लिए राक्षसों के निरंतर आक्रमणों से देश की रक्षा कर पाना बहुत कठिन हो रहा था। यह मालूम पड़ने पर कि उनका नाति बरत युद्ध में पर्याप्त निपुणता हासिल कर चुका है, उन्होंने दसरथ से उसे उनके राज्य में भेजने की प्रार्थना की ताकि वह राज्य की रक्षा करने में उनकी सहायता कर सके। दसरथ को कोई आपत्ति नहीं हुई। अतः बरत सत्रुद के साथ कैयाकेश के राज्य की ओर चल पड़े।

इसी बीच, दसकंठ ने इस बात से भयभीत होकर कि अलौकिक शक्तियों में ऋषि कहीं उससे आगे न निकल जाएं, काकनासुर[1] को उनके द्वारा किए जा रहे अनुष्ठानों को भंग करने के लिए भेजा। उसने और उसके दल ने अपने आप को कौओं के रूप में बदल लिया और ऋषियों के लिए भीषण बाधाएं उत्पन्न करने लगे। ऐसे राक्षसी खतरों का सामना करने में असमर्थ, वे सब मिलकर सहायता प्राप्ति हेतु वसिट्ठ और स्वामित्र के पास पहुँचे। दोनों ऋषि दसरथ के दरबार में गए और राम और लक्षण की सहायता पाने के लिए प्रार्थना की। सत्पुरुषों के निमित्त सदा समर्पित रहने वाले दोनों राजकुमार ऋषियों को दानवी विपत्ति से मुक्त कराने के लिए तुरंत चल पड़े। काकनासुर राम के तीक्ष्ण बाणों का शिकार हो गई। उसके दो पुत्र स्वाहु[2] और मारीश[3] अपनी माँ की मृत्यु के बारे में पता चलने पर उसकी मौत का बदला लेने के लिए आए। स्वाहु का अंत तो उसकी माँ की तरह ही हुआ जबकि मारीश लंका भाग गया।

मारीच स्वाहु

---

[1]ताड़का

[2] सुबाहु

[3]मारीच

अध्याय 12

राम और सीता का विवाह

अप्रतिम सौंदर्यसंपन्न युवती सीता किसी और से नहीं, वरन् एक ऐसे वीर से विवाह करने योग्य मानी गई जो उसे विवाह भेंट के रूप में अपनी यथेष्ट वीरता का परिचय दे सके। इस समय राजा जनक के पास एक धनुष था जो ईस्वर ने उन्हें दिया था। ईस्वर ने इसका प्रयोग सोलाश राज्य पर शासन करने वाले त्रिपुरम नामक राक्षस को मारने के लिए किया था। लड़ाई के बाद उन्होंने धनुष जनक के पास भिजवा दिया था और कवच को ऋषि अगत के पास नारायण को उस समय देने के लिए रखवा दिया जब वे दसकंठ को पराजित करने के लिए अवतार लेंगे। जनक ने संसार के सभी राजाओं को सूचित किया कि जो कोई भी ईस्वर के धनुष[1] को उठाने में सफल होगा, उसे सीता का हाथ देकर सम्मानित किया जाएगा। बहुत से राजा आए और प्रयास किया, अब तक किसी को सफलता नहीं मिली।

उस समय राम के अदम्य पराक्रम से बहुत प्रसन्न दोनों ऋषियों, वसिट्ठ और स्वामित्र ने सोचा कि वे ही सीता के लिए योग्य पति होंगे। इसलिए काकनासुर के वध के उपरांत वे दोनों भाईयों को लेकर जनक के दरबार में गए। जब वे महल की खिड़की के नीचे से गुजर रहे थे, राम की दृष्टि सीता की दृष्टि से मिली और पहली ही दृष्टि में उन्हें एक दूसरे से प्रेम हो गया। फिर भी राम को अभी अपनी प्रेमिका का हाथ मांगने से पहले वीरता की कसौटी पर खरा उतरना था।

---

[1]वाल्मीकि के अनुसार, ईश्वर ने धनुष का प्रयोग दक्ष प्रजापति के यज्ञ का विध्वंस करने के लिए किया था।

दोनों भाईयों को धनुष के पास लाया गया। लक्ष्मण ने पहले प्रयास किया और उसने जान लिया कि उसे उठाना बिल्कुल भी मुश्किल नहीं है। लेकिन सीता के प्रति अपने भाई के प्रेम से अवगत होने के कारण उन्होंने स्वयं को धनुष उठाने से रोक लिया। तब राम की बारी आई और उन्होंने उसे एक पंख की तरह उठा लिया और प्रत्यंचा चढा दी और इसप्रकार सुंदर सीता के वांछित पति बन गए।

अयुध्या से दसरथ को आमंत्रित किया गया और बड़ी धूमधाम से विवाहोत्सव[1] मनाया गया। समारोह संपन्न हो जाने पर प्रसन्न राजा ने अपने पुत्र और पुत्रवधु के साथ अपनी राजधानी के लिए प्रस्थान किया।

---

[1]यहाँ लक्ष्मन अथवा उनके भाईयों के विवाह का कोई उल्लेख नहीं है।

अध्याय 13

राम और रामासुर का युद्ध

जब बारात एक जंगल से गुजर रही थी, अस्त्र के रूप में कुल्हाड़ी को धारण किए रामासुर नामक अर्द्धदेव के हस्तक्षेप ने अचानक उसके आगे बढ़ने को अवरुद्ध कर दिया। उसने रास्ते में खड़े होकर बारात को आगे बढ़ने से रोक दिया और इसके मुखिया के बारे में पूछा। जब उन्हें दसरथ के विषय में और ईस्वर के धनुष की प्रत्यंचा चढ़ाकर सीता से विवाह करने वाले राम के बारे में बताया गया, उसने राम की वीरता की परीक्षा लेनी चाही। तत्पश्चात् उनके बीच युद्ध हुआ,[1] जिसके अंत में रामासुर को अपनी हार स्वीकार करनी पड़ी। अंततः राम ने अपने आप को नारायण के रूप में प्रकट किया और रामासुर ने उनका कृपा पात्र बनने के लिए उस धनुष को भेंट किया जो उनके पितामह त्रिमेघ को ईस्वर द्वारा दिया गया था। राम ने उसे आकाश में उछाल दिया ताकि वह बिरुन[2] की देखरेख में रहे और जब कभी उन्हें उसकी आवश्यकता पड़े, उनके पास आ जाए। बारात ने तब फिर अयुध्या के लिए प्रस्थान किया और बिना किसी अन्य बाधा के सुरक्षित अयुध्या पहुँच गई।

---

[1]मूल रामायण के अनुसार, राम को परशुराम के धनुष पर प्रत्यंचा चढ़ाने की चुनौती दी गई थी।

[2]सं. वरुण

अध्याय 14

राम का वनवास

अब बूढ़े हो चुके राजा दसरथ अब आगे अपने विशाल साम्राज्य का दायित्व वहन करने में असमर्थ थे, वे राम को अयुध्या के राजा के रूप में प्रतिष्ठित करना चाहते थे। इसलिए उन्होंने राजसभा के सभी सदस्यों को अपनी इच्छा से अवगत कराया। यह सूचना कैयाकेशी की कुबड़ी दासी कुच्ची[1] के कानों में भी पहुँची। इस समय इस दासी के मन में राम के प्रति द्वेष भाव था क्योंकि उन्होंने, जब वे युवक थे, उसके कूबड़ पर इतनी शक्ति से बाण मारा था कि वह आगे की तरफ हो गया था। फिर उन्होंने दूसरा बाण लिया और इसे चलाने पर वह पुनः अपनी पहली जैसी स्थिति में आ गया। उनके इस विचित्र कार्य ने दर्शकों को तो खूब हँसाया लेकिन कुच्ची के मन में बदले की भावना को जन्म दे दिया। वह सदैव ऐसे अवसर की तलाश में रहती थी जिससे वह राम के प्रति पाले गए अपने पुराने वैमनस्य का बदला ले सके।

अंततः दसरथ द्वारा कैयाकेशी को दिए गए वरदान ने उसके सामने एक सुनहरा अवसर प्रस्तुत कर दिया। जब दसरथ राज सिंहासन पर आरूढ़ हुए थे, तब पदुतदंत[2] नामक राक्षस ने स्वर्ग पर आक्रमण किया था। उस समय इंद्र ने राक्षस को पराजित करने के लिए दसरथ से सहायता मांगी थी। अतः उन्होंने तुरंत स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया। उनकी तीनों रानियों में से कैयाकेशी लड़ाई के लिए उनके साथ हो लीं। अब राक्षस के साथ युद्ध करते समय एक भाला रथ की धुरी से आ टकराया और उसके टुकड़े–टुकड़े कर दिए, जिससे दसरथ की विजय की कोई संभावना न रही। अपने पति के इस दुर्भाग्य को देखकर कैयाकेशी ने इस प्रार्थना के साथ कि उसके जीवन पर कोई खतरा न आए, अपने हाथों को धुरी के स्थान पर लगा दिया। इसप्रकार सहायता करने पर दसरथ युद्ध में विजयी हुए। कृतज्ञ राजा ने उनको वरदान दिया कि जो कुछ भी वे चाहें, उन्हें

---

[1]वा. मंथरा। शब्द स्पष्ट रूप से कुब्जी का विकृत रूप है।

[2]वा. शंबरा

दिया जाएगा। यह जानने पर कि राजा कैयाकेशी को कोई भी वरदान देने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध हैं, उसने रानी को वरदान के रूप में राम का निर्वासन और अपने पुत्र बरत के लिए सिंहासन मांगने के लिए उकसाया। कैयाकेशी सरलता से सहमत हो गईं। अपनी सुंदर आँखों में आँसू भरकर उन्होंने दसरथ से राम के लिए चौदह वर्ष का निर्वासन और उसकी जगह बरत को सिंहासन देने के लिए आग्रह किया। राजा ने इस लज्जाजनक कृत्य के लिए रानी को रोकने का भरसक प्रयत्न किया लेकिन रानी अपने आग्रह पर अडिग रही। सत्य का सच्चा अनुयायी होने के कारण राजा का मन अपनी प्रतिज्ञा से हटने के लिए नहीं माना। अत्यंत व्यथित मन से उन्होंने राम को चौदह साल के लिए निर्वासित कर दिया। राम अपने पिता को सत्य के पथ से विचलित नहीं करने देना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अपनी समर्पित पत्नी और निष्ठावान भाई लक्षण के साथ स्वेच्छा से वन के लिए प्रस्थान किया। सदा से ही मानव कल्याण के प्रबल प्रोत्साहक रहे राम अपने निर्वासन के समय का उपयोग धरती से राक्षसों के पूर्ण विनाश के लिए करना चाहते थे। अयुध्या के राजमहल से राम की अनुपस्थिति शोकसंतप्त राजा के लिए घातक प्रहार सिद्ध हुई और वह वृद्ध मृत्यु को प्राप्त हो गए।

अध्याय 15

राम की चरण पादुकाओं का अधिष्ठापन

राम ने अपने समर्पित भाई और निष्ठावान पत्नी के साथ अपने भविष्य के निवास स्थान वन की ओर प्रस्थान किया। कुछ दूर चलने के बाद वे सतोंग नदी[1] के किनारे आ गए जहाँ उनकी भेंट शिकारियों के राजा खुखान[2] से हुई। राम के प्रति बहुत समर्पित होने के कारण उसने अपने स्थान पर उन्हें राजा बनने और अपनी वन्य जनजातियों पर शासन करने का अनुरोध किया। चूंकि वह स्थान अयुध्या के बहुत पास था, इसलिए उन्होंने उसके उत्कृष्ट आतिथ्य के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करने के साथ उसके विनम्र अनुरोध को अस्वीकार कर दिया। खुखान के साथ उन्होंने नदी पार की और ऋषि भारद्वाज के आश्रम पहुँच गए। उन्होंने भी उनके लिए विनम्र आतिथ्य की व्यवस्था की। ऋषि ने उन्हें सरभंग ऋषि के आश्रम जाने का परामर्श दिया। अतः वे इस नए गंतव्य की ओर चल पड़े और वहाँ समय पर पहुँच गए। ऋषि ने भी उन्हें अपने साथ ठहरने का निमंत्रण दिया, लेकिन यह स्थान अब भी राजधानी से बहुत दूर नहीं था। इसके साथ ही बरत के द्वारा उनका पीछा करने का पूरा अवसर था, अतः राम को उनका यह अनुरोध अस्वीकार करना पड़ा। तब ऋषि ने उन्हें सत्कुट पर्वत पर जाने का परामर्श दिया जहाँ देवताओं ने उनके लिए आरामदायक आवास का निर्माण कर रखा था। इतना उत्साहवर्धक समाचार सुन, प्रसन्न होकर वे तुरंत सत्कुट पर्वत के लिए चल पड़े और एक लंबी यात्रा के बाद अपने इस नए आवास पर पहुँच गए जहाँ वे आराम से रहने लगे।

---

[1]यहाँ कहानी मूल से अलग हो जाती है जिसके अनुसार शंबरा के विरुद्ध युद्ध में कैकेयी ने रथ चलाया था। राजा गंभीर रूप से घायल हो गए थे यद्यपि वे विजयी हुए। कैकेयी ने उनके ठीक होने तक उनकी सेवा की। उनकी प्रेमपूर्ण सेवा ने कृतज्ञ राजा को उन्हें कुछ वरदान देने के लिए प्रेरित किया।

[2]वा. गुहा। यहाँ यह शब्द तमिल भाषा के 'कुकान' से आया है।

राम के राज्याभिषेक का समाचार सुनकर बरत और सत्रुद फूले न समाए और इस शुभ समारोह में सम्मिलित होने के लिए वे राजधानी की ओर चल पड़े। लेकिन जब वे अयुध्या की सीमा पर पहुँचे, उन्होंने पाया कि इस शुभ अवसर के अनुरूप हर्षोल्लास के स्थान पर सारा शहर शोक के अंधकार में डूबा हुआ है। शीघ्र ही उन्हें इस छाए हुए शोक का कारण पता चल गया। राम के प्रति समर्पित बरत ने, उसके वैध उत्तराधिकारी द्वारा छोड़ दिये गए सिंहासन पर आरूढ़ होने के लिए अपनी सहमति नहीं दी। इसलिए उन्होंने निश्चय किया कि पिता के दाह संस्कार के बाद वह जाकर राम को उनके राजसिंहासन के लिए वापस लेकर आयेंगे। मरणासन्न दसरथ के आदेश के अनुसार उन्हें और उनकी माता को धर्मानुष्ठान के किसी भी कार्य में भाग लेने से रोक दिया गया था, इसलिए वसिट्ठ और स्वामित्र के द्वारा उसको संपन्न किया गया। जब धर्मानुष्ठान संपन्न हो गया, बरत और सत्रुद अपनी माताओं के साथ वन के लिए निकल पडे, जहाँ राम निवास कर रहे थे। एक लंबी यात्रा के बाद वे अपने गंतव्य पर पहुँच गए और उन्होंने राम से राजधानी लौटने और प्रजा पर शासन करने के लिए प्रार्थना की। एक आज्ञाकारी पुत्र की तरह उन्होंने न तो इस प्रस्ताव को स्वीकार किया और न ही उन्होंने इस दुखद घटना की जिम्मेदार कैयाकेशी के प्रति कोई रोष प्रकट किया। लेकिन श्रद्धापूर्ण समर्पण में बरत भी राम से पीछे नहीं रहे। वे भी सिंहासनारूढ़ होने के लिए सहमत नहीं हुए। अंततः इस गतिरोध को दूर करने की इच्छा से बरत ने राम से अपनी चरण पादुकाएं देने के लिए प्रार्थना की ताकि वे उसे राम के प्रतिरूप में सिंहासन पर अधिष्ठापित कर सकें और उनके प्रतिनिधि के रूप में शासन चला सकें। राम ने इस प्रस्ताव को सहमति दे दी। तब, इस अंतिम प्रार्थना के साथ, कि यदि राम चौदह वर्ष बीतने पर नहीं लौटे तो वह और सत्रुद जलती हुई चिता में अपने प्राणों को त्याग देंगे, वे राम के वियोग से संतप्त अयुध्या वापस लौट गए।

अध्याय 16

राम का गोदावरी पर आगमन

बरत और उनके परिजनों के अयुध्या प्रस्थान करने के बाद, राम ने सत्कुट से जाने का विचार किया, ऐसा न हो कि कहीं अपनी माता से उनकी दुखद भेंट दोबारा हो जाए। इसलिए वे घने जंगल की ओर चल दिए। रास्ते में वे किसी सुदर्शन[1] नामक एक राजा से मिले जो अपनी पत्नी सुक्खई के साथ वानप्रस्थी जीवन बिता रहे थे। उन्होंने राम से अपने साथ ठहरने का निवेदन किया, पर ऊपर बताए कारण से उन्हें उनका निवेदन अस्वीकार करना पड़ा। फिर वे एक बगीचे में पहुँचे जिसका स्वामी कोई बिरवा[2] नाम का दानव था जिसने ईस्वर की अनुकंपा से महासागर के अधिष्ठाता देवता समुद्र की तथा अग्नि की शक्तियाँ प्राप्त कर ली थीं जिससे वह बहुत शक्तिशाली हो गया था। बगीचे से गुजरते समय इसके अनेक रक्षकों ने उन्हें ललकारा, पर वे सब के सब लक्षण के द्वारा मार दिए गए। उस समय बिरवा अपने घर पर न था। जब वह वापस लौटा और अपने अधीनस्थों पर पड़ी घोर आपदा को देखा, वह बदला लेने के लिए तुरंत चल पड़ा। लेकिन इतना शक्तिशाली होने पर भी वह राम और लक्षण की संयुक्त वीरता का सामना नहीं कर पाया। उन्होंने आक्रमणकारी का तत्क्षण अंत कर दिया।

तब दोनों विजेताओं और सीता ने वन में अपनी यात्रा फिर शुरू कर दी। शीघ्र ही वे एक गुफा पर पहुँचे जहाँ सौवरी[3] नाम की एक स्वर्गिक अप्सरा रह रही थी, जिसे ईस्वर की सेवा में लापरवाही बरतने पर जलते हुए जंगल के पास की गुफा में एकाकी जीवन जीने के लिए शापित किया गया था।

---

[1]वा. सुतीक्ष्ण। मूल रामायण के अनुसार वे एक ऋषि थे।
[2]विराध।

[3]सौवरी शायद वाल्मीकि की सवरी है।

उसे उसके शापित जीवन से मुक्ति केवल तभी मिल सकती थी जब राम आयें और उस आग को बुझायें। इसलिए उसने राम से आग बुझाने और एक दुखी प्राणी की भलाई के लिए दयापूर्ण याचना की। सदा कृपालु राम ने उसकी याचना को तुरंत स्वीकार कर लिया और इसप्रकार सौवरी को पुनः स्वर्गिक आनंद का सुख भोगने में सहायता की।

अंत में वे ऋषि अगत[4] की कुटिया पर पहुँचे जिनके संरक्षण में ईस्वर ने राम को देने के लिए अपना वह अस्त्र रखा था, जिसका उपयोग उन्होंने त्रिपुरम के साथ युद्ध करते समय किया था। ऋषि से अस्त्र[5] प्राप्त करने के पश्चात् राम अपने भाई और पत्नी के साथ तब तक यात्रा करते रहे जब तक कि वे गोदावरी नदी के किनारे नहीं पहुँच गए, जहाँ इंद्र ने उनके निवास के लिए पहले से ही तीन कुटिया बना रखी थीं।

---

[4]वा. अगस्त्य

[5]मूल रामायण के अनुसार, अगस्त्य ने राम को विष्णु का धनुष और इंद्र के दो तूणीर दिए थे।

अध्याय 17

राम और लक्षण का सम्मानखा और उसके दल से सामना

राम, लक्षण और सीता गोदावरी नदी के किनारे स्थायी रूप से रहने के लिए अभी पहुँचे ही थे कि उन्हें कुंभाकश नाम का एक राक्षस दिखाई दिया जो सम्मानखा और जिव्हा का पुत्र था। उसका उद्देश्य तपस्या करना था ताकि वह चमत्कारिक अस्त्रों को प्राप्त कर सके। ब्रह्मा उसके कठोर तप से प्रसन्न हुए और उन्होंने उसके सामने एक तलवार फेंक दी। इस पर राक्षस यह सोचकर बहुत क्रुद्ध हुआ कि ब्रह्मा ने तलवार व्यक्तिगत रूप से उसके हाथ में देने के स्थान पर, उसके सामने फेंककर उसका अपमान किया है। इसलिए उसने तलवार नहीं उठाई।

उस समय लक्षण वन में फल इकट्ठा कर रहे थे। एक निर्जन स्थान पर तलवार पड़ी हुई देखकर, लक्षण ने उसे उठा लिया और खुशी से उसे लहराने लगे। ध्यान में बैठे हुए कुंभाकश ने अपनी आँखें खोलीं और लक्षण को यह क्रिया करते हुए देखा। तब इन दो शूरवीरों के बीच युद्ध छिड़ गया जो लक्षण के द्वारा राक्षस का सिर काटे जाने पर समाप्त हुआ।

जब अभागे पुत्र के भाग्य में ऐसी विपदा आई, तो उसके पिता का अंत भी उससे कम विनाशपूर्ण नहीं रहा। दसकंठ वन में जाने की तैयारी कर रहा था। लंका को जिव्हा के संरक्षण में सौंपकर, वह राज्य से बाहर चला गया। जिव्हा ने अपना दायित्व सक्रियता औार जागरुकता के साथ निभाया। एक सप्ताह तक उसने पलक भी नहीं झपकी। लेकिन अंततः प्रकृति भी नियमों का उल्लंघन और अधिक नहीं सह सकी। उसने नींद के सामने हार मान ली, लेकिन तब तक नहीं, जब तक उसने अपने शरीर को ब्रह्मा के शरीर के समान असाधारण रूप से न फैला दिया और पूरे लंका नगर को अपनी जीभ बाहर निकाल कर आच्छादित न कर लिया ताकि कोई भी उसके सोने के समय उसमें प्रवेश न कर सके।

इसी बीच दसकंठ लौट आया। रात्रि का गहनतम अंधकार था। लंका उस समय नींद में डूबी हुई थी और अंधकार के आवरण से ढकी हुई थी। प्रवेश का कोई रास्ता न पाकर उसने सोचा कि शायद नगर को किसी शत्रु ने घेर लिया है। इसलिए उसने प्रवेश का रास्ता बनाने के लिए अपना चक्र फेंका। यह जिव्हा की जीभ से टकराया और उसे मार दिया। नगर उसके बाद दृष्टिगोचर हो गया, यहाँ तक कि अदृश्यता का कारण भी स्पष्ट हो गया। दसकंठ अपने बहनोई की मृत्यु पर बहुत दुखी हुआ, उसने उसके पराक्रम को सम्मान देने के लिए उचित दाह–संस्कार करने की आज्ञा दी।

सदैव कामुक आमोद–प्रमोद में लिप्त रहने वाली सम्मानखा ने अचानक अपने पति जिव्हा की मृत्यु हो जाने पर अनुभव किया कि उसका विधवा–जीवन इस सुख से वंचित हो गया है। इसलिए उसने अपने भाई दसकंठ से अपने पुत्र कुंभाकश से मिलने का बहाना बना कर जाने की अनुमति मांगी। लेकिन इसके पीछे उसका छिपा हुआ प्रयोजन रास्ते में नए पति की तलाश करना था।

अंत में एक सुंदर स्त्री के छद्मवेश में वह उस स्थान पर आई जहाँ राम ने अपना आवास बना रखा था। प्रथम दृष्टि में ही वह अयुध्या के राजकुमार के प्रति उन्मत्त प्रेम में पड़ गई। लेकिन राम ने उसके कामुक प्रदर्शन के प्रति कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं की। जब उसे सीता की झलक मिली, वह राम की निष्ठुरता का कारण समझ गई। इसलिए उसने सीता को मारने के बारे में सोचा ताकि वह उनके हृदय की रानी बन सके। अतः उसने अपना राक्षसी रूप धारण किया और सीता पर झपटते हुए उसे काटने और मारने लगी। राम ने उसे पलटकर मारा जबकि लक्षण ने उसके हाथ–पांव के साथ–साथ उसके कान और नाक काट दिए और उसे दूर भगा दिया।सम्मानखा रोमागन[1] नगर पहुँची और उस देश के शासक, अपने भाई खर से झूठ बोला कि राम और लक्षण ने उसके साथ प्रेम जताया किंतु उसके प्रति उसने कोई प्रतिक्रिया नहीं दी। इस कारण उन्होंने मेरे शरीर के अंगों को काटकर मुझसे बदला लिया।

---

[1]स्पष्ट रूप से यह जनस्थान है।

जब खर ने यह सुना, उसे बहुत क्रोध आया। इसलिए अपनी बहन के अपमान का बदला लेने के लिए वह अपनी विशाल सेना को साथ लेकर चल पड़ा। तब राम और खर के बीच एक भयंकर युद्ध छिड़ गया, अपने बाण के पहले ही प्रहार में उसने राम के धनुष को तोड़ दिया। इसलिए राम ने विरुन की देख–रेख में रखे गए रामासुर के धनुष का आह्वान किया। उस शक्तिशाली धनुष की शक्ति का सामना कर पाने में असमर्थ, खर मृत्यु का शिकार हो गया। खर की मृत्यु के पश्चात्, उसके छोटे भाई दूषन ने राम को युद्ध के लिए ललकारा। लेकिन वह अपने भाई से अधिक अच्छा कुछ न कर सका।

यह खबर तीन मुख वाले भयंकर राक्षस त्रिशिरा के पास पहुँची। उसका एक मुख क्रोधोन्माद में इतनी तेजी से गरजा कि उसकी आवाज देवलोक तक पहुँच गई; दूसरे मुख ने राम के शरीर को इतने महीन टुकड़ों में काटने का दृढ़ निश्चय किया, जिससे वे कौओं के गले में न चिपकें, और तीसरे मुख ने ऐसी सेना को संगटित करने का आदेश दिया जिसके विचित्र सैनिकों के मुख तो नर–पशु के हों और शरीर दूसरे जानवर या अलौकिक प्राणी का हो। किंतु अपने तीनों सिरों और अनूठे दल के साथ वह केवल खर और दूषन के नेतृत्व में ही पीछे चल सकता था।

सम्मानखा

जिव्हा

अध्याय 18

सीता का अपहरण

राक्षसों के तीनों राजाओं के भाग्य में आ पड़ी इस विपदा ने सम्मानखा को इतना अधिक भयभीत कर दिया कि वह पृथ्वी के नीचे से लंका की ओर चली गई। उस असंदिग्ध कपटी स्त्री ने दसकंठ को बताया कि वह सीता नाम की एक सुंदर स्त्री से वन में मिली थी। जब वह सीता को पत्नी के रूप में भेंट करने के लिए दसकंठ के पास ला रही थी, लक्षण ने उसका पीछा किया, उसने उसे क्रूरता से दण्डित किया और सीता को उससे छीन लिया। उसकी सहायता के लिए आए खर, दूषण और त्रिशिरा राम के हाथों मारे गए। इसलिए उसने दसकंठ से प्रार्थना की और उसे उकसाया कि वह राम के साथ युद्ध करे और उससे उसकी सुंदर पत्नी छीन ले।

जब दसकंठ ने सीता के सौंदर्य के बारे में सुना, वह सब कुछ भूल गया, यहाँ तक कि राम और लक्षण द्वारा किया गया अपनी बहन का अपमान भी। अब उसके मन में एक ही विचार प्रबल था कि सीता को कैसे पाया जाए। उसने रानी मंडो से यह सुझाते हुए सलाह मांगी कि अपनी बहन के अपमान का बदला लेने के लिए उन आदमियों को मारने के स्थान पर, जो राक्षसों के लिए मक्खियों से ज्यादा बड़े नहीं हैं, यह अधिक उचित रहेगा कि सीता का अपहरण कर लिया जाए। मंडो ने इस योजना पर आपत्ति जताई, पर वह व्यर्थ रही। सीता के अपहरण के लिए कृतसंकल्प मन वाले दसकंठ ने मारीश को सोने के हिरण का रूप धारण करने और राम और लक्षण को बहला–फुसला कर कुटिया से दूर ले जाने के लिए आदेश दिया। मारीश ने ईमानदारी से उस योजना का पालन किया।

हिरण मनोहारी तरीके से सीता की कुटिया के सामने चरने लगा। अपने रंग और फुर्ती में अत्यंत सुंदर लग रहे स्वर्णिम हिरण के दृश्य ने उनमें उसे पालने की इच्छा जाग्रत कर दी। उन्होंने, इसलिए, राम से उसे पकडने का

अनुरोध किया। राम ने सीता से कहा कि यह असली हिरण नहीं है बल्कि छद्म वेश में राक्षस है। राम का समझाना–बुझाना उसकी इच्छा को शांत नहीं कर सका। अंततः स्नेही पति ने उनके सामने हार मान ली और वे हिरण के पीछे–पीछे चले गए। वह उनको वन के अंदर काफी दूर तक ले गया। लेकिन राम के तेजी से पीछा करने ने मारीश को इतना थका दिया कि वह हिरण के रूप में नहीं रह सका। इसलिए वह अपने राक्षस रूप में आ गया जिसे राम ने तुरंत पहचान लिया। बिना देर किए राम ने उस पर बाण चला दिया जिसने उस पर प्राणघातक प्रहार किया। बचने का कोई रास्ता न पाकर, परंतु फिर भी दसकंठ की सहायता करने की भावना से उसने राम की आवाज की नकल की और चिल्लाया, 'सहायता करो, लक्षण, सहायता करो।

उसके चिल्लाने की आवाज सीता के कानों तक पहुँची। उन्होंने सोचा कि राम अवश्य किसी घातक संकट में हैं। इसलिए उन्होंने लक्षण से शीघ्र ही अपने भाई की सहायता के लिए जाने का आग्रह किया। किंतु लक्षण जानते थे कि यह राम की नहीं अपितु किसी राक्षस की आवाज है। उनके समझाने–बुझाने के बाद भी सीता ने उनसे जाने का आग्रह किया और उन्हें कटु शब्दों में फटकारा। अंततः लक्षण ने सीता की रक्षा हेतु देवताओं से सहायता के लिए आह्वान किया और राम की खोज में चल दिए।

अब दसकंठ ने उनकी अनुपस्थिति का लाभ उठाया और सीता के समक्ष साधु के वेश में प्रकट हो गया। एक धर्मात्मा को देखकर सीता ने उसका अपनी छोटी–सी कुटिया में स्वागत किया। लेकिन साधु ने सीता से कहा कि उस जैसी एक सुंदर स्त्री दसकंठ की पत्नी होने योग्य है जो सभी लोकों में सबसे शक्तिशाली राजा है। उस धर्मात्मा के मुख से ऐसी अपवित्र बातें सुनकर सीता ने उसे बुरी तरह फटकारा और निकाल दिया। उनकी झिड़की ने उसके क्रोध को भड़का दिया और वह अपने स्वरूप में आ गया। फिर उसने सीता को बलपूर्वक अपनी बाहों में ले लिया, अपने रथ में बैठाया और लंका की ओर उड़ गया।

उसी समय एक विशाल आकार वाला पक्षी और राम का मित्र सतायु[1] उनसे मिलने आने के लिए रास्ते में था। आकाश के बीच में उसका सामना उसके मित्र की पत्नी को अपहरण करके ले जा रहे रावण से हुआ।

उसने उस राक्षसराज से सीता को तुरंत लौटाने की मांग की। दसकंठ के मना कर देने पर उसने उसकी अनगिनत सेना को मार दिया और स्वयं राजा से युद्ध करने लगा। दसकंठ के सारे अस्त्र, चाहे वे कितने भी विनाशकारी थे, उस विशाल पक्षी पर कोई भी असर डालने में सफल न हुए। इस पर उसने उसके निष्फल प्रयासों का मजाक उड़ाया और गर्व से कहा कि इस संसार में कोई अस्त्र उसे नहीं मार सकता सिवाय ईस्वर की अंगूठी के, जो उस समय सीता की अंगुली में थी। उसकी आत्मघाती गर्वोक्ति ने दसकंठ को एक अवसर दे दिया। उसने सीता की अंगुली से अंगूठी निकाली और उस पक्षी पर फेंक दी। वह नीचे गिर कर मृत–सा हो गया, उसकी चोंच में अभी भी अंगूठी थी और उसकी आत्मा राम की प्रतीक्षा में थी। इसप्रकार, दसकंठ उस इकलौते विरोधी से छुटकारा पाकर लंका पहुँच गया और सीता को अपने हजार पुत्रों की निगरानी में उद्यान में रख दिया।

---

[1]वा. जटायु

अध्याय 19

राम द्वारा सीता की खोज। उनकी हनुमान से भेंट

मारीश को मारकर राम घर लौट रहे थे, तभी रास्ते में वे लक्षण से मिले। इसने उन्हें बहुत भयभीत कर दिया चूंकि उन्हें विश्वास हो गया कि लक्षण को किसी चाल में फँसा दिया गया है और सीता असुरक्षित छोड़ दी गई है। दोनों भाई बेचैनी से अपनी कुटिया की ओर दौड़े जहाँ अत्यंत क्रूर दुर्भाग्य उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। कुटिया खाली और वीरान थी, सीता की मोहक उपस्थिति से मिलने वाली खुशी अब वहाँ नहीं थी।

शोकाकुल राम और लक्षण घबराहट में समझ नहीं पा रहे थे कि क्या करना चाहिए। किंतु सौभाग्य से इंद्र वहाँ दृष्टिगोचर हुआ और उसने वह रास्ता दिखाया जिससे सीता को ले जाया गया था। दोनों भाईयों ने उस रास्ते का अनुगमन करना शुरु कर दिया और बहुत शीघ्र उन्होंने घायल शरीर वाले सतायु को देखा जिसकी आत्मा राम के आने की प्रतीक्षा कर रही थी। पक्षी ने उन्हें सीता की अंगूठी दी, सीता को ले जाने वाले दसकंठ के बारे में बताया और फिर अपने प्राण त्याग दिए। कृतज्ञ राम ने एक बाण मारा और उससे एक चिता बन गई। तब उन्होंने एक दूसरा बाण चलाया और इसने उसका शरीर जला दिया। अंत में उन्होंने एक तीसरा बाण मारा और इसने आग को बुझा दिया। इस अनोखे दाहसंस्कार के बाद, उन्होंने सतायु के बताए दिशानिर्देश के अनुसार अपनी खोज दोबारा प्रारंभ की। जब उन्होंने कुछ दूरी तय कर ली, उन्हें कुंबल[1] नाम का कोई राक्षस मिला। ईश्वर से शापित होने के कारण उसके शरीर का केवल ऊपरी भाग ही था। उसके शापित जीवन का अंत केवल तभी हो सकता था जब वह राम से मिलता। जब राम और लक्षण उसकी बाहों की पहुँच में आ गए, उसने उन्हें तुरंत पकड़ लिया और उन्हें निगलने के लिए तैयार हो गया। लेकिन उसने अपने सारे शरीर में एक विचित्र प्रकार के भय की

---

[1]वा. कबंध।

सरसराहट का अनुभव किया। वह समझ गया कि जो आदमी उसकी पकड़ में है, वह साधारण आदमी नहीं है, बल्कि उसके मुक्तिदाता राम हैं। उसने तुरंत अपनी पकड़ को ढीला कर दिया और वे दोनों भाई उसकी भीषण जकड़ से बाहर आ गए। राम पर पड़ी विपत्ति के बारे में जानकर उस राक्षस ने उन्हें खिडकिन जाने और बाली से परामर्श करने की सलाह दी। खिडकिन और जम्बु की सेनाओं को साथ लेकर उन्हें तब लंका की ओर प्रस्थान करना चाहिए और सीता को पुनः प्राप्त करना चाहिए। कुंबल की सलाह से लाभान्वित होकर राम ने अपना बाण चलाकर उसके कष्टदायक जीवन का अंत करते हुए, उसे उसके शापित जीवन से मुक्त करने में सहायता की।

रास्ते में उन्हें अशमुखी[1] नाम की एक राक्षसी मिली जिसे उन दो राजकुमारों से देखते ही प्रेम हो गया। इसलिए उसने वातावरण को घने काले बादलों से अंधकारमय कर दिया, लक्षण को अपनी बाहों में लेकर आकाश में उड़ गई ताकि राम अपने भाई को उसकी जकड़ से छुड़ाने में सफल न हो सकें। परंतु राम के बाण की शक्ति ने सारे बादलों को छितरा दिया और लक्षण को तब अपनी संकटपूर्ण स्थिति के बारे में मालूम हुआ। उन्होंने कुछ वैदिक मंत्रों का उच्चारण किया जिसने उस राक्षसी को लक्षण को अपनी बाहों में लेकर धरती पर आने के लिए विवश कर दिया। उन्होंने उसकी बाहें काट दीं, तब अशमुखी अपना जीवन बचाने के लिए जंगल में भाग गई।

इस आकस्मिक जोखिम भरे कार्य के बाद दोनों भाई पेड़ की ठंडी छाया में आए जिसने उन्हें कुछ समय आराम करने के लिए आकृष्ट किया। संयोगवश हनुमान उस पेड़ पर बैठे हुए थे। दो अनजाने व्यक्तियों को पेड़ के नीचे बैठा देख, उन्होंने उनके बारे में जानना चाहा। उनका ध्यान अपनी ओर

---

[1]यह घटना वाल्मीकि रामायण में देखने को नहीं मिलती, जब कि शवरी की राम से भेंट रामकीर्ति में देखने को नहीं मिलती।

आकर्षित करने के लिए वे पेड़ की डाल को हिलाने लगे। राम उस समय मीठी नींद के प्रभाव के कारण दुख से क्षणिक राहत पा रहे थे और लक्षण सतर्क पहरेदारी कर रहे थे। इस डर से कि कहीं शाखाओं की हलचल उनकी नींद को बाधित न कर दे, लक्षण ने वानर को भगाने की कोशिश की, किंतु वह व्यर्थ रही। जिद्दी वानर अब भी वहीं था और तीव्रता से डाल को हिला रहा था। अंततः उन्होंने अपना धनुष–बाण उठा लिया। लेकिन वह उन्हें झपट कर ले गया ,अस्त्रविहीन हुए लक्षण हक्के–बक्के रह गए। एक वानर की इस दुर्जेय शक्ति से चकित, उनके पास राम को जगाने और जो कुछ हुआ था, इसके बारे में बताने के अतिरिक्त और कोई रास्ता न था। राम ने ऊपर देखा और पाया कि वानर के शरीर पर विशिष्ट चिन्ह हैं।

जब हनुमान ने देखा कि उनके चिन्हों को पहचान लिया गया है, तब वह जान गये कि पेड़ के नीचे लेटा हुआ आदमी नारायण का अवतार है। अतः वह पेड़ से नीचे आए और स्वयं को राम की सेवा में समर्पित कर दिया।

अध्याय 20

राम की सुग्रीव से भेंट

जब हनुमान ने राम की दर्दभरी कहानी सुनी, उन्होंने उनका अपने मित्र सुग्रीव से परिचय करवाना उचित समझा जो उस समय अपने भाई बाली द्वारा अपमानित और निर्वासित था। ये बाली की कुछ शंकाएं ही थीं कि सुग्रीव को इतना कष्ट सहना पड़ा। निम्नलिखित कहानी से पता चलेगा कि दोनों भाईयों का अचानक संबंध–विच्छेद कैसे हुआ।

कैलास पर्वत का एक द्वार नंदकला नामक राक्षस की देखरेख में था। एक दिन ईस्वर की उपपत्नियों में से एक फूल चुनने के लिए बगीचे में गई। फूलों से भरे पेड़ों के बीच, उस प्रसन्नचित्त होकर घूमने वाली के रूप–सौंदर्य पर आकर्षित हो वह राक्षस उससे प्रेम करने लगा। काफी समय तक उसने अपनी भावनाओं को अपने अंदर ही दबाए रखा। लेकिन इस बार वह अपनी भावनाओं को नियन्त्रित न कर सका, उसके ध्यान को अपनी ओर खींचने के लिए उसने उसके ऊपर एक फूल फेंका। दुर्भाग्यवश वह किशोरी न तो प्रेम करने में और न ही उसका जबाब देने की मनःस्थिति में थी। अतः उसके प्रेम प्रदर्शन ने केवल उसे क्रुद्ध करने का ही काम किया। अत्यंत क्रुद्ध होकर वह ईस्वर के पास वापस गई और उसके विरुद्ध शिकायत की। ईस्वर उसकी इस धृष्टता पर बहुत नाराज हुआ। अतः उसने उसे दराबा नाम के भैंसे के रूप में जन्म लेने का शाप दे दिया। फिर भी वह अपनी पूर्व स्थिति को तभी प्राप्त कर सकेगा जब वह अपने ही पुत्र दराबी के द्वारा मारा जाएगा।

तदनुसार नंदकला ने कैलास में अपना अधिकार गँवा दिया और भैंसे के रूप में जन्म लिया। कुछ ही समय में वह एक बड़े झुंड का मुखिया बन गया और उसने अतुलनीय शक्ति प्राप्त कर ली। जीवित रहने की स्वाभाविक प्रवृत्ति ने उसे भैंसे के जीवन को त्यागने और कैलास वापस लौटने के लिए प्रेरित नहीं किया। इसलिए जब कभी उसके एक पांडा पैदा होता, वह उसे तुरंत मार देता

और इसप्रकार अपने उद्धारक से छुटकारा पा लेता। उसके इस कठोर व्यवहार ने उन सभी गायों को बहुत दुख पहुँचाया जिनका वह मुखिया था। इसलिए, एक बार जब एक गाय को उसके द्वारा दूसरे बच्चे के गर्भधारण करने के लक्षण दिखाई दिए, वह एक गुफा में चली गई, ताकि वह अपने छोटे बच्चे को अपने ही पिता द्वारा कुचल कर मार डालने से बचा सके। पांडा अपने समय पर पैदा हुआ और उसका नाम दराबी[1] रखा गया। उसकी माता ने उसके पिता के विषादपूर्ण अतीत के बारे में बताया और उसे देवताओं के संरक्षण में छोड़ दिया।

जब वह युवा हुआ, उसने अपने पिता से बदला लेने का निश्चय किया। इसलिए यह जानने के लिए कि क्या वह शरीर में अपने पिता के समान हो गया है, उसने अपने पदचिन्हों को अपने पिता के पदचिन्हों से मापा। जब उसने देखा कि दोनों ही पदचिन्ह समानाकार के हैं, तो उसे इस बात का विश्वास हो गया कि उसका शरीर उसके पिता के शरीर से आकार में कम नहीं है। तब वह बाहर निकला और अपने पिता को अंतिम सांस तक लड़ने के लिए ललकारा। ईस्वर की भविष्यवाणी के अनुसार, दराबा अपने पुत्र दराबी द्वारा मृत्यु को प्राप्त हुआ।

अपनी पहली लड़ाई में विजयी होने पर दराबी के घमंड की कोई सीमा न रही। वह बहुत अधिक आक्रामक हो गया और उसने हिमालय वन के अधिष्ठाता देवताओं को चुनौती दे दी। उन्होंने उसे पंकगिरि के देवताओं को चुनौती देने की सलाह दी। अतः वह वहाँ गया, किंतु उन्होंने उसे समुद्र के देवता को चुनौती देने के लिए कहा। किंतु देवता उससे लड़ने के लिए तैयार नहीं हुए, बल्कि उन्होंने उसे ईस्वर के पास, यह कह कर भेज दिया कि वे ही उसकी लड़ाई की प्यास को बुझा सकेंगे। ईस्वर ने अपनी बारी आने पर उसे बाली के पास भेज दिया, क्योंकि उसके हाथों से वह अपनी मृत्यु को प्राप्त करेगा और बाद में वह खर के पुत्र के रूप में जन्म लेगा जिसका नाम मंकरकंठ होगा और अंत में वह राम के बाण द्वारा मारा जाएगा।

---

[1]वा. दुंदुभी। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, वह एक राक्षस था। बाली ने एक लडकी के लिए उससे युद्ध किया था।

अतः वह बाली के पास गया और उसे चुनौती दी। दोनों के बीच युद्ध एक खुले मैदान में हुआ और वह बराबरी पर समाप्त हुआ। फिर बाली ने उससे सुबह के समय एक गुफा में युद्ध पुनः शुरु करने के लिए कहा। दराबी सहमत हो गया। इसलिए अगली सुबह वे एक निर्धारित गुफा में मिले और अधूरी लड़ाई फिर से शुरु कर दी। लेकिन गुफा के लिए चलने से पहले बाली ने सुग्रीव से गुफा के द्वार पर प्रतीक्षा करते रहने और बहते हुए खून को ध्यान से देखते रहने के लिए कहा। यदि खून गहरे रंग का हुआ तो उसका मतलब दराबी की मृत्यु। लेकिन इसके विपरीत यदि खून हल्के रंग का हुआ तो इसका अर्थ उसकी अपनी मृत्यु। उस दशा में सुग्रीव इसके मुँह को बंद कर दे ताकि संसार को उसकी शर्मनाक हार का पता न लगे। सात दिन तक वे युद्धरत रहे, लेकिन विजय किसी के हाथ न लगी। अंत में बाली ने उसकी शक्ति को खत्म करने के लिए उसे जाल में फँसाने के बारे में सोचा। उसने दराबी से पूछा कि उसने इतनी अधिक शक्ति के भंडार को कैसे प्राप्त किया। अपने अहंकार के नशे में उन्मत्त वह देवताओं द्वारा की गई सहायता के प्रति कृतज्ञता को भूल गया और उत्तर दिया कि उसके सींग ही उसकी शक्ति के मूल कारण हैं। बाली ने सभी देवताओं को उसकी अकृतज्ञता के बारे में बता दिया और उन्हें उसका साथ छोड़ने के लिए प्रेरित किया। देवताओं द्वारा त्याग दिए जाने पर दराबी बाली के भीषण प्रहार का सरलता से शिकार हो गया और वह मृत्यु को प्राप्त हुआ।

संयोग की बात है कि उस समय बारिश[1] हो रही थी और पानी के मिलने से उसका गाढ़ा खून हल्के रंग का दिखाई पड़ने लगा। इसलिए सुग्रीव ने इसे भूलवश अपने भाई का खून समझ लिया। अतः उसके आदेशानुसार, उसने गुफा का द्वार बंद कर दिया और चला गया।

---

[1]वाल्मीकि रामायण में बारिश का कोई वर्णन नहीं है। फिर भी बारिश का कुछ संदर्भ हमें बंगाली रामायण में मिलता है।

जहाँ तक बाली का संबंध है, उसने दराबी का सिर काट दिया और गुफा के द्वार पर आया। जब उसने इसे बंद देखा, वह यह सोचकर क्रोधोन्मत्त हा गया कि सुग्रीव उसे उसके सिंहासन से वंचित करना चाहता है। क्रोध में आकर बाली ने दराबी के सिर को द्वार को बंद करने वाले पत्थर पर दे मारा जिससे उसे तुरंत रास्ता मिल गया। वह अपने महल वापस आया और सुग्रीव को उस अपराध के लिए, जो उसने कभी नहीं किया था, निर्वासित कर दिया। अपने भाई के दरबार से निर्वासित हुआ सुग्रीव जब जंगल में भटक रहा था, उसकी भेंट हनुमान से हुई और उन दोनों ने जंगल में अपना एक निवास बना लिया। जहाँ तक दराबी का संबंध है, उसने दसकंठ और रजतासुर के छोटे भाई खर के पुत्र के रूप में जन्म ले लिया।

सुग्रीव ने अपनी दुखभरी कहानी राम को बताई, उन्होंने उसके प्रति बहुत खेद व्यक्त किया। अंत में उन्होंने परस्पर एक समझौता किया कि बाली के खिलाफ युद्ध में राम सुग्रीव की सहायता करेंगे और सुग्रीव सीता की खोज करने और दसकंठ को पराजित करने में राम की सहायता करेगा।

अध्याय 21

बाली का वध

चूंकि राम के मन में खिडकिन के राजा के प्रति कोई द्वेष–भाव नहीं था, इसलिए बाली का वध करने के लिए सुग्रीव की सहायता करने को लेकर वे धर्मसंकट में थे। सुग्रीव ने उनके इस संकोच को भांप लिया। उनके इस द्वंद्व को शांत करने के लिए, उसने राम को बताया कि बाली ने कैसे अपनी प्रतिज्ञा तोड़ी थी और उसकी धर्मपरायण पत्नी तारा का हरण किया था, और ऐसा करने से उसने नारायण के बाणों से मृत्यु को आमंत्रित कर लिया था।

इसे सुनकर राम अपने धर्मसंकट से उबर गए और सहर्ष उसकी मदद को तैयार हो गए। चूंकि बाली को ईस्वर से एक वरदान प्राप्त था जिसकी वजह से जो कोई उससे लड़ेगा, अपनी आधी शक्ति खो देगा। इस विचार से कि सुग्रीव को कोई हानि न पहुँचे, राम ने पानी लिया, अपने बाणों को उसमें डुबोया और उस जल को सुग्रीव के सिर पर छिड़क दिया।

तब वे खिडकिन पहुँचे और सुग्रीव ने बाली को अकेले लड़ने की चुनौती दी। जहाँ तक राम का संबंध है, उन्होंने युद्ध के बीच में बाली को मारने का वचन दिया।

बाली ने चुनौती को स्वीकार कर लिया और दोनों के बीच युद्ध शुरु हो गया। दोनों भाई अपनी चाल–ढाल में इतने अधिक मिलते–जुलते थे कि राम के लिए अपने शिकार को पहचानना बहुत कठिन हो गया। बहुत जल्दी बाली ने सुग्रीव पर काबू पा लिया और चक्रवाल पर्वत पर फेंक कर मारा। किंतु पवित्र जल ने किसी भी प्रकार की हानि से उसकी रक्षा की।

वापस लौटने पर उसने राम को अपनी प्रतिज्ञा को पूरी न करने के लिए भला–बुरा कहा। राम ने बाली को न पहचान सकने की अपनी असमर्थता के

बारे में उसे बताया। इस बार उन्होंने अपने कपड़े का एक टुकड़ा फाड़ा और पहचान चिन्ह के रूप में उसे सुग्रीव की कलाई पर बाँध दिया।

अगले दिन, जैसे ही युद्ध शुरु हुआ, राम ने बाली पर बाण चला दिया। वानरराज बाण को पकड़ने में काफी दक्ष था। अपने मारने वाले को एक धर्मात्मा के रूप में देखकर, उसने अपवित्र कार्य के लिए उनकी तीक्ष्ण भर्त्सना की। इस पर राम ने नारायण का रूप धारण कर लिया और उसे उसकी प्रतिज्ञाभंग के बारे में बताया।

बाली भयभीत हो गया। वह समझ गया कि अब उसके प्रतिफल का दिन आ चुका है। इसलिए उसने सुग्रीव, अंगद और हनुमान को राम को समर्पित कर दिया और अपना अंत करने के लिए तैयार हो गया। राम ने उसकी कमी का अनुभव किया और वे उसे मरने देना नहीं चाहते थे। उन्होंने बाली से खून की आधी बूंद देने के लिए कहा ताकि वे अपने ब्रह्मास्त्र की पूजा कर सकें और बाली के शाप को काट सकें, किंतु ऐसा करने पर उसके शरीर पर बाल के सातवें भाग जितना छोटा दाग रह जाएगा। लेकिन जो व्यक्ति सम्मान की पूजा करता है, उसके लिए शर्मनाक दाग, चाहे वह कितना ही छोटा क्यों न हो, को सहने की अपेक्षा मृत्यु अधिक प्रिय होती है। बाली, जो इंद्र का बेटा था, ऐसे प्रस्ताव से कैसे सहमत हो सकता था जो उसे देवताओं के बीच हँसी का पात्र बना दे।

अपने निश्चय पर अडिग बाली ने सुग्रीव को परामर्श दिया कि उसे राम[1] के प्रति अपना व्यवहार कैसा रखना चाहिए। तब उसने एक बाण लिया और अपने हृदय को चीर कर अपनी पराक्रमी आँखें सदा के लिए बंद कर लीं।

---

[1]थाई भाषा में एक रोचक पुस्तक लिखी गई है,'Bali teaches his brother'। इसमें राजा के प्रति सेवक के कर्तव्यों का विस्तार से वर्णन दिया हुआ है।

अध्याय 22

युद्ध की तैयारी

बाली के दाह–संस्कार के बाद, सुग्रीव ने राम को खिडकिन आने के लिए आमंत्रित किया किंतु राम ने निमंत्रण को स्वीकार नहीं किया। इसलिए सुग्रीव ने उन्हें गंधमास की तलहटी में रहने की सलाह दी, जबकि वह सेना लाने के लिए खिडकिन चला गया। गंधमास में रहते हुए राम एक मोर से मिले जिसने उन्हें सीता और उस वानर के बारे में खबर दी जिसके पास सीता ने अपना दुपट्टा यह निवेदन करते हुए नीचे फेंका था कि इसे राम के पास पहुँचा दे।

सात दिनों तक राम सुग्रीव की प्रतीक्षा करते रहे लेकिन उसके लौटने का कोई लक्षण दिखाई नहीं दे रहा था। अंत में लक्षण उसकी तलाश में गए। सुग्रीव ने लक्षण को सूचित किया कि सारा देश इस समय अस्त–व्यस्त है और लोगों को व्यवस्थित करने में समय लगेगा। फिर भी उसने वचन दिया कि वह राम से मिलने अगले दिन जाएगा।

सुबह होने पर सुग्रीव और हनुमान ने राम की कुटिया की ओर प्रस्थान किया। गंधमास पहुँचने पर, सुग्रीव ने अपना भय व्यक्त किया कि राजा जम्बु[1], जो बाली का मित्र था, अपने मित्र का बदला लेने के लिए कहीं खिडकिन की जनता को बहका न दे। राम ने उस राजा को अपने पास बुलाने के लिए एक पत्र भेजा। जम्बु ने पत्र प्राप्त किया लेकिन उसे इसकी प्रामाणिकता पर विश्वास नहीं हुआ। इसलिए उसने स्वयं उपस्थित होने के स्थान पर अपनी निष्ठा का संदेश भेजा। लेकिन इससे हनुमान संतुष्ट नहीं हुए, उन्होंने अपनी माया से महल के सभी लोगों को गहरी नींद में सुला दिया। फिर जिस पलंग पर राजा विश्राम कर रहा था, उन्होंने उसे उठा लिया और राम के सामने ले आए।

---

[1]इस पात्र का वर्णन वाल्मीकि में नहीं है।

जब जम्बू जागा और राम को नारायण के रूप में देखा, उसने स्वयं को उनकी सेवा में समर्पित करने में जरा भी संकोच नहीं किया। सुबह होने पर जब राजा जम्बु की पत्नी ने अपने पति को रहस्यमय तरीके से गायब पाया, वह तुरंत समझ गई कि उसे हनुमान द्वारा उठा कर ले जाया गया है। इसलिए उसने राजा के भतीजे निलाबद[1] से अपने चाचा की खोज में जाने के लिए कहा। अतः उसने अपने को एक मक्खी के रूप में बदल लिया। वह वहाँ उड़ कर पहुँच गया जहाँ जम्बु बैठा हुआ था और उसके कान में धीरे से राजधानी से उसके गायब होने का कारण पूछा। राजा ने उसे सब कुछ बता दिया और आगे कहा कि चूंकि वह नारायण के उद्देश्य के लिए काम कर रहा है, इसलिए अपनी राजधानी नहीं लौट सकता। तब उसने अपने भतीजे को राम से मिलवाया। निलाबद राम की सेवा करके खुश था, फिर भी वह हनुमान के प्रति पाले गए विद्वेष को नहीं त्याग पाया।

राम ने तब सुग्रीव और निलाबद को अपनी–अपनी राजधानियों में लौट जाने और सेनाएं लाने की सलाह दी। बूढ़े जम्बु को उन्होंने अपनी राजधानी वापस जाने और अपने देश के साथ–साथ खिडकिन पर भी सुग्रीव के प्रतिनिधि के रूप में शासन करने की सलाह दी क्योंकि सुग्रीव को सेना के साथ जाना था, कुछ ही समय में निलाबद के नेतृत्व में जम्बु की सेना और सुग्रीव के नेतृत्व में खिडकिन की सेना ने 'अठारह मुकुटों' के नाम से प्रसिद्ध अठारह सेनापतियों साथ मिलकर गंधमास की तलहटी में अपना डेरा डाल दिया।

निलाबद

[1]वा. नल

अध्याय 23

हनुमान की लंका यात्रा। उनके साहसिक कार्य

जब युद्ध की सारी तैयारियाँ हो चुकीं, राम ने लंका के लिए तुरंत कूच करने की सोची। इसलिए उन्होंने युद्ध समिति को अपनी योजना के औचित्य पर विचार करने के लिए बुलाया। समिति ने निर्णय किया कि मुख्य सेना को भेजने से पहले यह अधिक उचित रहेगा कि हनुमान, जम्बुबान और निलाबद के नेतृत्व में सैन्य दृष्टि से टोह लगाने के लिए एक दल भेजा जाए। उनको सीता का पता–ठिकाना जानने और उन तक खबर पहुँचाने का दायित्व भी सौंपा गया।

राम ने हनुमान को मुद्रिका और सीता का दुपट्टा उन्हें सौंपने के लिए दिया ताकि वे उस पर विश्वास कर सकें कि वह उनके पति का दूत है। किंतु हनुमान ने शंका व्यक्त की कि सीता कहीं उन्हें एक दुश्मन न समझ लें, क्योंकि इस बात की पूरी संभावना है कि कोई भी राक्षस उन स्मृति–चिन्हों को सरलता से पा सकता है। इस पर राम ने हनुमान से कहा कि यदि सीता उन पर शंका करें, तब वे उन्हें एक गुप्त बात बता दें जो केवल राम और सीता को ही पता है। यह उनके प्रथम प्रेम की प्रिय कहानी थी जो मिथिला के महल की खिड़की के नीचे से शुरु हुई थी। सीता के संदेह का निवारण करने वाली इस गुप्त बात के साथ हनुमान और सेना ने लंका के लिए कूच किया।

पर्याप्त दूरी तय कर लेने के बाद, सेना मायन नगर पहुँची। यह बिल्कुल निर्जन स्थान था, केवल स्वर्ग से गिरी शापित अप्सरा पुष्माली को छोड़कर। उसका अपराध इतना था कि इसकी कपटी चाल द्वारा मायन के शासक तावन ने स्वर्गिक अप्सरा रंभा को अपनी पत्नी बना लिया था। ईस्वर ने इसलिए इस पूरे देश को वीरान कर दिया और पुष्माली को इस निर्जन नगर में राम के सैनिकों से भेंट होने और शापित जीवन से छुटकारा पाने तक, एकाकी जीवन जीने का शाप दे दिया। हनुमान उससे मिले और उन्होंने अपना परिचय राम के सैनिक के रूप में दिया। लेकिन आशंकित पुष्माली चाहती थी कि वह अपने कथन के प्रमाण में किसी विशिष्ट चमत्कारिक शक्ति का प्रदर्शन करे। अतः

हनुमान ने चार मुख और आठ भुजाओं वाले विशाल शरीर को धारण किया और अपने मुँह[1] फाड़े, उनके चारों मुखों के अंदर से सूर्य, चंद्र और तारों का समूह बहकर बाहर आने लगा। पुष्माली को यकीन हो गया और उसने लंका जाने का रास्ता बता दिया। अप्सरा के विशिष्ट सौंदर्य ने हनुमान को इतना अधिक मोहित कर लिया कि वे अपने आप को उस युवती से प्रेम करने से नहीं रोक पाए, जिसे उसने सहर्ष स्वीकार कर लिया। अपने प्रेम से संतुष्ट होने के बाद हनुमान ने उसे स्वर्ग भेज दिया और इसप्रकार उन्होंने उसके शापित जीवन का सुखद अंत[2] कर दिया। पुष्माली के बताए मार्ग का अनुगमन करते हुए सेना तीव्र गति से बहने वाली विशाल महानदी पर पहुँची जिसने सेना के आगे बढ़ने को रोक दिया। किंतु बाधाएं हनुमान के लिए अर्थहीन थीं। उन्होंने अपनी पूँछ को असाधारण रूप से बढ़ा लिया और दोनों किनारों के बीच में रख दिया। इसने मजबूत पुल का काम किया और सारी सेना सकुशल नदी पार कर गई। अंत में वे हेमाटिरन पर्वत के पास पहुँचे जो विशाल और अधीर महासागर को देखा–अनदेखा कर खड़ा था। अभियान बिल्कुल रुक गया। सामने कोई जगह दिखाई नहीं दे रही थी केवल विशाल सागर के जिसने अपना असीमित सीना आकाश की नील वर्ण सीमा से परे तक फैला रखा था।

अब वे क्या करते ? बलशाली हनुमान ने सफलता को उछलती हुई लहरों के हवाले करने के स्थान पर महान सतायु के समान मृत्यु के द्वारा सम्मान प्राप्त करने का अटल संकल्प व्यक्त किया। जैसे ही सतायु का नाम लिया गया, इसने एक जादुई शब्द का सा काम किया। पर्वत के ढाँचे में स्थित निकटवर्ती गुफा में से संबादि नाम का विशाल पक्षी बाहर आया जो सतायु का बड़ा भाई

---

[1]थाईलैंड में रामायण पर आधारित प्रदर्शित चित्रों में हनुमान द्वारा अपनी चमत्कारिक शक्तियों का प्रदर्शन करने वाला चित्र बहुत प्रसिद्ध है।

[2]वाल्मीकि रामायण के अनुसार, हनुमान माया नामक राक्षस द्वारा बनाए गए एक नगर में आए जो ब्रह्मा की कृपा से एक अपार खजाने का स्वामी हो गया था। बाद में वह हेमा नाम की एक स्वर्गिक अप्सरा के प्रेम में पड़ गया जिसके कारण वह इंद्र द्वारा मारा गया। वह नगर बाद में एक पवित्र स्त्री के नियंत्रण में आ गया जिससे बाद में हनुमान मिले और उसने उन्हें लंका का रास्ता बताया।

था, पंखहीन और दिखने में असहाय। जब सतायु इतना छोटा था कि कुछ समझ नहीं सकता था, उस समय एक बार उसने भोर के कोहरे की चादर में से उदित होते लोहितवर्णी सूर्य को देखा। बालक के समान अज्ञानता में उसने इसे एक स्वादिष्ट फल समझा और इसे पाने के लिए उड़ गया। अपने भाई के सामने आने वाले खतरे को भाँपकर संबादि ने उसे अपने फैले हुए पंखों की ओट में ले लिया और सूर्य के कुपित प्रहार को अपने पंखों पर आने दिया। क्षण भर में ही वे जल कर राख हो गए। वे केवल तब ही उग सकते थे, जब राम की सेना द्वारा उसकी तीन बार जय जयकार की जाती। राम की सेना की प्रतीक्षा में उसने निद्राहीन रातें और कष्टपूर्ण दिन बिताए। एक लंबे समय के बाद वे उसके लिए दुख और सुख दोनों ही लेकर आए। उन्होंने उसे उसके भाई की मृत्यु का दुखद समाचार दिया, साथ ही तीन बार जय जयकार करके उन्होंने चेतना और तेज से दैदीप्यमान नए निकले पंखों के साथ उसे विशाल आकाश में ऊँचा उड़ने से मिलने वाला परमानंद प्रदान किया।

कृतज्ञ पक्षी ने हनुमान को अपनी पीठ पर बैठने के लिए आमंत्रित किया ताकि वह उन्हें हेमाटिरन और लंका के मध्य स्थित गंधसिंग्खरा पर्वत पर पहुँचा सके। जब वे वहाँ पहुँचे, संबादि ने निलाकल पर्वत की ओर संकेत किया जो बहुत ऊँचा था और जो द्वीप के नीले आकाश को चूम रहा था।

एक बड़ी छलांग लगा कर हनुमान अपने गंतव्य की ओर उड़ चले। अचानक उनके रास्ते में एक विशालकाय, भयंकर और अभेद्य राक्षसी, जो महासागर की विकराल रक्षक थी और जिसे दसकंठ ने समुद्रतट की रक्षा करने के लिए नियुक्त किया था, उनको आगे बढ़ने से रोकने के लिए रास्ते में खड़ी थी। हनुमान तेजी से उसके मुँह में घुस गए और उसके पेट को फाड़कर उसकी आंतें बाहर निकाल लाए। वह राक्षसी अब केवल समुद्र और उसके असंख्य जलचरों का ग्रास बनने के लिए जमीन पर निर्जीव पड़ी थी।

छलांग का आवेग हनुमान को निलाकल पर्वत से बहुत आगे ले गया और उन्हें सोलाश पर्वत के शिखर पर जाकर छोड़ा, जहाँ नारद ऋषि की कुटिया थी। हनुमान ने उनसे एक रात बिताने हेतु आश्रय के लिए निवेदन किया। उन्हें एक कुटिया दिखाई गई जहाँ पर वे एक रात बिता सकते थे।

नारद ऋषि की अलौकिक शक्तियों को जानने के लिए जिज्ञासु हनुमान ने अपने शरीर का इतना विस्तार कर लिया कि कुटिया इतनी छोटी लगने लगी कि वे उसमें नहीं आ सकते थे। सर्वशक्तिमान ऋषि ने एक बड़ी कुटिया का निर्माण कर दिया, किंतु हनुमान का शरीर उससे भी अधिक बड़ा हो गया। अंत में उनको सबक सिखाने के लिए ऋषि ने इतनी अधिक ठंडी बारिश करवा दी कि उस जैसे बलशाली वानर को भी सिकुड़कर मूल रूप में आना पड़ा। ऋषि तब उनको काँपते हुए कुटिया में छोड़ गए और एक तालाब पर पहुँचे जहाँ उन्होंने एक लकड़ी को जोंक में बदल दिया।

दिन निकलने पर बिना किसी संदेह के हनुमान तालाब पर प्रातः दैनिक प्रक्षालन के लिए गये। जैसे ही उन्होंने इसके ताजे पानी में डुबकी लगाई, जोंक उनकी ठोड़ी से चिपक गई। व्यग्र हो उन्होंने उसे पकड़कर खींचना शुरु कर दिया। लेकिन जितना ज्यादा वे खींचते, वह चमत्कारिक जोंक उतनी ही ज्यादा चिपचिपी और लचीली होती जाती। अंत में उनके मन में विचार आया कि यह उनकी धृष्टता का परिणाम है। सच्चा प्रायश्चित करते हुए हनुमान ऋषि की ओर दौड़े और क्षमा याचना की। जौंक तुरंत नीचे गिर गई।

वानर

अध्याय 24

हनुमान की सीता से भेंट। लंका–दहन

हनुमान ने अपने मेजबान से औपचारिक विदाई ली और लंका की ओर चल पड़े। एक दूसरी बहुत ऊँची वानरी छलांग लगा वे बड़ी आसानी से निलाकल पर्वत पर पहुँच गए। चार मुख और आठ हाथ वाले नगर–पहरेदार ने उनका विरोध किया, जिसे मौत के घाट उतारते हुए वे राक्षस के रूप में लंका में प्रवेश कर गए। शाम का समय था, साहपति ब्रह्मा की सृष्टि पर अंधकार का आवरण छा गया। हनुमान ने रात के आवरण का लाभ उठाया, सभी लोगों को गहरी नींद के वश में कर दिया और बहुत शीघ्र मिलने वाली सफलता की आशा भरी खुशी के साथ अंततः उन्होंने दसकंठ के महल में प्रवेश किया। किंतु अफसोस, वहाँ निराशा ही हाथ लगी। वे एक राजमहल से दूसरे राजमहल में छलांग लगाते गए, एक कमरे से दूसरे कमरे में घूमते रहे और हर जगह का कोना–कोना छान मारा, किंतु उनकी चौकन्नी निगाहों को सीता कहीं दिखाई नहीं दीं।

निराशा में सिर झुकाए वे नारद के पास वापस आए और उनसे राय मांगी। जानकारी पाकर उन्होंने छोटे वानर का रूप धारण कर एक रमणीय बगीचे में प्रवेश किया। वहाँ पर उनकी खोज का लक्ष्य था–असहाय सीता, किंतु वैसे ही अस्पष्ट जैसे काले–घने बादलों के पीछे छिपा हुआ पूर्णमासी का चाँद।

बगीचे की ठंडी छाया में दिन का प्रकाश अब भी विद्यमान था और हनुमान को तब तक छिपे रहना था जब तक अंधेरा नगर को चारों ओर से ढक न लेता। शाम होने पर दसकंठ अपनी सारी अनैतिक क्रूरता के साथ नारायण की पत्नी का मन जीतने के लिए वहाँ आया। लुभावने अंदाज में उसने उनसे प्रणय निवेदन किया। किंतु एक शुद्ध एवं निष्ठावान हृदय को प्रलोभन आकर्षित नहीं करता। दसकंठ को पहले से कहीं अधिक क्रुद्ध हो कर वापस लौटना पड़ा।

अब सीता की सहिष्णुता अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी थी। अपने प्रिय पति से काफी दूर होने के कारण उन्हें लगातार पापपूर्ण प्रलोभनों का सामना करना पड़ रहा था। अंततः उन्होंने अपने दुखी जीवन का अंत करने का मन बना लिया। ज्यों ही उनके मन में यह विचार आया, वे एक निर्जन पेड़ के पास गईं और अपने को फांसी पर लटका लिया। भौंचक्के हनुमान, जिन्होंने कभी सोचा भी न था कि सीता अपनी जान भी ले सकती हैं, तुरंत पेड़ पर चढ़ गए और गांठ को ढीला कर दिया। उनके पूरे शरीर में खुशी की लहर दौड़ गई, जब उन्होंने सीता को जीवित पाया। उन्होंने अपना परिचय दिया और उन्हें बताया कि किसप्रकार राम लंका पर चढाई करने और उन्हें छुड़ाने की तैयारी कर रहे हैं।

जब सीता उनकी सच्चाई से संतुष्ट हो गईं, उनके उदास गालों पर खुशी की अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। निराशा की लंबी रात के बाद यह आशा की पहली किरण थी। नियति के प्रति आश्वस्त, राम का बाण उसके अपहरणकर्ता का खून पीने आ रहा था, चाहे वह अजेय ही था। हनुमान उसे अपनी हथेली पर बैठाकर ले जाना चाहते थे, लेकिन उन्होंने उनकी यह बात नहीं मानी। एक बार दसकंठ द्वारा ले जाए जाने पर उनका जीवन काफी बदनाम हो चुका था। वे किसी दूसरे पुरुष द्वारा ले जाए जाने के कारण अपने जीवन को और अधिक बदनाम नहीं होने देना चाहती थीं क्योंकि ऐसा करने से पहले से हो चुकी बदनामी में और अधिक वृद्धि होती। वे राम के लिए जिएंगी, उस आशा की किरण के साथ जो हनुमान द्वारा उसके निराश हृदय में प्रज्ज्वलित की जा चुकी थी। तब हनुमान ने उनसे अनुमति ली और हेमाटिरन जाने के लिए तैयार हो गए। किंतु उस नगर से जाने से पहले वे अपने कुछ निशान पीछे छोड़ना चाहते थे। इसलिए दसकंठ के प्रिय पेड़ों को जड़ से उखाड़ते हुए उन्होंने उसके सुंदर बगीचे को तहस–नहस कर डाला। हिंसा के इस अचानक हुए विस्फोट के कारण राक्षसी सेना उनको वश में करने के लिए पहुँची किंतु उसके स्थान पर उसे केवल मृत्यु ही प्राप्त हुई। सहस्सकुमार, दसकंठ के हजार पुत्र भी कुछ अधिक अच्छा न कर सके। अंत में इंद्रजीत आया जो देवताओं के राजा का यश निष्प्रभ कर चुका था। राक्षसों की शक्ति को जाँचने के उद्देश्य से

हनुमान ने स्वयं ही अपने को इंद्रजीत से बंधवा लिया और लंका के राजा के सामने ले जाए गए। वीरता के ऐसे प्रदर्शन से प्रसन्न, दसकंठ उन्हें अपना एक सैनिक बनाना चाहता था। लेकिन हनुमान ने कहा कि उनके शरीर को पीट–पीट कर काला–नीला करने पर भी, उन्हें दास जीवन की अपेक्षा मृत्यु अधिक स्वीकार्य होगी। क्या वे उसके शरीर को तेल में डुबोए कपड़े से बांधेंगे और उसमें आग लगाएंगे? बिना किसी संकोच और बिना किसी देरी के राक्षसों ने उनकी प्रार्थना को स्वीकार कर लिया और कुछ ही समय में हनुमान का पूरा शरीर जलने लगा। विशाल पर्वत के समान हनुमान चारों ओर से निकलती तेज लपटों के साथ उठ खड़े हुए। जोर के झटके के साथ उन्होंने अपने सारे बंधन तोड़ दिए और लंका की सड़कों पर दौड़ने लगे। एक छत से दूसरी छत पर छलांग लगाते हुए वायुपुत्र हनुमान अपनी जलती पूँछ को घुमाते रहे और सारे सुंदर शहर को आग लगा दी। एक महल से दूसरे महल तक, एक घर से दूसरे घर तक भीषण लपटें ताण्डव करती रहीं और स्वर्णनगरी को नष्ट कर धराशायी कर दिया।

अपनी पूर्ण संतुष्टि के साथ लंका को जलाने के बाद हनुमान ने समुद्र में अपने शरीर को ठंडा किया। लेकिन उनकी पूँछ में अभी भी आग लगी थी, किसी पानी से उसकी आग न बुझ सकी। परेशान हो उन्होंने नारद से सलाह मांगी जिनको यह जानकर आश्चर्य हुआ कि वानर इतना अनजान है कि उसे अपने 'छोटे कुंए' का प्रयोग करना नहीं आता। हनुमान उनका तात्पर्य समझ गए और अपनी पूँछ को अपने मुँह में डाल लिया। आग पल भर में बुझ गई। उसके बाद हनुमान हेमाटिरन पर वानर दल के पास वापस लौट आए और अपने साहसिक कार्य का वर्णन किया। खुशी और उल्लास से उछल–कूद करते हुए, राम को इस शुभ समाचार से अवगत कराने के लिए वे गंधमास की ओर चल दिए। राम ने जब हनुमान के इस वीरतापूर्ण कार्य के बारे में सुना, वे बहुत व्याकुल हो गए क्योंकि इससे सीता को नुकसान पहुँच सकता था जो अभी भी दुश्मन के कब्जे में थी। उनकी आज्ञा का उल्लंघन करने के कारण हनुमान को फटकारा गया। किंतु उनके पास सफाई के लिए तर्क था कि उन्होंने अपने

परिचय को उजागर नहीं किया था और इसलिए दसकंठ इस तथ्य से अनजान था कि वे राम के दूत थे।

सेना ने तब लंका के लिए कूच किया और सही समय पर उफनते हुए उस समुद्र के किनारे अपना डेरा डाल लिया जिसने राक्षसों के देश को चारों ओर से घेर रखा था।

हनुमान

अध्याय 25

दसकंठ का स्वप्न। राम के प्रति बिभेक की श्रद्धा

आने वाले खतरे से अनभिज्ञ दसकंठ आनंदमग्न हो शांतिपूर्वक विश्राम कर रहा था। निस्संदेह, अग्निकांड ने लंका के सुंदर नगर को नष्ट कर दिया था, किंतु जिसकी सेवा देवता करते हों और राक्षस पूजा करते हों, उसके लिए हनुमान के आग्नेय प्रदर्शन से लगे काले निशानों को मिटाना बिल्कुल भी कठिन नहीं था। अतः लंका पहले से भी अधिक सुंदर और आलंकारिक ढंग से पुनर्निमित की जा चुकी थी। अब दसकंठ इतना खुश और अहंकारी हो गया जितना वह हो सकता था।

उसके बाद एक रात आई जब उसकी शांतिपूर्ण नींद में अचानक एक भयानक स्वप्न लगातार बना रहा। दसकंठ ने स्वप्न में देखा–आकाश के बीचोंबीच दो गिद्धों के मध्य एक भयंकर युद्ध छिड़ गया जिनमें एक काला था जो पश्चिम से आया था और एक सफेद, जो दक्षिण से। अंत में काला गिद्ध नीचे गिर कर मर गया और अपने आप ही एक विचित्र राक्षस के रूप में बदल गया। उसके बाद एक दूसरा दृश्य उसके स्वप्न में आया। उसने सपना देखा कि उसने एक नारियल के खोल में कुछ तेल डाला और उसमें बत्ती रख दी और उस अनोखे दीपक को अपनी हथेली पर रख लिया। अचानक तेजी से एक औरत आई और उसने बत्ती को जला दिया। लपट ने उस पूरे दीपक को जलाकर नष्ट कर दिया और वह उसकी हथेली तक पहुँच गई। जलने की अनुभूति उसके संपूर्ण शरीर में होने लगी। चौंककर और भयभीत होकर दसकंठ जाग गया। उसकी बीसों आँखों में एक अज्ञात भय साफ–साफ दिखाई दे रहा था।

उस समय अंधकार विलीन होकर स्वर्णमय हो रहा था। भयभीत दसकंठ ने बिभेक को बुलवाया और उससे स्वप्न का ज्योतिषीय स्पष्टीकरण पूछा। बिभेक ने व्याख्या की कि काला गिद्ध दसकंठ का प्रतीक और श्वेत राम

का प्रतीक था। राम ने दसकंठ को हरा दिया। नारियल के खोल का अर्थ था लंका, तेल का अर्थ था दसकंठ का वंश और बत्ती का अर्थ था उसका जीवन। स्त्री जिसने दीपक जलाया, वह सम्मानखा थी और सीता लौ थी जिसने सबको नष्ट कर दिया और पीछे कुछ भी नहीं छोड़ा। स्वप्न ने नक्षत्रों के दुष्प्रभाव के कारण दसकंठ के जीवन पर मँडराती भीषण आपदा की भविष्यवाणी कर दी है। ज्योतिष विज्ञान इस दुष्प्रभाव का कोई भी निराकरण नहीं कर सकता। राम को सीता लौटाना और उनसे क्षमा याचना करना ही इसका एकमात्र उपाय है।

जैसे मरणासन्न दवाई को मना कर देता है वैसे ही सनकी सलाह को। बिभेक की नेक सलाह ने केवल उसके क्रोध को ही भड़काया। बिभेक की हिम्मत कैसे हुई कि वह राम की तुलना में उसे छोटा समझे? उसके सामने दुश्मन की प्रशंसा करने का उसका साहस कैसे हुआ? क्रोध से भरे दसकंठ ने बिभेक को लंका से निर्वासित कर दिया और उसकी पत्नी त्रिजटा को सीता की सेवा के लिए भेज दिया।

अपने देश और परिवार से निकाल दिये जाने पर बिभेक वानर सेना में पहुँचे और राम से मित्रता कर ली। लेकिन सुग्रीव की सेना को देखकर वे कम भौंचक्के नहीं हुए। वानरों को उन राक्षसों से लड़ाई करनी थी जिनके स्वामी से देवलोक का स्वामी भी डरता है। क्या वे उतने शक्तिशाली हैं जितने हनुमान? अधिक आशावादी न होते हुए उन्होंने अपनी शंकाएं सुग्रीव के सामने व्यक्त कीं जिसने तुरंत वानरों को अपनी–अपनी शक्ति प्रदर्शित करने का आदेश दिया।

तब शक्ति का महाप्रदर्शन शुरु हुआ जिससे महान शूरवीरों के दिल भी थम गए। कुछ ने पर्वतों को जोर से टक्कर मारी, उन्हें जड़ से उखाड़ लिया और अपनी हथेलियों पर थाम लिया। कुछ ने शीघ्रता से सूर्य को ढक दिया और संसार को अंधकार में डूबो दिया। कुछ ने समुद्र के पानी को जल्दी से खींचकर उसे पूरी तरह सुखा दिया और कुछ ने ऐसा प्रचण्ड तूफान ला दिया और ऐसी भीषण गर्जना की कि मानो संसार के अंत की घोषणा कर रहे हों।

उस बड़े युद्धाभ्यास का कोलाहल समुद्र को पार कर राजा दसकंठ के पास पहुँच गया। दस मुख वाले राजा के बीसों कान खड़े हो गए। यह कैसा कोलाहल था जिसने लंका के शांत वातावरण को भंग कर दिया? क्या मृत्यु ने प्रलय की सूचना दे दी ? क्या संसार अपने विनाश की कगार पर आ चुका? उसके मंत्रियों ने उसे बताया कि यह राम की विशाल सेना का कोलाहल है। क्या यह वास्तव में एक बलशाली सेना है अथवा खोखला ढोल? इसलिए उसने शुकसार नामक एक राक्षस को शत्रु की जासूसी करने और अपनी खोज का विवरण देने के लिए कहा। उसने बाज पक्षी का आकार धारण किया और राम के शिविर की ओर उड़ गया। वहाँ पहुँचकर उसने एक वानर का रूप धारण किया और सरलता से वानरों के दल में घुलमिल गया। फिर भी बिभेक की पारदर्शी दृष्टि से वह न बच सका। उन्होंने हनुमान को इसके बारे में बताया। तुरंत उस विशाल वानर ने अपनी हथेली को इतना बड़ा कर लिया कि मानो कोई विशाल टेंट हो और पूरी सेना को उससे ढक दिया। एक एक करके वानर उनकी अंगुलियों में से गुजरने लगे। अंत में शुकसार[1] अपने वानरी स्वरूप में आया। लेकिन अन्य वानरों की तरह न तो उसकी कोई छाया थी और न ही उसने कोई पलक झपकाई। इसलिए वह आसानी से पकड़ में आ गया। उसे पीटा गया, उसकी त्वचा को गोदा गया और फिर अपने कलंक का वृतांत अपने राजा को बताने के लिए छोड़ दिया गया।

अपने सेवक की असफलता के बाद दसकंठ स्वयं ही एक तपस्वी का वेश धारण कर वहाँ पहुँचा। उसकी पवित्र वेशभूषा के कारण उसे राम से सम्मान और आतिथ्य प्राप्त हुआ। लेकिन बिभेक जानते थे कि वह कौन है, किंतु वे एक शब्द भी न बोल सके, क्योंकि वे अपने भाई की माया द्वारा गूंगे बना दिये गये थे। दसकंठ का एकमात्र उद्देश्य था, राम को सलाह देकर उस मार्ग से हटाना जिस पर वे चलने वाले थे। किंतु उसका अयुध्या के राजकुमार को समझाना–बुझाना व्यर्थ ही गया क्योंकि वे पीछे हटना नहीं जानते थे। दसकंठ घबराया हुआ और विषादग्रस्त वापस लौट गया।

---

[1]वा. शुक और सारन।

चूंकि वह कपटभरी योजनाएं बनाने में तो दक्ष था ही, घर आने पर उसे एक कपटभरी योजना सूझी। उसने बिभेक की पुत्री बेनजाकया[2] को सीता का रूप धारण करने और मृतक होने का ढोंग करते हुए शत्रु के शिविर के पास नदी में तैरते रहने को कहा।

दिन निकलने पर राम वहाँ रोजाना की तरह स्नान करने आए। वहाँ उनकी दृष्टि मृत मायावी सीता पर पड़ी। उन्होंने अपने हृदय में अवर्णनीय दुख की जकड़न महसूस की जो उन्हें भीचंकर लगभग मृत्यु के करीब ले आई। उनका विलाप लक्ष्मण को वहाँ खींच लाया और दोनों भाई शोक मनाने लगे। यह उनकी यात्रा का अंत है! बहुत सारे संकटों से वे गुजरे, बहुत सारे जंगलों को उन्होंने पार किया, केवल सीता को इस दयनीय जल समाधि में पाने के लिए, उसके शरीर को पात्र के स्थान पर विदेशी धरती के इस खाली वातावरण में रखे हुए देखने के लिए, कोई बंधन नहीं, केवल असीमित नीली उछलती हुई लहरें उसे अंतिम विदाई देने के लिए थीं, कोई छाता नहीं, केवल जंगल के पेड़ों की फैली हुई शाखाएं उनकी मृत्यु शैया को आदर प्रदान करने के लिए थीं।[3] इस विचार ने उनके दिलों को तोड़ दिया और वे अविराम विलाप करते रहे।

बाद में हनुमान, बिभेक और अन्य सेनापति वहाँ आए। हनुमान को देखते ही राम का दुख क्रोध में बदल गया। उन्होंने सोचा कि यह धृष्ट वानर ही इस विपत्ति की जड़ है। अब दसकंठ ने सीता का जीवन लेकर उसकी लंका जलाए जाने का बदला ले लिया है।

इसी बीच हनुमान तैरती हुई लाश को ध्यानपूर्वक देख रहे थे। एक मृतक शरीर कैसे तैर सकता है जिसका अभी तक विघटन नहीं हुआ और नदी के प्रवाह के विपरीत कैसे दक्षिण दिशा में स्थित शिविर तक आ सकता है?

---

[2]नंद।

[3]थाईलैंड में राजसी अंतिम संस्कार का बहुत अच्छा वर्णन।

उन्होंने अपनी शंकाएं व्यक्त कीं, आशा की एक हल्की–सी किरण वहाँ सबके चेहरों पर चमक ले आई। इसलिए उसे एक चिता पर रखा गया। मायावी सीता, बेनजाकया ने चीखते हुए अपने रूप में आकर आकाश की ओर छलांग लगा दी, पर पवन पुत्र हनुमान उसे नीचे ले आए। सुग्रीव द्वारा कोड़े लगाने पर उसने अपनी पहचान उजागर कर दी। यह जान लेने पर कि बिभेक उसके पिता हैं, राम ने बिभेक पर ही उसका फैसला छोड़ दिया। धर्मपरायण राक्षस ने एक न्यायाधीश के सामने एक पिता को अस्वीकार कर दिया और घोषणा की कि एक जासूस केवल मृत्युदंड के ही योग्य होता है। राम बिभेक का न्याय देख, प्रसन्न हो गए। पुस्कारस्वरूप उन्होंने उसे मुक्त कर दिया और हनुमान से लंका तक उसके साथ जाने के लिए कहा। रास्ते में वायु के प्रतापी पुत्र ने उसके सामने मधुर और दिलासा भरे शब्दों में अपने प्रेम को व्यक्त किया। फलस्वरूप बेनजाकया के लंका तट पर पहुँचने से पहले उन्होंने उसे पूरी तरह से अपना बना लिया। नियति निर्धारित भविष्य में उसे उनके पुत्र असुरफद की माँ होना था।

अध्याय 26

सेतु का निर्माण। लंका की किलाबंदी

अब, इस पर सहमति बन चुकी थी कि समुद्र पर सेतु का निर्माण किया जाना चाहिए। तुरंत वानर निलाबद और हनुमान के चारों तरफ एकत्रित हो गए और असीमित को सीमित करने का महान कार्य शुरु हो गया। लेकिन, इसने निलाबद को हनुमान द्वारा उसके चाचा जम्बू के प्रति किए गए अन्याय का बदला लेने का सुनहरा मौका दे दिया। उसने इतनी सारी चट्टानें एकत्रित कीं जितनी वह कर सकता था और उन्हें वह नीचे हनुमान के पास फेंकने लगा जो उन्हें पकड़नी थीं और सही स्थान पर रखनी थीं। लेकिन निलाबद का एकमात्र उद्देश्य हनुमान से किसी तरह झगड़ा करना था। इसलिए उसने चट्टानों को इतनी तेजी से फेंकना शुरु किया कि उसके साथ तालमेल बनाए रखने के लिए वास्तव में हनुमान को असाधारण फुर्ती की जरूरत थी। किंतु वे शांत रहे, उस पल का इंतजार करते हुए जब वे उसे एक अच्छा सबक सिखा सकें।

कुछ समय बाद उन्होंने अपने कार्य आपस में बदल लिए। अब, उन्होंने अपने शरीर के हर एक बाल से एक विशाल चट्टान बाँधी और उन्हें फुर्ती से पकड़ने के लिए निलाबद को पुकारा। किंतु यह उसकी सामर्थ्य से बाहर था। परिणामस्वरूप कहासुनी के बाद वे आपस में बुरी तरह से भिड़ गए। शोरगुल राम के पास पहुँचा। कितना उत्तेजक नजारा था देखने में यह, दो सेनानायकों का आपस में ही लड़ना और सेना के सामने एक गलत उदाहरण प्रस्तुत करना! इसलिए उन्होंने दोनों को ही दण्डित किया। निलाबद को सुग्रीव का प्रतिशासक बना कर और सेना के लिए खाद्यसामग्री की पूर्ति करने का दायित्व सौंप कर खिडकिन वापस जाने का आदेश दिया, जबकि हनुमान को सात दिन के अंदर सेतु का काम समाप्त करने की आज्ञा दी।

हनुमान ने जी तोड़ काम किया। चट्टानों के समुद्र में फेंके जाने से जबरदस्त हलचल और शोरगुल होने लगा। यह दसकंठ के चिंताग्रस्त कानों तक पहुँचा जिसने उसकी रातें बेचैनी से भर दीं। अतः उसने निर्माण कार्य को बाधित करने के बारे में सोचा। उसने अपनी मत्स्य कन्या सुवर्नमच्छा को अपनी सेना के साथ जाने और सेतु के निर्माण में प्रयुक्त चट्टानों को ले जाने का आदेश दिया।

जागरुक हनुमान ने अपने द्वारा सावधानीपूर्वक रखी चट्टानों को सागर की अथाह गहराई में लुप्त होते हुए देखा। तब दृढ़ निश्चय के साथ वायुपुत्र ने नीचे डुबकी लगाई, सुवर्नमच्छा को काबू में किया, उसको और उसकी सेना को चट्टानों को अपनी जगह पुनः रखने के लिए विवश किया। सदा की तरह नारीभक्त हनुमान ने इस अवसर का लाभ उठाकर उस सुंदर मत्स्य कन्या के समक्ष प्रणय निवेदन किया जिसने अपनी तरफ से उनके प्रेम का तुरंत उत्तर दिया। अतः जब वह अपने पिता के पास अपनी असफलता की सूचना देने वापस लौटी, उससे पहले ही वह हनुमान के मच्छानु[1] नामक मत्स्य वानर बच्चे की माँ बन चुकी थी, जिसको उसने अपने गर्भाशय से उल्टी कर बाहर निकाला और देवताओं से उसकी सुरक्षा की प्रार्थना कर दसकंठ के भय से उसे समुद्र के किनारे छोड़ दिया। अब मजबूत और विशाल सेतु तैयार था जो अपनी मजबूत चट्टानों से नीले पानी को बांधे हुए था। इस शुभ अवसर पर इंद्र ने मातलि द्वारा संचालित अपना रथ राम को भेंट किया। तत्पश्चात् सारी सेना ने समुद्र को पार किया और लंका के किनारे पहुँच गई। घने वृक्षों से ठंडे और ताजे पानी के स्त्रोतों से सींचे गए एक मखमली भूखंड ने सेना को वहाँ शिविर लगाने के लिए आकृष्ट किया। यह एक मायावी

---

[1]वाल्मीकि रामायण में न तो सुवर्णमच्छा का और न ही मच्छानु का वर्णन है।

वन था जहाँ कोई पक्षी न तो मधुर गीत गा सकता था और न ही रसदार फलों को खा सकता था। वन भानुराज के सिर पर टिका हुआ था, जो एक विचित्र राक्षस था और जिसे दसकंठ ने आज्ञा दी थी कि वह सेना को मायावी भूखंड पर अपना शिविर लगाने के लिए आकृष्ट करे और जैसे ही सेना अपना शिविर लगा ले, वह भूखंड को अपने सिर से लुढ़का दे ताकि वे जमीन द्वारा निगल लिए जाएं। किंतु हनुमान के समान होने के लिए एक अधिक बुद्धिमान भानुराज की आवश्यकता थी। हनुमान जमीन के अंदर गए और उसका अंत कर दिया। सेना की सुरक्षा को पूरी तरह से सुनिश्चित कर लंका को घेर लिया गया।

तब राम ने अंगद को दसकंठ के पास इस चेतावनी के साथ भेजा कि या तो वह तुरंत सीता को उन्हें सौंप दे अथवा युद्ध करे। अनेक राक्षसों को, जिन्होंने उसका सामना किया, मारने के बाद वह दसकंठ के दरबार में पहुँचा। लेकिन दसकंठ के दरबार में राम के दूत के बैठने के लिए कोई स्थान नहीं था। अविचलित अंगद ने अपनी पूंछ लम्बी की और वह उसकी तब तक कुंडली बनाता रहा जब तक वह दसकंठ के सिंहासन जितनी ऊँची न हो गई। इस विचित्र स्थान पर बैठने के बाद, उसने तीखे शब्दों में अपना संदेश सुनाना शुरु किया। उसने दसकंठ के क्रोध की लपटों को इस हद तक भड़का दिया कि उसने अपने चार सेनानायकों को उसे तुरंत मारने का आदेश दे दिया। लेकिन अंगद उनके लिए अकेला काफी था। उसने अकेले ही उन सबको मार दिया और दूत कार्य के परिणाम को सूचित करने के लिए वापस शिविर में लौट आया।

क्रुद्ध दसकंठ ने अब स्वयं सेना को भ्रमित कर उसके सर्वनाश का निश्चय किया। उसके पास ब्रह्मा का दिया एक चमत्कारिक छाता था। जब कभी यह छाता खोला गया, इसने सूर्य को आच्छादित कर लिया और सारे संसार को अंधकार में डुबो दिया। इस छाते को खोलकर उसने लंका के चारों ओर अंधकार का एक आवरण बना दिया तथा उसे राम और उनकी वानर सेना की आँखों से ओझल कर दिया। किंतु सेना के प्रमुख सुग्रीव को सरलता से बहकाया नहीं जा सकता था। उसने आकाश में छलांग लगाई, जादुई छाते के टुकड़े–टुकड़े किए और राक्षसों को आवरणरहित, स्पष्ट और प्रकाशमान कर दिया। अपने शिविर में लौटने से पहले उसने अपने पैरों से दसकंठ के सिर के

मुकुट को झपट लिया और इसे राम को अहंकारी और शक्तिशाली लंका के राजा से प्रथम मुकाबले के स्मृति–चिन्ह के रूप में अर्पित कर दिया।

हतोत्साहित, किंतु विचारमग्न दसकंठ अपने महल वापस लौट आया। वह अब समझ चुका था कि लंका की लगभग अभेद्य घेराबंदी हो चुकी है। यदि वह शत्रु को पराजित करना चाहता है तो उसे दूसरी युक्ति का सहारा लेना चाहिए।

मच्छानु

अध्याय 27

राम का अपहरण। मैयराब का वध

महल के ठंडे और सुहावने वातावरण में दसकंठ को एक अच्छा विचार सूझा। उसने मारीश के पुत्र वैयाविक को पाताल भेजकर साहमालिवान के पौत्र, महायाम के पुत्र मैयराब को बुलबाया। मैयराब उस समय पाताल का राजा था और एक भयानक राक्षस था। अपने गुरु सुमेध मुनि से उसने सारा धार्मिक ज्ञान और युद्ध कौशल प्राप्त किया था। सुमेध अपने शिष्य से इतने प्रसन्न थे कि उन्होंने मैयराब की आत्मा को उसके शरीर से निकाल कर और उसे एक मधुमक्खी के रूप में बदल कर त्रिकूट पर्वत पर छिपा दिया था। इसने उसे वस्तुतः मृत्यु से प्रतिरक्षित कर दिया और उसे अमरता का परम सुख प्रदान किया। ऐसे में व्याकुल दसकंठ ने अभेद्य मैयराब से सहायता मांगी।

इस समय उसके पास एक जादुई पाउडर था जिससे वह किसी को भी नींद में सुला सकता था। उसने वह पाउडर और एक फुंकनी ली और वानरों के शिविर में पहुँच गया। यद्यपि वह सचेत था, तथापि वह सावधान बिभेक से बच नहीं सका। उनकी पारदर्शी आंखों ने उन्हें आने वाले खतरे को दिखा दिया। अतः मैयराब जब शिविर के पास पहुँचा, उसने सेना को किसी भी संकट का सामना करने में पूर्णतया तैयार पाया। हनुमान ने अपना शरीर पहले से ही ब्रह्मा के समान बड़ा कर रखा था और राम उनके अगाध मुख में पूरी तरह से सुरक्षित थे। लेकिन उनकी सारी सतर्कता मैयराब की चमत्कारिक शक्ति के आगे निष्फल हो गई। वानरी स्वरूप धारण कर वह वानरों में आसानी से घुलमिल गया और उसे यह पता चल गया कि बिभेक ने उन सभी को आने वाले खतरे के प्रति सावधान कर दिया है जो उसकी भविष्यवाणी के अनुसार प्रातःकाल की पहली किरण के साथ ही समाप्त होना था।

अब मैयराब के पास एक रहस्यमय फुंकनी थी। जल्दबाजी में सेना को छोड़कर वह पर्वत के शिखर पर चढ़ गया और फुंकनी को उठाया।

तुरंत चमकीला आकाश भोर के सितारों के साथ एक चांदी सदृश मंद प्रभा वाले शांत समुद्र के समान हो गया। वानरों ने प्रसन्न होकर सोचा कि रात गुजर गई है जिसके साथ संकट की सभी संभावनाएं समाप्त हो गई हैं। इसलिए उन्होंने रात में चैन से आराम करने के लिए अपनी सतर्कता ढीली कर दी।

तत्पश्चात् मैयराब निद्रा–पाउडर के साथ वहाँ पहुँचा और फुंकनी से उसे उड़ाने लगा। धूसर कोहरे की परत ने शिविर को आच्छादित कर लिया और एक एक कर सारे वानर गहरी नींद में डूब गए। सुग्रीव अपने कर्तव्यों के प्रति विस्मरणशील होकर वहाँ निष्क्रिय पड़ा था; हनुमान का विशाल शरीर भी वहाँ निर्जीव–सा पड़ा था और उनके मुख में सीता के जीवनस्वरूप राम अचेत अवस्था में पड़े थे। कभी–कभी सूखी पत्तियों के गिरने और गहरी नींद में होने वाली आवाजों को छोड़कर गहन शांति ने पूरे शिविर पर आधिपत्य जमा लिया। तभी अचानक मैयराब की पदचाप से वह शांति भंग हो गई यद्यपि वह बड़ी ही सावधानी से शिविर में घुसा था। उसने राम को अपनी बाहों में उठाया और तेजी से पाताल को चला गया।

जैसे ही वानरों को होश आया, वे संकट को समझ कर पूरी तरह घबरा गए। लेकिन वहाँ पर बिभेक अदृश्य को देखने के लिए अपने रहस्यमय क्रिस्टल के साथ थे। हनुमान तुरंत बिभेक के बताए हुए रास्ते पर चल पड़े। यह उन्हें चक्र जितने बड़े कमलों से भरे एक तालाब पर ले गया। हनुमान ने उनमें से एक फूल को तोड़ा और उसके खोखले तने में उन्हें दूर तक एक रास्ता दिखाई दिया। वायुपुत्र उस रास्ते से नीचे चले गए और उन्होंने अपने आप को दीवार के सामने पाया जिसकी सुरक्षा सतर्कता से भयानक राक्षसों द्वारा की जा रही थी। उनके प्रहार ने राक्षसों का अंत कर दिया और दीवार के टुकड़े–टुकड़े कर दिए। हनुमान ने अपनी यात्रा पुनः आरंभ कर दी। वे अभी अधिक दूर नहीं गए थे कि उनका सामना एक मदमस्त, जंगली और विशाल हाथी से हुआ। परंतु निरीह पशु जब हनुमान के सामने आया, वह मृत्यु को प्राप्त हो गया।

वानर बहादुरी और सतर्कता से अपने मार्ग पर चलता रहा। शीघ्र ही उसकी यात्रा एक बार फिर धुएं रहित तीव्र लपटों वाले भयानक पर्वत से बाधित हुई। लातों के जोरदार प्रहारों से उसने संपूर्ण पर्वत के टुकड़े–टुकडे कर दिए

और अपने रास्ते पर आगे बढ़ गया। एकाएक वह मुर्गियों जितने बड़े मच्छरों के झुंड से घिर गया। लेकिन जिसका न तो लपटें कुछ बिगाड़ सकीं, न ही हाथी उसे कुचल सका, उसका मच्छर क्या बिगाड़ सकते थे चाहे वे कितने ही बड़े क्यों न थे। हनुमान बिना भ्रम के और बिना थके आगे बढ़ते गए। आगे बढ़ते हुए वे खिले कमलों से आच्छादित दूसरे तालाब पर पहुँच गए और अंत में वे अपने समान क्षमता वाले योद्धा से मिले।

हनुमान का मत्स्य वानर पुत्र मच्छानु इस तालाब की निगरानी कर रहा था। उसकी माता सुवर्नमच्छा द्वारा उसे समुद्र के किनारे छोड़ दिये जाने पर मैयराब ने उसे अपना लिया था और उसका पालन–पोषण किया था। वह एक स्वप्न से प्रेरित हो कर समुद्र के किनारे गया था और उसे वहाँ पड़ा पाया था । तालाब के किनारे आराम से घूमते समय उसने एक विचित्र आकृति को तेजी से उस ओर आते देखा। दृढ़ कदमों से वह घुसपैठिए की ओर तेजी से दौड़ा और उसे ललकारा। पुत्र पिता के सामने था और पिता का सामना अपनी समान क्षमता वाले अपने परिवार के ही सदस्य से हो गया।

लड़ाई के अंत में किसी की विजय न हुई। दोनों ही एक दूसरे की शक्ति और रूपरंग को देखकर आश्चर्यचकित थे जिसके कारण उन दोनों के बीच कुछ आत्मीय संबंध होने की एक धुंधली आशा दिखाई दी। उन्होंने एक दूसरे का परिचय पूछा। तब पिता और पुत्र को एक दूसरे का पता चला। जो बाँहें एक दूसरे का गला दबाने के लिए तनी हुई थीं, अब उन्होंने एक दूसरे को आलिंगन में भर लिया।

इसके बाद हनुमान ने मच्छानु को पाताल आने के अपने उद्देश्य से अवगत कराया। एक वफादार रक्षक मच्छानु अपने पोषक पिता के रहस्यों को उन्हें बताने के लिए स्वयं को राजी न कर सका। परंतु वह अपने जन्मदाता को भी निराश नहीं करना चाहता था। इसलिए दोनों पक्षों से समान व्यवहार करते हुए उसने पहेली में कहा, 'जिस रास्ते से तुम आए हो, वह अब भी उपस्थित है। उसी रास्ते का तुम अनुगमन क्यों नहीं करते हो?'

यह संकेत हनुमान के लिए काफी था। पल भर में ही उन्होंने एक बहुत बड़े आकार वाले कमल को तोड़ा और इसके तने की चौड़ी खोखल में से नीचे चले गए। शीघ्र ही यह रास्ता उन्हें पाताल क्षेत्र में ले गया। वहाँ सबसे पहले उनके कानों में विलाप करती हुई एक औरत का स्वर पड़ा जो पाताल लोक के शांत वातावरण को चीर रहा था। यह मैयराब की बहन बिरकवान थी, जो अपने बेटे के लिए विलाप कर रही थी। उसे एक कड़ाह को पानी से भरने का आदेश दिया गया था जिसमें वैयाविक को राम के साथ खौलते पानी में डालना था। लेकिन कोई भी माँ अपने ही पुत्र को मौत के मुँह में ढकेलने का निमित्त नहीं बन सकती है। इसने उसके असहाय दिल को तोड़ दिया था और वह हताशा में विलाप कर रही थी। लेकिन वह इतनी असहाय थी कि पाताल के राजा की आज्ञा की अवहेलना नहीं कर सकती थी। अश्रुपूर्ण आँखों और दुख से भरे हुए हृदय से वह अपने पुत्र के लिए मृत्यु का जल भर रही थी, जब उसने अकस्मात हनुमान को चोरी से आते हुए देखा। वानर ने उसे सांत्वना दी और उसके पुत्र को बचाने का प्रस्ताव दिया, यदि वह उन्हें उस स्थान पर ले जाए जहाँ राम को गुप्त रूप से कैद किया हुआ था।

वास्तव में उसके लिए यह लगभग एक असंभव–सा काम था क्योंकि उसे एक ऐसे द्वार से गुजरना था जिसकी चौकसी राक्षसों द्वारा सतर्कता से की जा रही थी। उसमें से गुजरने से पहले उसका वजन एक ऐसी सूक्ष्मभेदग्राही तराजू में किया जाना था जो मुश्किल से दिखाई देने वाली वस्तु को भी तौल सकती थी। उसके वजन में तनिक सी भी वृद्धि उसे तत्क्षण मौत के मुँह में ले जा सकती थी। लेकिन हनुमान ने उसकी एक न सुनी और वे उससे उन्हें द्वार पार करवाने में सहायता करने के लिए आग्रह करते रहे। अंत में उसके अंदर का मातृत्व जीवन के प्रति सारे भयों पर विजयी हो गया और वह उनके इच्छित स्थान तक उनका मार्ग दर्शन करने के लिए सहमत हो गई।

इसप्रकार मौत के मुँह से मुश्किल से बची वह, बड़ी प्रसन्नता से उनका मार्गदर्शन करते हुए उन्हें एक लोहे के पिंजरे के पास ले गई जो ताड़ के वृक्षों के बीच बड़ी ही सावधानी से छिपाया हुआ था। वहाँ हनुमान ने राम को उस समय भी गहरी नींद में पाया, उस खतरे से बेखबर जिसमें वे थे। भक्त वानर ने उन्हें अपनी बाहों में धीरे से उठाया और उन्हें अधिक सुरक्षित स्थान पर

ले गए। उसके बाद वे मैयराब के पास पहुँचे जो सभी बुराईयों की जड़ था। उन दोनों के बीच एक भयंकर युद्ध हुआ जिसने पाताल को पूरी तरह हिला दिया। हनुमान ने उस पर जड़ से उखड़े हुए ताड़ के पेड़ों से प्रहार किया, लेकिन राक्षस अब भी घाव अथवा मौत से प्रतिरक्षित था। तब बिरकवान ने उन्हें मैयराब[1] के वरदान से अवगत कराया। जैसे ही उसके मुँह से शब्द निकले, हनुमान ने अपने शरीर को बढ़ा लिया, अपनी लम्बी भुजा त्रिकूट तक फैला दी, मैयराब की परिवर्तित आत्मा वाली मधुमक्खी को पकड़ लिया और उसे कुचल कर मार दिया। जैसे ही मधुमक्खी कुचली गई, वैसे ही लंका के राजा का दुष्ट मित्र मैयराब निष्प्राण और निर्जीव होकर गिर पड़ा। तत्पश्चात् हनुमान ने वैयाविक को पाताल का राजा बना दिया और मच्छानु को उसका निश्चित उत्तराधिकारी बना दिया। तब अपनी सुरक्षित बाहों में राम को लेकर वे शिविर में लौट आए जिससे वानरों में खुशी और राक्षसों में घोर निराशा छा गई। .

[1]वाल्मीकि रामायण में मैयराब का वर्णन नहीं मिलता है। लेकिन बंगाली रामायण में हम महिरावण को पाते हैं। यह बंगाली से लिया गया हो सकता है जैसे कि रावण के दरबार में अपनी पूँछ की कुंडली पर अंगद का बैठना, जो कि बंगाली रामायण में ही

अध्याय 28

कुंभकरण का वध

कुंभकरण

सोने के सिंहासन पर बैठा दसकंठ भय से काँप गया जब मैयराब की मृत्यु की सूचना उस तक पहुँची। अजेयता ने अपनी प्रतिरक्षक शक्ति खो दी, अनश्वर मृत्यु से मिल गया–ऐसा पराक्रम था शत्रु का! अब भी उसके पास कुंभकरण नामक एक भाई था, जिसकी वीरता का कोई मुकाबला न था। अतः मैयराब का बदला लेने के लिए उसने कुंभकरण से राम का सामना करने के लिए कहा। लेकिन वह एक धर्मपरायण राक्षस था जिसे यह उचित नहीं लगा कि सीता को अपने पास रखा जाए और राम से युद्ध किया जाए। उसे वह सब कहने में संकोच नहीं हुआ जो उसने उचित समझा। लेकिन इससे राक्षसराज आग बबूला हो गया। इस पर उसने अपने भाई की अनुचित व्यंग्यबाणों से घोर निंदा की। क्या वह राम के भय से ऐसे सहम रहा है जैसे कोई हिरण शेर की गंध से सहम उठता है? क्या वह अपने शत्रु से ऐसे भयभीत है जैसे कोई कौआ धनुष को देखते ही फड़फड़ाता है? अभी तो मुश्किल से उसने शत्रु का आभास ही किया है कि वह कायर की भांति सहमने लगा। इसप्रकार दसकंठ ने अन्यायपूर्वक उस कुंभकरण की घोर निंदा की जो केवल न्याय के आगे झुकता था। प्राणघातक और अन्यायपूर्ण तरीके से अपमानित होने पर उस सदाचारी

राक्षस ने अपना दुर्जेय भाला लिया और अपने भाई का सम्मान पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए चल पड़ा।

बिभेक ने दूर से अपने भाई को बड़ी ही शूरवीरता से सेना का नेतृत्व करते हुए देखा। बिभेक दोनों हाथ जोड़ते हुए उसके पास पहुँचे, इस विश्वास के साथ कि सच्चाई के प्रति उनके प्रेम के सामने दसकंठ के प्रति उसका प्रेम हार जाएगा। किंतु सदाचारी होते हुए भी वह अपने राजा और देश के विरुद्ध कभी नहीं जा सकता था। उसने बिभेक को बुरी तरह से डाँटा जिसने अपने परिवार से अलग होने का केवल यह एक बहाना बताया कि वह राम की सेवा करने में नारायण के अवतार की सेवा कर रहा है। अपने हाथों से ताली बजाकर और उपहासपूर्ण तरीके से हँसते हुए उसने उसके बहाने को बेतुका बताया। क्या राम वास्तव में नारायण के अवतार हैं? वह उस पर तभी विश्वास करेगा जब राम उसकी एक पहेली को हल कर देंगे जो वह उनसे पूछेगा। 'कौन सा तपस्वी मूर्ख है और कौन सा सीधे दंत[1] का हाथी है? कौन सी औरत धूर्त है और कौन सा पुरुष दुष्ट है?'

राम और उनके वानरों ने अपने मस्तिष्क पर व्यर्थ ही बोझ डाला। पहेली सदा की तरह रहस्यमय ही बनी रही। कोई और उपाय न पाकर कुशल दूत अंगद को राक्षस के पास उस पहेली के अर्थ को बहला–फुसला कर स्पष्ट करवाने के लिए भेजा गया। लेकिन कुंभकरण उससे बहुत अधिक बुद्धिमान था। अंगद के इस बचकाने बहाने से उसे फुसलाया नहीं जा सकता था कि राम ने तो इस पहेली को अपने मस्तिष्क में पहले ही हल कर लिया है और वे अब उसे उसके सही हल के साथ मिलाना चाहते हैं यदि कुंभकरण इसे उजागर कर दे। राम की असफलता का उपहास उड़ाते हुए राक्षस ने हल बता दिया। मूर्ख तपस्वी राम स्वयं हैं, जो इतने मूर्ख थे कि उन्होंने अपनी प्रिय पत्नी को वन में अकेला छोड़ दिया था। सीधे दंत वाला हाथी[1] लंका का राजा है जो अपनी

---

[1]शायद यह रूपक सीधे दांत वाले हाथी के जंगलीपन पर आधारित है।

पत्नी के साथ संतुष्ट नहीं रह पाया, दूसरे की पत्नी के पीछे पड़ गया। लज्जाजनक दिखावटी प्रेम करने वाली सम्मानखा वह धूर्त स्त्री है और अपने राजा और देश से विश्वासघात करने वाला बिभेक वह दुष्ट व्यक्ति है।

इसके बाद सुग्रीव ने अपनी पूरी शक्ति से उसका सामना किया। उसकी दुर्जेयता से परिचित राक्षस ने उसकी शक्ति को खत्म करने के लिए कुछ मायावी चालें चलने की सोची। वह सुग्रीव की वीरता को कम करके आंकने लगा। क्या वह इतना शक्तिशाली है जितना उसने सोचा है? क्या वह हिमवान पर्वत तक उड़ कर जा सकता है, 'रंग' पेड़ को उखाड़ कर ला सकता है और उसके साथ उससे युद्ध कर सकता है? सुग्रीव जो शारीरिक बल में बुद्धि बल से श्रेष्ठ था, सीधा पर्वत की ओर उड़ गया और पलक झपकते ही एक पेड़ को जड़ से उखाड़ कर वापस लौटा। तब दोनों वीरों में युद्ध हुआ। लेकिन पहले से ही थके वानर की उसके साथ कोई बराबरी नहीं थी। बहुत जल्दी कुंभकरण ने उसे अपनी बगल में दबा लिया और लंका की ओर चल दिया।

हनुमान ने वानरराज की दयनीय दशा को देखा। वे तुरंत उसे बचाने के लिए दौड़े। हनुमान को रोक पाने में असमर्थ कुंभकरण को सुग्रीव को आजाद करना पड़ा और खून से लथपथ कटे हुए नाक और कानों के साथ उसे लंका वापस लौटना पड़ा। विजय के द्वार पर हारने के बाद कुंभकरण ने अपने खोए सम्मान को पुनः प्राप्त करने का निश्चय किया। इस समय उसके पास मोक्खशक्ति नामक एक विशेष भाला था, जो अपने शिकार को निश्चित तौर पर मौत की नींद सुला देता था। किंतु इस अस्त्र का प्रयोग करने से पहले इसकी शक्ति को जाग्रत करने के लिए देवताओं का आह्वान करना पड़ता था। इसलिए एक शुभ दिन वह नदी के किनारे गया और आवश्यक अनुष्ठान करने लगा। बहुत जल्दी जलते हुए लोबान और खिले हुए फूलों की सुगंध पूरे वातावरण में फैल गई। भाले को सामने रखकर, गहरे ध्यान में डूबा हुआ कुंभकरण देवताओं का आह्वान कर रहा था। अचानक राक्षस ने अपनी आँखें खोलीं और विक्षुब्ध दिखाई दिया। नदी की ओर से बहने वाली मंद हवा के साथ एक जी मितलाने वाली दुर्गंध उसके यज्ञमंडप की सुगंध को हटाकर पूरे वातावरण में धीरे–धीरे फैल रही थी।

स्वच्छ वातावरण का एक सच्चा प्रेमी वह उसे अधिक सहन नहीं कर सका। वह उठा और इस दुर्गंध का कारण जानने के लिए चारों तरफ देखने लगा। उसकी दृष्टि के सामने जो था, वह एक कुत्ते का सड़ा हुआ शरीर था जो उसके यज्ञमंडप के ठीक सामने आराम से तैर रहा था। एक भूखा कौआ उस शव को खुशी से खा रहा था और उसके प्रत्येक चंचुप्रहार से हर बार एक नई दुर्गंध कुंभकरण के सिकुड़े नासिका छिद्रों में भर जाती थी।

लेकिन यह एक छलावापूर्ण दृश्य था जिसने अनुष्ठान को भंग कर दिया। बिभेक ने अपने क्रिस्टल से वानर सेना का अंत करने के लिए अपने भाई द्वारा अपनाई जाने वाली कार्यविधि को देख लिया था। कहीं बहुत देर न हो जाए, इससे पहले इसे बाधित किया जाना आवश्यक था। तदनुसार हनुमान ने एक कुत्ते के शव का रूप धारण किया और अंगद ने एक कौए का, दोनों धारा के प्रवाह के साथ बहते हुए कुंभकरण के यज्ञमंडप के सामने पहुँच गए और उसके अनुष्ठान में विघ्न डाल दिया। इसप्रकार बाधित किए जाने से भाले की विनाशकारी शक्ति निष्क्रिय ही रही और उसके पास सरल और निश्चित विजय का कोई अवसर न रहा। परंतु कुंभकरण अभी भी निरुत्साहित नहीं था। अगली सुबह, उस विशाल राक्षस ने अपनी मोक्खशक्ति उठाई, यद्यपि वह प्रसुप्त थी और सेना पर टूट पड़ा। लक्षण ने उसका सामना किया। तुरंत ही वह मोक्खशक्ति समुद्रजा की खुशी का अंत करने के लिए हवा में उड़ गई। लक्षण मूर्छित हो गिर गए और उनके साथ ही राम के किले और वानरों की आशा के टुकड़े–टुकड़े हो गए।

किंतु ढहे हुए किले के पुनर्निमाण और टूटी हुई आशाओं को पुनर्जीवित करने लिए अभी बिभेक वहाँ थे। उनके निर्देश पर हनुमान तुरंत सरबाय पर्वत की ओर चल पड़े जहाँ वे जड़ी–बूटियाँ थीं जो लक्षण को पुनर्जीवित कर सकती थीं। लेकिन ये सूर्योदय से पहले ले कर आनी थीं अन्यथा सूर्य की पहली किरण के साथ ही लक्षण के पुनर्जीवन की आशा समाप्त हो जाती। हवा की तेज गति के समान हनुमान आकाश मार्ग से उड़ कर चले गए। आकाश के बीचोंबीच उनकी श्वेत आकृति अचानक गहरे लाल रंग में डूब गई। चौंकन्ने हो उन्होंने सूर्यदेव आदित्य के स्वर्णिम रथ को देखा जिन्होंने नये दिन के आगमन की घोषणा करने के लिए तभी प्रवेश किया था।

लेकिन वह एक ऐसा दिन होता जो आशा के स्थान पर निराशा की सूचना देता। इसलिए वायुपुत्र उस ओर तुरंत तेजी से दौड़े जहाँ वह स्वर्णिम रथ दिखाई दे रहा था और उसे रोकने की कोशिश की, किंतु वे उसकी तीव्र किरणों से झुलस गए। अगले ही क्षण आदित्य को पश्चाताप हुआ जब उसे पता चला कि उनकी किरणों ने, राक्षसों के विनाश में राम का साथ देने वाले उनके प्रिय सहायक को जला दिया है। अतः आदित्य ने वानर के जले हुए शरीर का कायाकल्प कर दिया और उसे चेतना में ले आया। हनुमान ने उससे उस रास्ते पर न चलने की प्रार्थना की जिस रास्ते पर वह चल रहा था। लेकिन मनुष्य के दुख और संताप प्रकृति की दिशा को नहीं बदल सकते। फिर भी, आदित्य ने यहाँ तक अपनी सहमति दी कि वह बादलों के आवरण के पीछे अपनी यात्रा करेगा ताकि दिन रात्रि के समान दिखाई दे।

संतुष्ट होने पर, हनुमान ने अपनी उड़ान दोबारा शुरु की और शीघ्र ही सरबाय पर्वत की चोटी पर चढ़ गए। फिर उन्होंने जड़ी–बूटी के लिए पुकारा, तुरंत नीचे से आवाज आई, 'मैं यहाँ हूँ।' हनुमान नीचे चले गए और दोबारा पुकारा लेकिन इस बार चोटी से आवाज आई 'मैं यहाँ हूँ', हनुमान ऊपर गए और फिर नीचे आए। इसप्रकार जड़ी–बूटियों की भ्रमित करने वाली आवाज का अनुसरण करते हुए हनुमान ऊपर और नीचे, नीचे और ऊपर, दौड़ते रहे।

भ्रमित होने पर उन्होंने अपने शरीर को पर्वत जितना बड़ा किया और इसे अपनी पूँछ से चारों ओर से लपेट लिया। तब, जहाँ कहीं से और जब कभी उन्होंने जड़ी–बूटी की जबाबी आवाज सुनी, तभी एकदम उसे जड़ से उखाड़ लिया। कुछ ही समय में उन्होंने अपनी संतुष्टि लायक जड़ी–बूटियाँ एकत्रित कर लीं। फिर भी एक चीज बाकी बची थी–अयुध्या में बरत की निगरानी में रखा हुआ पाँच नदियों का जल। लेकिन असंभाव्यता हनुमान को कभी पराजित नहीं कर पाई। वे तुरंत अयुध्या की ओर उड़ चले और बड़ी जल्दी वांछित जल लेकर वापस लौट आए। तब दवा भलीभाँति तैयार की गई और दे दी गई जिससे लक्षण का समाप्त होता हुआ जीवन लौट आया और इसने राम और उसकी सेना में नई खुशी और आशा का संचार कर दिया।

वानरों की खुशी का शोर कुंभकरण तक पहुँच गया जिसने उसे और अधिक कृतसंकल्प कर दिया। अब उसने पूरी सेना को बिना किसी को छोड़े मारने का दृढ़ निश्चय किया ताकि बाद में कोई किसी मृत को जीवित करने के लिए न बच सके। इसप्रकार कृतसंकल्प हो उसने अपने शरीर को ब्रह्मा के शरीर जितना बड़ा कर लिया और पर्वत से शत्रु के शिविर की ओर बहने वाली नदी पर लेटकर उसके मार्ग को अवरुद्ध कर दिया। सात दिन तक वह जीवित बाँध की तरह वहाँ लेटा रहा। नदी का पानी पूरी तरह से अवरुद्ध हो गया और वानर शिविर में प्यास के कारण मौत का आधिपत्य हो गया।

बिभेक जानता था कि यह सब कुंभकरण के कारण है, लेकिन उसे यह मालुम नहीं था कि वह राक्षस कहाँ पर लेटा हुआ है? उस स्थान का पता केवल मालिनों को ही था। इसलिए हनुमान ने एक बाज का रूप धारण किया, उड़ते हुए नीचे बगीचे में चले गए, उन मालिनों में से एक को मार दिया और उसका रूप धारण कर लिया। अन्य मालिनों के बीच में मिलकर वे आसानी से वहाँ पहुँच गए जहाँ वह राक्षस पानी के प्रवाह को अवरुद्ध किए हुए लेटा था। जैसे ही वे वहाँ पहुँचे, वे अपने स्वरूप में वापस आ गए और उनके एक भारी प्रहार ने कुंभकरण को अपने पैरों पर खड़ा कर दिया। तुरंत पानी अपनी दिशा में बहने लगा और मंडराती हुई मौत को अपने साथ बहा ले गया। हनुमान का मुकाबला करने में असमर्थ राक्षस बच कर भाग खड़ा हुआ।

अगले दिन उसने फिर वानर सेना पर अपने विशाल भाले से आक्रमण किया। राम ने उसका सामना किया। यह केवल अदम्य ही नहीं बल्कि अभिशप्त कुंभकरण था जिसने राम से युद्ध किया। नारायण के अवतार राम का ब्रह्मास्त्र पराक्रमी राक्षस का खून पीने के लिए निकल पड़ा और प्रहार कर उसे धराशायी कर दिया। इसप्रकार वह अदम्य कुंभकरण फिर कभी न उठने के लिए धरती पर गिर पड़ा और आँख बंद होने से पहले उसके सामने चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा और त्रिशूल[1] लिए और पश्चातापी राक्षस के लिए स्वर्ग का द्वार खोलते हुए राम नारायण के रूप में प्रकट हुए।

---

[1]थाई अवधारणा के अनुसार नारायण कमल के स्थान पर त्रिशूल धारण करते हैं।

अध्याय 29

लक्षण का इंद्रजीत से सामना

कुंभकरण की मृत्यु के पश्चात् राक्षसी सेना का नेतृत्व अब पराक्रमी पिता के पराक्रमी पुत्र इंद्रजीत पर आ गया। उसका जन्म मंडो से हुआ था, पहले वह रणबक्त्र नाम से पुकारा जाता था। उसके पास तीन दुर्जेय अस्त्र थे–ईस्वर से मिला ब्रह्मास्त्र, ब्रह्मा से मिला नागपाश और विष्णु से मिला विष्णूपनाम। एक बार उसने इंद्र की दिव्य प्रतिष्ठा को लज्जास्पद बना दिया था और जिसके कारण उसका नाम इंद्रजीत[1] पड़ गया। ऐसा अदम्य था इंद्रजीत जिसने शेरों द्वारा खींचे जाने वाले रथ पर सवार हो, अब राम और उसकी सेना को ललकारा।

लक्षण उसका सामना करने के लिए आगे आए। एक हिरन शेर के साथ युद्ध करेगा! यह कह इंद्रजीत लक्षण पर हँसा और उसने उसे अपने स्थान पर राम को भेजने की सलाह दी। परंतु जैसे सूर्य जुगनु के लिए था ऐसे ही नारायण का भाई इंद्र के विजेता के लिए था। क्या वह उसका सामना करने की हिम्मत कर पाएगा? और क्या वह लंका के अपराजेय योद्धा का सामना कर पाएगा? उसके धनुष ने अविराम और बिना किसी बाधा के मौत की वर्षा करनी शुरु कर दी। वानरों ने बड़े जोश से उसका सामना किया किंतु वे उसके अचूक बाणों के सामने वैसे ही बह गए जैसे कि भयंकर तूफान के साथ सूखी पत्तियाँ। जमीन पर पड़े हुए वानरों को गिना नहीं जा सकता था, उन्हीं के साथ हनुमान और सुग्रीव भी अशक्त और मूर्च्छित पड़े हुए थे। तब लक्षण वहाँ आए और उन्होंने उसके उस विनाशकारी वेग को रोक दिया जो उनकी पूरी सेना को ही नष्ट कर देने वाला था। दोनों शूरवीरों में युद्ध हुआ, उनके बाण तब तक अग्नि और जल की वर्षा करते रहे जब तक कि वे आगे युद्ध करने लायक न रहे। तब उन्होंने युद्ध विराम किया किंतु विजय किसी को न मिली।

---

[1]शब्द का अर्थ है 'वह व्यक्ति जिसने इंद्र को जीत लिया हो।'

अपने संपूर्ण युद्ध–जीवन में पहली बार युद्ध में बराबरी पर रहे इंद्रजीत ने वापस आने के बाद, अपने बाणों की निष्क्रिय शक्ति को जाग्रत करने के लिए कुंभनीय देवी का यज्ञ करने का निश्चय किया। तदनुसार वह एकांतवास के लिए आकाशगिरि पर्वत पर चला गया और अनुष्ठान आरंभ कर दिया।

लेकिन अब एक समस्या उत्पन्न हो गई। वानर सेना इंद्रजीत की अनुपस्थिति का लाभ उठा कर नगर पर धावा बोल सकती थी। इसलिए दसकंठ ने खर के पुत्र मकरकंठ को बुलवाया और आदेश दिया कि वह शत्रु सेना को उलझाए रखे और आगे बढ़ने से रोके रखे। किंतु मकरकंठ को युद्ध के लिए भेजने का मतलब था उसकी निश्चित मौत। चूंकि अपने पहले जन्म में वह दराबी था इसलिए उसका राम के द्वारा मारा जाना नियतिबद्ध था। इसके बावजूद उस राक्षस ने बहादुरी से युद्ध किया और एक सीमा तक उसने वानर सेना को आतंकित कर दिया। अपने आप को अनगिनत रूपों में बदलते हुए उसने संपूर्ण आकाश पर कब्जा कर लिया, और फिर अग्नि की वर्षा करने लगा जिसने संपूर्ण सेना को भय से विह्वल कर दिया। किंतु अंत में राम के ब्रह्मास्त्र ने उसकी विनाशकारी शक्ति का अंत कर दिया और उसे उसके शाप से मुक्त कर दिया।

अब युद्धस्थल से इंद्रजीत की लंबी अनुपस्थिति ने राम की सेना में शंकाओं और विचार–विमर्श को जन्म दिया। लेकिन बिभेक जानता था कि वह कहाँ पर है और वह किस कारण अनुपस्थित है। उन्होंने राम को बताया कि उसके अनुष्ठान में किस तरह से बाधा डाली जा सकती है। यह काम केवल एक भालू के द्वारा ही किया जा सकता था जो उस पेड़ को तोड़ दे जिसके नीचे इंद्रजीत अनुष्ठान कर रहा था। जंबुवान ने इस कार्य के लिए स्वयं को स्वेच्छा से प्रस्तुत किया और भालू का रूप धारण कर वह तुरंत हवाई मार्ग से वांछित पेड़ की ओर चल दिया।

इंद्रजीत उस समय गहन ध्यान में लीन था। उसके वैदिक मंत्रों के उच्चारण की शक्ति ने सृष्टि के समस्त सर्पों को वहाँ इकट्ठा कर दिया था

और उन सभी ने नागपाश को जहर से स्नान कराने के लिए अपने जहर को उगलना शुरु किया ही था कि तभी अचानक पेड़ गिर कर दो भागों में टूट गया। अचंभित सर्पों ने इसे गरुड़ के पंखों की फड़फड़ाहट समझा और जितना जल्दी हो सकता था वे सभी जमीन के नीचे चले गए। इससे पहले कि राक्षस जंबुवान के बच निकलने का रास्ता बंद करता, वह आकाश में उड़ गया और शिविर में पहुँच गया।

इसप्रकार परेशान हो इंद्रजीत ने अपने बाणों को उठाया, यद्यपि वे निष्क्रिय थे और अपनी सेना का नेतृत्व करते हुए शत्रु का सामना करने के लिए चल दिया।

रास्ते में जाते हुए वह विरुनामुख से मिला जो सेना की एक टुकड़ी का नायक था। इसप्रकार अचानक सेना में वृद्धि हो जाने से उसने उनकी वीरता पर बिना विचार किए वानर सेना पर आक्रमण कर दिया।

लेकिन लक्षण के सामने राक्षस, जिन्होंने उनका सामना किया, ऐसे भयभीत हो गए जैसे शेर के सामने हिरण। एक भयंकर युद्ध के पश्चात् भी विजय दोनों पक्षों के बीच झूल रही थी। तब इंद्रजीत ने विरुनामुख को सलाह दी कि वह लक्षण और उनकी सेना को चकमा देने के लिए उसके स्वरूप को धारण कर ले, ताकि वह स्वयं ऊपर आकाश में चला जाए और नागपाश छोड़ दे। तत्क्षण विरुनामुख ने इंद्रजीत का स्वरूप धारण कर लक्षण और उनकी सेना का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। असली इंद्रजीत इस अवसर का लाभ उठा कर आकाश में चला गया और नागपाश छोड़ दिया। उसी समय वह बाण असंख्य सर्पों में बदल गया जो आकाश मार्ग से रेंगते हुए नीचे आए और वानरों पर जहर उगलने लगे। वे सभी मूर्च्छित हो कर गिर पड़े और सर्पों की कुंडली में उलझ गए और उनके साथ ही उनके सेनानायक लक्षण भी गिर गए। इंद्रजीत लक्षण के मूर्च्छित शरीर को रणक्षेत्र के खूनी दलदल में छोड़कर विजयी होकर लौट गया।

तब राम वहाँ आए जहाँ लक्षण निर्जीव वानरों के बीच मूर्च्छित पड़े थे। बिभेक के कहने पर उन्होंने ब्लैवट बाण को आकाश में छोड़ा जिससे क्षण भर में

गरुड़ नीचे आ गया और उसके चंचुप्रहार से सर्प ऊपर उड़ गए। लक्षण ऐसे जागे जैसे विश्रामदायक नींद से उठे हों और इसी तरह बाकी वानर सेना भी।

इंद्रजीत बहुत आश्चर्यचकित हुआ। किस प्रकार के शत्रु हैं ये जो मृत्यु के द्वार से वापस लौट आये! फिर भी वह उन सभी को मौत के मुँह में वहाँ पहुँचाएगा जहाँ से कोई भी वापस नहीं लौट सकता। इसलिए वह समुद्र के तट पर गया और ब्रह्मास्त्र की निष्क्रिय शक्ति को जाग्रत करने के लिए ईस्वर का आह्वान करने लगा। लेकिन पूर्ण दृढ़ संकल्प के साथ किए गए अनुष्ठान का कोई परिणाम न निकला, क्योंकि दसकंठ ने उसके पास कंपन की मौत की खबर भेज दी थी, जिसका उसी समय हनुमान द्वारा वध किया गया था। अनुष्ठान के समय इस दुखद समाचार को प्राप्त करना उसकी असफलता की पूर्व सूचना थी।

इसका एकमात्र उपाय एक काली गाय का बलिदान था जिसे इंद्रजीत ने एकदम कर दिया और इसप्रकार इंद्रजीत के बाण की निष्क्रिय शक्ति जाग्रत हो गई।

अतः अजेय ब्रह्मास्त्र को धनुष की प्रत्यंचा पर चढाकर इंद्रजीत शत्रु का सामना करने लगा। फिर अपनी चमत्कारिक शक्तियों के द्वारा उसने प्रभावशाली और सुंदर देवताओं से घिरे रहने वाले इंद्र के दिव्य स्वरूप को धारण कर लिया। युद्धक्षेत्र अचानक कांतियुक्त दिव्य आश्रम में बदल गया। वानरों का नेतृत्व कर रहे लक्षण ने उस दिव्य आश्रम को देखा और वे भूल गए कि इस समय वे जिंदगी और मौत के बीच खड़े हैं।

इंद्रजीत ने लक्षण की इस विस्मरणशीलता का फायदा उठाया और उन पर अजेय ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया और पूरी सेना को धराशायी कर दिया। लेकिन हनुमान अब भी जीवित थे। उन्होंने देख लिया था कि उस प्राणांतक बाण को चलाने वाला कौन था। उन्होंने तुरंत आकाश में छलांग लगाई और नकली ऐरावन[1] की गरदन तोड़ दी जिस पर नकली इंद्र बैठा हुआ था। लेकिन

---

[1] सं. ऐरावत, इंद्र का हाथी

इंद्रजीत के एक प्रहार ने उनको मूर्च्छित कर जमीन पर पटक दिया। इसप्रकार इंद्रजीत ने चहेते विजयी बालक की तरह रणक्षेत्र से प्रस्थान किया।

समाचार राम तक पहुँच गया और वे शीघ्रता से घोर पराजय वाले घटनास्थल की ओर दौड़े। जैसे ही वह दृश्य उनकी आँखों के सामने आया, वे मूर्च्छित होकर ऐसे गिर गए जैसे कोई वृक्ष जड से काटने पर गिर जाता है।

इंद्रजीत
दसकंठ का पुत्र

अध्याय 30

इंद्रजीत का वध

इसप्रकार राम अपने छोटे प्रिय भाई लक्षण के पास ऐसे मूर्च्छित अवस्था में पड़े थे, मानो मर चुके हों और हमेशा के लिए चले गए हों और उनके चारों तरफ वानर भी निर्जीव पड़े थे। उस क्षेत्र में जहाँ उन्होंने कभी अपनी अत्यंत चमत्कारिक शक्तियों का प्रदर्शन किया था, अब वहाँ उनके मृत शरीरों से एक विशाल श्मशानघाट बन चुका था।

समाचार लंका के प्रमुदित राजा के पास पहुँचा। खुशी और संतोष से चमकती हुई बीस आँखों वाले राजा ने एक राक्षस को उस बगीचे में भेजा जहाँ सीता उत्सुकता से अपने पति की विजय की आस में रात और दिन बिता रही थीं। फिर अचानक हुए वज्रपात के समान बुरा समाचार उस राक्षस के क्रूर होंठों से फूट पड़ा कि उनके पति संपूर्ण वानर सेना के साथ अपनी मृत्यु को प्राप्त हो चुके हैं। इसने उनकी अंतिम आशा को भी चूर–चूर कर दिया। इस में अब कोई संदेह नहीं था, पर सीता ने इसे अपनी आँखों से देख स्वयं सुनिश्चित करना चाहा।

इसलिए सीता त्रिजटा के साथ पुष्पक विमान में बैठकर युद्धस्थल के लिए चल दीं। जैसे ही वह दृश्य उनकी आँखों के सामने आया, उनकी आशा की धूमिल किरण भी बुझ गई। निश्चित रूप से ही राम वहाँ पर पड़े थे, कभी न उठने के लिए, अपने प्यार भरे शब्दों से कभी न लाड़ लड़ाने के लिए तथा उनके आँसू कभी न पोंछने के लिए। निस्संदेह, अयुध्या के राजकुमार मृतकों के बीच पड़े थे। उनके गालों पर अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी और उनका दिल दुख और निराशा से टुकड़े–टुकड़े हो गया।

तब अचानक त्रिजटा ने उनमें आशा और सांत्वना की एक धुंधली सी किरण जगाई। क्या राम वास्तव में मर गए हैं अथवा केवल बेहोश हैं? पुष्पक ही इसका सबसे बड़ा निर्णायक होगा क्योंकि जब कोई विधवा स्त्री उस पर बैठेगी वह ऊपर नहीं उड़ेगा। इस तथ्य की जाँच एक बार मंडो द्वारा की जा

चुकी है और इसकी दोबारा जाँच की जा सकती है। अतः सीता पुष्पक में बैठ गईं। उनको अत्यंत हर्ष हुआ कि वह रत्नजटित पुष्पक विमान चमकते हुए आकाश में उड़ गया और उन्हें उनके तुच्छ निवास पर सुरक्षित पहुँचा दिया। राम अब भी जीवित थे, किंतु बेहोश, वह दिन अवश्य आएगा जब उनका पराक्रम उनके अंधकारयुक्त जीवन को सूर्य के प्रकाश समान जगमगा देगा।

इसी बीच बिभेक लौटे, जो खाद्यसामग्री की वितरण व्यवस्था में कहीं और व्यस्त थे और उन्होंने सेना की दुर्दशा को देखा। लेकिन उन्हें इससे कोई निराशा नहीं हुई। वह जानते थे कि कोई भी हनुमान को नहीं मार सकता था क्योंकि वे ईस्वर की अनुकंपा से अमर थे। इसलिए वैदिक मंत्रों का उच्चारण करते हुए उन्होंने हनुमान पर फूंक मारी। उस विशाल वानर ने अपनी आँखें खोलीं और धीरे–धीरे व्याकुलता से पलकें झपकने लगे। फिर एकाएक पूरा मामला उनकी समझ में आ गया और वे तेजी से उठ खड़े हुए।

रात का समय था और ताजी–ताजी ओस की बूंदें झुलसती हुई धरती को ठंडा कर रही थीं। वे मृतकों के शरीर पर दिव्य मलहम के समान पड़ रही थीं और उनकी पीड़ा को कम कर रही थीं। एक–एक करके राम के संगी–साथी अचेतावस्था से ऐसे उठने लगे मानो ईश्वर के दिव्य स्पर्श से मृतक को जीवन मिल गया हो। लेकिन ब्रह्मास्त्र के शिकार लक्षण और दूसरे अब भी मूर्च्छित पड़े हुए थे। ओस की बूंदों के स्थान पर केवल पुब्बाविदेह द्वीप के अवुध पर्वत पर लगी जड़ीबूटियों से निर्मित मलहम ही ब्रह्मास्त्र द्वारा दिए गए कष्ट को कम कर सकता था और उनके जीवन को लौटा सकता था। इन जड़ीबूटियों का पता केवल जंबुवान को ही था जिसके बारे में उसे तब पता चला जब वह ईस्वर की सेवा करता था। किंतु वह जड़ीबूटी एक घूमते हुए चक्र के पहरे में थी। जो भी उस जड़ीबूटी को पाने की कोशिश करता, वह टुकड़े–टुकड़े हो मृत्यु को प्राप्त हो जाता। केवल एक ही व्यक्ति था जिसके लिए उस तक पहुँचना आसान था। वे थे हनुमान। इसलिए पवन पुत्र ने तुरंत आकाश में छलांग लगा दी और पर्वत की ओर उड़ चले।

कुछ ही क्षणों में एक विशाल आकृति की काली छाया ने अर्द्धचंद्र को ढक लिया जो सेना के ऊपर चाँदनी बिखेर रहा था। उन सभी ने ऊपर देखा

और सोचा कि हनुमान पर्वत को लेकर लौट आए हैं। तभी एक दूसरी समस्या पैदा हो गई। पर्वत को कहीं भी स्थिर नहीं रखा जा सकता था, क्योंकि लंका एक चलायमान द्वीप था और एक पवित्र पर्वत को रखने के लिए उपयुक्त स्थान नहीं था। अंत में इसे उत्तर दिशा में रखा गया। तभी वहाँ एकाएक मंद–मंद हवा बहने लगी जो जड़ीबूटियों की जीवनदायक सुगंध को साथ लिए थी और यह उस समस्त विनाशकारी युद्धभूमि में फैल गई। यह ब्रह्मास्त्र–पीड़ितों पर पड़े मौत के भय को अपने साथ बहा ले गई और उनको नूतन और ओजस्वी जीवन प्रदान किया। इसप्रकार लक्षण अपनी मूर्च्छा से जाग गए और वैसे ही उनके भाग्य के साथी सभी वानर भी।

अपनी चाल के विफल हो जाने पर इंद्रजीत इस बार कुछ दूसरी कपटभरी चालों के बारे में सोचने लगा जो राम और उसकी सेना को लंका से बाहर निकाल दे। यह सीता ही थी जिसके लिए राम ने इस द्वीप पर आक्रमण किया था। इसलिए यदि सीता का अंत कर दिया जाए, युद्ध स्वयं ही समाप्त हो जाएगा। लेकिन इसमें दसकंठ एक दुर्भेद्य व्यवधान बना हुआ था। अतः उसके पास केवल एक मायावी सीता का सहारा लेने के और कोई दूसरा रास्ता न था।

उसी समय अपने पद का दुरुपयोग करने का अपराधी होने के कारण शुकसार को मृत्युदंड दिया गया था। इंद्रजीत द्वारा सूचित की गई नई योजना के अनुसार दसकंठ ने उसे आदेश दिया कि वह सीता का वेश धारण करे और इंद्रजीत के साथ उसके रथ में जाए। अपने रथ में मायावी सीता के साथ इंद्रजीत युद्धस्थल की ओर चला गया और शीघ्र ही उसका मुकाबला लक्षण के साथ हुआ।

इस बार लक्षण के बाण उसके धनुष में ही रह गए और शत्रु पर अपना तीखापन दिखाने के लिए नहीं चल पाए। इंद्रजीत के रथ में सीता की उपस्थिति ने लक्षण से उनकी फुर्तीली शक्ति का हरण कर लिया था और वे उनके दयनीय रूप को विस्मित से देखते रह गये। तभी एकाएक वे इंद्रजीत की गरजती हुई आवाज को सुनकर चौंकन्ने हो गए। क्या लक्षण आगे आयेगा और सभी मुसीबतों की जड़ सीता को ले जायेगा और लंका को शांत रहने के लिए

छोड़ देगा? लक्षण ने उसके प्रस्ताव पर अपनी सहमति जताई और उससे उन्हें भेजने के लिए कहा। पर हमेशा विजयी रहने वाला इंद्रजीत उनके सम्मान को ठेस पहुँचाए बिना स्वयं ही सीता को कैसे भेज सकता था? इसलिए एक व्यंग्यात्मक अट्ठाहस के साथ उसने उनका सिर काट दिया और उसे पूर्णतया व्याकुल लक्षण पर फेंक दिया। उसी समय फिर इंद्रजीत की धमकी भरी गर्जना दोबारा गूँजी कि वह अब अयुध्या शहर की ओर कूच करेगा, उनके महल पर धावा बोलेगा और उनके सिंहासन के टुकड़े–टुकड़े कर देगा। तत्पश्चात् वह उनके सामने गर्वपूर्वक विजयी ध्वज फहराते हुए युद्धक्षेत्र से चला गया।

लेकिन यह एक काल्पनिक विजय थी जो इंद्रजीत के साथ जा रही थी क्योंकि बिभेक जानता था कि असली सीता अब भी दसकंठ के शाही बगीचे में बंधक हैं और जो सिर लक्षण के ऊपर फेंका गया था, वह एक मायावी सिर था, शुक्रसार का सिर। और वह यह भी जानता था कि इंद्रजीत अपनी सेना लेकर अयुध्या पर आक्रमण करने नहीं जा रहा था बल्कि वह कुंभनीय[1] के यज्ञ के आयोजन की तैयारी करने जा रहा था जिससे वह अदृश्य होने की चमत्कारिक शक्ति प्राप्त कर लेगा तथा इससे उसे और साथ ही उसकी सेना को भी किसी शस्त्र के प्रहार से बचने की प्रतिरोधक क्षमता प्राप्त हो जाएगी।

इसलिए बिभेक लक्षण को उधर ले गए जहाँ इंद्रजीत अपने सुरक्षित समझे जाने वाले स्थान पर अनुष्ठान कर रहा था। अचानक विघ्न पड़ने पर वह राक्षस अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ और घुसपैठिए का सामना करने लगा। किंतु उस दिन विजयी मुस्कान उसके विपरीत थी। उसने जान लिया कि अब वह दिन आ गया है जब उसका अंत निश्चित है। उसका हृदय अपने दुखी माता–पिता के लिए तड़पने लगा जिनका उसकी मृत्यु पर कोई धीरज भी नहीं बंधाएगा। वह उनसे अंतिम विदा लेने के लिए तरसने लगा। इसलिए उसने काले घने बादलों के आवरण का निर्माण किया और उसकी आड़ में वह दसकंठ और मंडो से विदा लेने के लिए भाग़ गया।

---

[1]निकुंभिला

उसी समय लक्षण अपनी विजय के प्रति इतने आश्वस्त हो गए थे कि वह इंद्रजीत के सिर को उसके धड़ से अलग करने के लिए लालायित हो उठे। लेकिन वे ऐसा नहीं कर सकते थे क्योंकि राक्षस को ब्रह्मा से वरदान मिला हुआ था कि जब कभी उसका सिर उसके धड़ से अलग होगा, एक भयंकर अग्निकांड संपूर्ण सृष्टि को खत्म कर देगा। इसलिए तत्क्षण अंगद ब्रह्मा के निवास पर दौड़ कर पहुँचा और इंद्रजीत के सिर को ग्रहण करने के लिए उनका पात्र ले आया। जैसे ही वह वापस लौटा, लक्षण ने अपना ब्रह्मास्त्र छोड़ दिया जिसने उस राक्षस के सिर को धड़ से अलग कर नीचे गिरा दिया और उसे ब्रह्मा के पात्र में रख दिया। तब राम ने एक प्रक्षेपास्त्र छोड़ा, उससे आग की एक लपट पैदा हुई जिसने उसके सिर को राख में बदल दिया। इससे सारा संसार जलकर अंगार बनने से बच गया। वहाँ इंद्र का विजेता सिरविहीन पड़ा था, राक्षसों की सारी आकांक्षाओं को चकनाचूर करता हुआ, परंतु वानरों के हृदय में जोशीले उत्साह को जाग्रत करता हुआ।

अध्याय 31

दसकंठ और उसके मित्रों से सामना

जब दसकंठ ने अपने पुत्र की मृत्यु का समाचार सुना तो दुख भाले की तरह उसके दिल को वेध गया। अंततः वह भी इस अंत तक पहुँच गया। और कोई नहीं बल्कि सीता ही उसके भाग्य के इस दुखद परिवर्तन के लिए जिम्मेदार है? और उसके कुल के गौरव इंद्रजीत की मृत्यु के लिए भी सीता ही उत्तरदायी है? क्या उसे मारना अधिक अच्छा नहीं होगा जो अप्रत्यक्ष रूप से उसके पुत्र की मृत्यु का कारण बनी? इसलिए वह शीघ्रता से सीता की कुटिया की ओर चल दिया और उसने उसे मार दिया होता, यदि पाओवनासुर ने उसे इस कायरतापूर्ण कृत्य करने से यह कह कर नहीं रोक दिया होता कि यह उसके पुत्र के जीवन को वापस नहीं ला सकता। अपने पुत्र की मृत्यु का बदला लेने का वीरोचित मार्ग यही है कि वह स्वयं राम को ललकारे और उसके पराक्रम को चुनौती दे।

इसलिए दसकंठ अपने दस सेनानायकों और दस पुत्रों, जो हवा, अग्नि, सूर्य और इंद्र को पराजित कर चुके थे, को लेकर युद्धभूमि की ओर चल दिया। उधर वानरों में सम्मिलित थे–वायुपुत्र हनुमान, अग्निपुत्र निलानन, सूर्यपुत्र सुग्रीव, और इंद्र के पौत्र अंगद। शीघ्र ही वे, जिन्होंने उन देवताओं को पराजित किया था, उनके पुत्रों के हाथों अपनी मृत्यु को प्राप्त हो गए। दसकंठ ने अपनी दस भुजाओं से युद्ध किया और अन्य दस भुजाओं से उसने अपनी रक्षा की। किंतु फिर भी वह विजय का कृपा पात्र न बन सका।

न तो विजयी और न ही पराजित, वह वापस लौट आया। उसने अपने मित्र, पंग्ताल के युवराज मुलाबालम को बुलवाया। मुलाबालम अपने बड़े भाई सहस्सतेज को साथ लेकर आया जो हजार मुखों तथा दो हजार भुजाओं वाला था तथा जिसके सामने ईस्वर के आशीर्वाद से सभी दुश्मन भाग खड़े होते थे। इसके अतिरिक्त, उस अपराजेय राक्षस के पास एक चमत्कारिक गदा भी थी जिसका नुकीला सिरा उसके शिकार लोगों के लिए मौत का सूचक था और उसका नुकीला अधोभाग मृतक को जीवन प्रदान करने वाला था।

जोश और गर्व के साथ दोनों भाईयों ने युद्धक्षेत्र की ओर प्रस्थान किया। सहस्सतेज के भयंकर आकार ने वानरों को ऐसे भगा दिया जैसे भेड़िए के सामने भेड़ों का झुंड। फिर भी लक्षण के तीक्ष्ण बाणों के प्रहार ने मुलाबालम को धराशायी कर दिया जबकि हनुमान के चातुर्य–कौशल ने सहस्सतेज के बढ़ते हुए प्रतिशोधी कदमों को रोक दिया।

वायु पुत्र ने उसको उसकी चमत्कारिक गदा से वंचित करने का निश्चय किया। वे एक छोटे वानर के रूप में सिकुड गए और जानबूझकर उसके रथ से टकरा कर उसके सामने गिर पड़े। क्रोधी तेवरों से राक्षस ने अपने शक्तिशाली वाहन का परीक्षण किया और उस अपराधी को पकड़ लिया जिसने अपना परिचय बाली के सेवक के रूप में दिया और बताया कि वह अपने मालिक का बदला लेने आया है। प्रसन्न होकर सहज ही विश्वास करने वाले उस राक्षस ने उसको अपना मित्र बना लिया। वानर के चापलूसी भरे शब्दों से अत्यंत प्रसन्न होकर, उसे उसने अपनी गदा अपने स्वामी का बदला लेने के लिए दे दी। जैसे ही गदा उसके हाथों में पहुँची, हनुमान अपने विशाल आकार में वापस आ गए और राक्षस को अपनी लंबी पूंछ में बांध कर, राम को स्मृति चिन्ह के रूप में भेंट करने के लिए, उसके हजार मुख वाले सिर को काट दिया।

सहस्सतेज की मृत्यु के बाद मकरकंठ का भाई सेंग आदित्य आया। उस राक्षस के पास एक चमत्कारिक शीशा था जिसके प्रतिबिंब से उसके दायरे में आई हर चीज जल जाती थी। लेकिन खुशी की बात थी कि यह ब्रह्मा की देखरेख में रखा था। अतः अंगद तुरंत सेंग आदित्य के एक शासक का रूप धारण कर ब्रह्मा के निवास की ओर दौड़ कर पहुँचा और उसने शीशे को प्राप्त कर अपने संरक्षण में ले लिया। अपने चमत्कारिक अस्त्र से वंचित हो जाने के कारण, प्रवंचित राक्षस आसानी से राम के घातक अस्त्र का शिकार हो गया। इसप्रकार एक एक करके वे सभी राक्षस मृत्यु को प्राप्त होते गए जिनसे दसकंठ ने आशा बांध रखी थी। अब वह नई आशा और नई संधि कहाँ खोजे? तभी एकाएक उसे चक्रवाल के राजा सत्लुंग के बहादुर कारनामों तथा अपने भतीजे, त्रिशिरा के पुत्र त्रिमेघ की याद आई। दसकंठ ने उनसे सहायता मांगी तथा उन राक्षस राजाओं ने तुरंत ही उसकी प्रार्थना का अनुकूल उत्तर दिया। अपने नेतृत्व

में विशाल सेना को लेकर सत्लुंग लंका की ओर चल दिया। रास्ते में त्रिमेघ के नेतृत्व वाली सेना से उसकी भेंट हुई। तत्पश्चात् संयुक्त सेनाओं ने राम को उनकी सेना सहित पराजित करने के लिए कूच किया। लेकिन, दुख की बात! वे बड़े उत्साह से अपने अंत की ओर बढ़ रहे थे। राम के बाण ने सत्लुंग को मौत के मुँह में पहुँचा दिया और त्रिमेघ चक्रवाल पर्वत के नीचे भाग गया और रेत में धूल के कण के रूप छिप गया। परंतु अप्रतिरोध्य वायुपुत्र ने उसका पीछा किया और उसे अपने मित्र के भाग्य का साझीदार बना दिया।

मित्रों से वियुक्त दसकंठ ने अब अपने संसाधनों का सहारा लिया। किससे वह डरा हुआ था? कौन उसके शरीर को वज्र बना सकता था और कौन उसकी अंगुली को मौत से सराबोर कर सकता था जैसे कि उसने एकबार पहले भी किया था जब वह नंदक के रूप में ईस्वर की सेवा किया करता था? लेकिन इसप्रकार की चमत्कारिक शक्ति से संपन्न होने के लिए एक यज्ञ करने की आवश्यकता थी। इसको पूर्ण करने के लिए केवल एक आवश्यक शर्त यह थी कि वह अपने मस्तिष्क को पूरी तरह सात दिन तक वैसे ही शांत रखे जैसे कि शीतकाल का शांत समुद्र। अगर एक बार उसके दिमाग का संतुलन टूट गया और वह गुस्से से भड़क गया, तो उसके यज्ञ का परिणाम निराशाजनक होगा। इसलिए वह निलाकल पर्वत की एक एकांत गुफा में चला गया और पूरे संयम के साथ उसने यज्ञ प्रारंभ कर दिया।

लेकिन दसकंठ ने हनुमान की उस चमत्कारिक क्षमता को समझने में भूल कर दी जो शूल बनकर उसके शरीर में निरंतर चुभ रही थी। बिभेक के निर्देशानुसार वह विशाल वानर निलानंद और अंगद के साथ राक्षसराज के पूजास्थल पर गया, किंतु उसे अत्यंत आश्चर्य हुआ जब उसने द्वार को दसकंठ की अलौकिक शक्ति के द्वारा मजबूती से अवरुद्ध पाया। वह अवरोध औरत के पैरों को धोने से अपवित्र हुए पानी को छिड़ककर दूर किया जा सकता था। इसलिए हनुमान शीघ्रता से अपनी राक्षस पत्नी बेनजाकया के पास गए और उस पानी को लेकर आए जिसका उपयोग उसने अपने पैरों को धोने के लिए किया था। उसे उस चमत्कारिक अवरोध पर छिड़क दिया जिससे उन्हें तुरंत रास्ता मिल गया। तीनों वानर उस गुफा के अंदर दौड़े और आपस में काटते और

पीटते हुए दसकंठ के मन की शांति को भंग करने लगे। किंतु राक्षसराज अपने स्थान पर अडिग बना रहा और अपने मन को स्थिर बनाए रखा। असफल होने पर चातुर्य–कुशल हनुमान ने कोई दूसरी युक्ति सोची। कुछ समय के लिए उन्होंने पूजास्थल को छोड़ दिया और वहाँ उड़ कर चले गये जहाँ स्वर्णिम पलंग पर मंडो गहरी नींद में सो रही थी, उसके गुलाबी खुले होंठों के बीच छाई हुई प्रसन्नतापूर्ण मुस्कान कुछ ऐसी दिख रही थी कि जैसे चमकते हुए मोतियों का हार। अपने मंत्र द्वारा उसे बेहोश कर, हनुमान ने उसे अपनी बांहों में उठा लिया और दसकंठ के पूजास्थल पर वापस लौट आए।

लंका की महारानी एक वानर की बांहों में! उसके दिल की रानी का हरण एक पशु द्वारा किया जाने वाला है! भयंकर क्रोध से गरजते हुए राक्षस ने हनुमान का पीछा किया। वानर ने तुरंत राक्षस रानी को छोड़ दिया और संतुष्ट मन से अपने शिविर की ओर चले गए। दसकंठ को मूर्ख बनाया जा चुका था। क्रोधाग्नि ने उसके मन की शांति को भंग कर दिया था और इसके साथ ही मौत और विनाश का साकार रूप बनने के उसके सारे अवसर जलकर राख हो चुके थे।

घबराए हुए दसकंठ ने अष्टांग के राजा सद्धासुर तथा दूषन के पुत्र विरुनचंबांग के साथ संधि करने की इच्छा जताई। दोनों राक्षस उसकी मदद के लिए तुरंत आ गए। सद्धासुर अपने सभी दिव्य अस्त्रों को अपनी सहायता के लिए आह्वान करने की चमत्कारिक शक्ति के साथ आया और विरुनचंबांग अपने अदृश्य शरीर और अदृश्य घोड़े के साथ।

हनुमान ने सद्धासुर का मुकाबला किया। उसको दिव्य अस्त्रों से वंचित कर देने के विचार से हनुमान ने वानरों को अपने आपको ऊनदार बादलों के बीच छिपा लेने की सलाह दी ताकि जैसे ही सद्धासुर द्वारा आह्वान करने पर देवता अपने अस्त्रों को नीचे फेंकें, वे उन्हें, राक्षस के पास पहुँचने से पहले बीच रास्ते में ही लपक लें। तब एक जंगली वानर के रूप में उन्होंने सद्धासुर को उसकी चमत्कारिक शक्ति के लिए चुनौती दी। राक्षस ने दिव्यास्त्रों का आह्वान किया लेकिन वे उसके हाथ में नहीं आ पाए क्योंकि वे चालाक वानरों द्वारा आकाश के बीच रास्ते में ही लपक लिए गए। अपनी चमत्कारिक शक्ति में

विश्वास खो देने पर उसने हनुमान का पूरी शक्ति के साथ सामना तो किया, किंतु वानर ने उसका सिर काट कर राम को स्मृति चिन्ह के रूप में भेंट कर दिया।

सद्धासुर की मृत्यु के बाद विरुनचंबांग क्रोधावेश में आया। अपने अदृश्य घोड़े पर बैठकर, अदृश्य राक्षस वानर सेना पर मौत की वर्षा करने लगा और राम को किंकर्तव्यविमूढ़ता की इस स्थिति में छोड़ दिया कि अदृश्य शत्रु से कैसे लड़ा जाए। अंत में उन्होंने मौत से भरा बाण मारा और इसने विरुनचंबांग के साथ आए सभी राक्षसों को मार दिया और उसके घोड़े को भी मौत के घाट उतार दिया, यद्यपि वह अदृश्य था। अकेला पड़ने पर वह इतना भयभीत हो गया कि वह शत्रु सेना का मुकाबला नहीं कर सकता था जिसने उसे घेर रखा था। इसलिए उसने अपने दुपट्टे को उतारा और वैदिक मंत्रोच्चारण के साथ दुपट्टे से अपनी हूबहू प्रतिकृति का निर्माण कर दिया।

जीवनी–शक्ति से संचारित हो जाने पर, उसकी प्रतिकृति अब युद्ध करने लगी और असली विरुनचंबांग आकाश पर्वत की ओर भाग गया। वहाँ पर वह पतित अप्सरा वनारिन से मिला जिसने उसे समुद्र के फेन में छिपने की सलाह दी।अभी तक वह हनुमान की पकड़ से बाहर नहीं हो सका था। वानर ने आकाश पर्वत तक उसका पीछा किया जहाँ उनकी मुलाकात वनारिन से हुई। वास्तव में वह पतित अप्सरा बेचैनी से एक लंबे समय से हनुमान का इंतजार कर रही थी। एक बार अपने मित्र के साथ रुचिकर बातचीत में लीन होने पर, वह ईस्वर के आदेश का पालन करना भूल गई।

इसप्रकार उसने देवता के शाप को अपने लिए आमंत्रित कर लिया, जिससे वह केवल तभी मुक्त हो सकती थी जब वह विरुनचंबांग को खोजने में हनुमान की सहायता करती। वह एक युवा व्यक्ति के रूप में, सुंदरता में कामदेव से भी उत्कृष्ट हो, उस अप्सरा के पास पहुँचे और मुँह फाड़कर चंद्रमा और नक्षत्रमंडल के समूह को दिखाते हुए, अपनी पहचान से आश्वस्त कर, उसे अपना बना लिया और उसके शापित जीवन का अंत कर दिया। फिर वे अप्सरा के द्वारा दिखाए मार्ग का अनुसरण करते हुए उस स्थान पर आए जहाँ विरुनचंबांग फेन के रूप में छिपा हुआ था। हनुमान की विशाल पकड़ से

बाल–बाल बचते हुए उसने मत्रों के उच्चारण से समुद्र में एक दरार बनाई और उसकी तलहटी में चला गया। किंतु वानर की लंबी पूंछ ने उसका पीछा किया तथा उसका अंत करने और उसे दंडित करने के लिए बाहर खींच लिया।

विरुनचंबांग

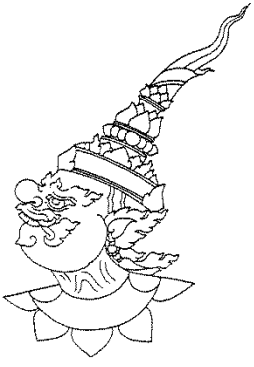

त्रिमेघ

अध्याय 32

मालिवग्गब्रह्म का निर्णय

सद्धासुर और विरुनचंबांग की मृत्यु ने दसकंठ को पहले से कहीं अधिक प्रतिशोधी बना दिया। शत्रु की अभेद्यता ने अस्त्रों के प्रति उसके विश्वास को खत्म कर दिया। इसलिए राक्षसराज ने अब अस्त्रों के स्थान पर ऐसी किसी दूसरी योजना पर विचार किया जो राम के अस्तित्व को इस धरा से मिटा दे।

तब उसे अपने नाना ब्रह्म मालिवराज की याद आई जो देवताओं, गंधर्वों, नागों और सभी अलौकिक प्राणियों के स्वामी थे। वे एक ब्रह्म थे जिनके शब्द कभी भी असत्य नहीं होते थे। यदि उन्हें राम की हार और मृत्यु के लिए शाप देने को राजी कर लिया जाए तब लंका और उसके राजा की सारी परेशानियों का सुखद अंत हो जाएगा।

इस विचार को ध्यान में रखकर, दसकंठ ने नन्याविक और वायुवेक नाम के दो राक्षसों को इस विनम्र निमंत्रण के साथ यह आग्रह करते हुए स्वर्ग में भेजा कि वे लंका में पधार कर अपनी करुणामयी उपस्थिति में उसके और राम के बीच हुए झगड़े का निर्णय करें, जिसने पहले आक्रमण कर उसके देश को चारों ओर से घेर रखा है।

मालिवराज राम के दादा राजा अजपाल के मित्र थे। इसलिए उन्होंने झगड़े के निपटारे के लिए सहर्ष स्वीकृति दे दी। अतः देवी–देवताओं को लेकर वे स्वर्ग से नीचे लंका में आए। अगर वे नगर में प्रवेश करते तो राम के मन में उनकी निष्पक्षता को लेकर संदेह होता अथवा किसी वानर शिविर में उतरते तो दसकंठ उससे अप्रसन्न होता, इसलिए वे सीधे युद्धस्थल पर उतरे जो कि न तो राम से संबद्ध था और न ही दसकंठ से।

तत्क्षण दसकंठ स्वर्ग के स्वामी के पास पहुँचा और राम को आक्रमण के लिए दोषी ठहराया यह आशा करते हुए कि देवता उसकी मुसीबत के कारण को एकदम सही मान लेंगे। लेकिन निष्पक्ष मालिवराज इतने नीतिपरायण थे कि वे ऐसा नहीं कर सकते थे। इससे पहले कि वह इस विषय में कोई निर्णय देते, उन्होंने सभी देवताओं को अपनी मध्यस्थता का साक्ष्य बनाने के लिए बुलाना उचित समझा और राम को आरोपों का जबाब देने के लिए बुलवाया। क्षण भर में ही मौत की घाटी देवताओं की सभास्थली में बदल गई और निराशा की चीखें खुशी के ठहाकों में बदल गईं

राम अपने वफादार साथियों के साथ आए। मालिवराज जानना चाहते थे कि झगड़े को भडकाने वाला़ कौन था। दसकंठ ने तुरंत जबाब दिया कि इसके लिए पूरी तरह राम जिम्मेदार है जिसने एक स्त्री के लिए व्यर्थ ही लंका पर घेरा डाल रखा है। इस स्त्री को उसने बिना पति अथवा पुत्र के जंगल में अकेला पाया था और उस पर तरस खाकर वह उसे अपने महल में ले आया था।

किंतु राम ने उसके आरापों को चुनौती दी और बताया कि कैसे सीता दसकंठ द्वारा अपहृत की गई और किस तरह वे उसका पीछा करते–करते इतनी दूर लंका द्वीप तक पहुँचे।

अंत में सीता वानरों और राक्षसों दोनों की पूरी चौकसी में वहाँ लाई गईं ताकि कोई भी पक्ष संदेह न कर सके कि सीता को दूसरे पक्ष ने सिखा दिया है। सीता की गवाही और सभी देवताओं की गवाही ने राम की बात का समर्थन किया। दसकंठ ने अपने आपको उन गवाहियों की सच्चाई को चुनौती देने में किंकर्तव्यविमूढ़ पाया। वह अपनी सफाई में केवल यही कह सका कि चूंकि देवता उसके द्वारा बार–बार हराये गये थे और दास बनाये गए थे, इसलिए, निस्संदेह, वे इस अवसर का लाभ उठाकर अपने वैमनस्य के गुबार को निकाल रहे हैं।

लेकिन अब तक दसकंठ की सच्चाई पर मालिवराज का विश्वास पूरी तरह से लड़खड़ा गया था और अंतिम सहारे के रूप में उसकी असंतोषजनक

सफाई ने इसे पूर्ण रूप से तोड़ दिया। अतः देवता ने राक्षस को आदेश दिया कि वह सीता को उसके स्वामी को वापस करे और इस अन्यायपूर्ण झगड़े को खत्म करे। लेकिन दसकंठ अड़ा हुआ था। सच्चाई और न्याय के सामने हार मान लेने के लिए उसे प्रेरित करने वाली धमकी भरी सलाह व्यर्थ सिद्ध हुई। उसने आज्ञा मानने से मना कर दिया। नीतिपरायण मालिवराज ने क्रुद्ध होकर उसे राम के अस्त्र से मारे जाने का शाप दे दिया और अपने दिव्य साथियों के साथ स्वर्ग के लिए प्रस्थान किया।

सीता आने वाले परम सुख की कल्पना में अपनी कुटिया में वापस चली गईं, राम मालिवराज के निर्णय से उत्साहित हो अपने शिविर में और अहंकार से चूर दसकंठ अपने महल में चला गया।

अध्याय 33

विशाल भाला, कपिलाबद

इसप्रकार अपनी अंतिम चाल से निराश होने पर, दसकंठ ने अब ईस्वर के द्वारा उसे दिये गये अपने विशाल भाले कपिलाबद की सुषुप्त शक्ति को जाग्रत करने और मालिवराज सहित सभी देवताओं को अग्नि की लपटों के हवाले करने के बारे में सोचा ।

इसलिए अपनी आदत के अनुरूप उसने एक तपस्वी का वेश धारण कर लिया तथा सुमेरु पर्वत की तलहटी में चला गया और वहाँ एक यज्ञाग्नि प्रज्ज्वलित की। फिर उसने देवताओं की मिट्टी की मूर्तियाँ बनाईं और वैदिक मंत्रों का उच्चारण करने लगा। आग से तेज लपटें निकलने लगीं। एक–एक करके वह मूर्तियों को विनाशकारी लपटों के हवाले करने लगा। जैसे–जैसे वे मूर्तियाँ आग की भेंट होती गईं वैसे–वैसे सारे दिव्य संसार में असहनीय ज्वलन–पीड़ा फैलने लगी। देवताओं के अधिपति ने परेशान होकर नीचे दृष्टि डाली और दसकंठ को विध्वंसक यज्ञ करते देखा। देवता तुरंत ईस्वर के पास दौड़े और उनसे शरण मांगी। दयालु ईस्वर ने बाली, जो उस समय तक देवता के रूप में जन्म ले चुका था, से नीचे जाने, मेरु पर्वत को तोड़ने और उसे यज्ञ की अग्नि में फेंकने के लिए कहा। आग के सामने शांत भाव से बैठे दसकंठ ने बाली को देखा। लेकिन राक्षस दसकंठ की देवता बाली से कोई बराबरी न थी। पराजित और निराश हो राजा लंका की ओर भाग गया।

दसकंठ को दुख भी हुआ और अप्रसन्नता भी, जब उसने ईस्वर को अपने शत्रु की सहायता करते हुए पाया क्योंकि उसने उसे पराजित करने के लिए बाली को पुनर्जीवित कर दिया था। लेकिन मंडो ने उसे सांत्वना देते हुए कहा कि शायद यह हनुमान था जिसने बिभेक के निर्देश पर बाली के रूप में उसे पराजित कर दिया था। शत्रुपक्ष का सलाहकार और सभी योजनाओं को विफल कर देने वाला, बिभेक ही इन सारी विपत्तियों की जड़ है। उसको मारने का मतलब है शत्रु की हिम्मत तोड़ना। मंडो ने ऐसी सलाह दी और राजा ने उसको मान लिया।

तदनुसार, अगली सुबह वह अपने विशाल भाले कपिलाबद को हाथ में लेकर, बिभेक के विश्वासघाती जीवन का अंत करने के लिए चल दिया। जैसे ही वह युद्धस्थल पर पहुँचा, उसका सामना राम, लक्षण और बिभेक से हुआ। कपिलाबद बिभेक को मारने के लिए तीव्र गति से निकल पड़ा। लेकिन सौभाग्यशाली राक्षस मौत के वाहक से स्वयं को बचाने में काफी कुशल था, जबकि लक्षण ने उस पर पलटवार करने का प्रयास किया। लक्षण के बाण द्वारा प्रहार किए जाने पर, कपिलाबद ने केवल अपनी दिशा बदल दी और उस पराक्रमी पुरुष पर प्रहार कर दिया जिसने इसकी गति को रोकने का साहस किया था। दसकंठ के तीक्ष्ण बाण का प्रहार अपने वक्षस्थल पर लिए जाने के कारण लक्षण मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

लक्षण के गिरने ने राम के क्रोध को भड़का दिया। उनके धनुष ने मौत की ऐसी वर्षा करनी शुरु कर दी जो राक्षसों ने न कभी देखी थी और न ही उसकी कल्पना की थी। दसकंठ के अलावा सभी राक्षस धराशायी हो गए और कोई भी अस्त्र, सिवाय खाली तरकस के उसके पास न बचा। निरंतर बढ़ते हुए क्रोधावेग से प्रति क्षण मौत की वर्षा इतनी तीव्र गति से होने लगी कि दसकंठ को भी अपने पैरों पर वापस भागना पड़ा और अपने महल की सुरक्षित दीवारों में शरण लेनी पड़ी।

ज्यों ही युद्ध का ज्वार शांत होता दिखाई दिया, तभी कृतज्ञ बिभेक अपने जीवन को बचाने वाले को पुनर्जीवित करने के प्रयासों में जुट गए। उस समय केवल तीन जड़ी–बूटियाँ थीं, 'तू–तुआ, संकरनी और त्रिजावा' जो कपिलाबद द्वारा दिए गए कष्ट को कम कर सकती थीं और जीवन को बचा सकती थीं। लेकिन वे जड़ी–बूटियाँ उत्तराकुरु द्वीप के संजिबसंजि पर्वत पर ही उगती थीं। उन जड़ी–बूटियों को इंदाकल पर्वत की गुफा में रहने वाली ईस्वर की गाय के गोबर में मिलाना था। उनको और कोई नहीं बल्कि वही ला सकता था जो अपना मुख फाड़कर चंद्रमा और तारों को अपने अंदर ले ले।

इसलिए हनुमान तुरंत उन पर्वतों की ओर उड़ गए और पलक झपकते ही सभी आवश्यक दवाओं को लेकर लौट आए। अब उन दवाओं को देने से पहले उनको पीसना बहुत आवश्यक था। चूर्ण बनाने की सिल्ली पाताल के

राजा कालनाग के पास थी और उसका बेलन दसकंठ के पास था जिसका प्रयोग वह अपने तकिए के रूप में करता था। इसलिए हनुमान ने तुरंत पाताल की ओर प्रस्थान किया और बहुत जल्दी वे सिल्ली लेकर वापस आ गए। तब वे बेलन के लिए दसकंठ के महल में गए।

उन्होंने सभी को तंत्र–मंत्र से गहरी नींद में सुला दिया और बड़ी ही सावधानी से वहाँ प्रवेश किया जहाँ दसकंठ सुंदर मंडो को अपनी बाँहों में प्यार से लिटाए सो रहा था। हनुमान ने राक्षस के दस मुँह वाले सिर के नीचे से बेलन खींच लिया और वे लौटने ही वाले थे कि उनके शरारतपूर्ण दिमाग में एक विचित्र विचार आया। अपने होठों पर एक नटखट मुस्कान के साथ उन्होंने राजा के बाल लिए और उन्हें रानी के बालों से बाँध दिया। फिर उन्होंने शाप दिया कि ये गांठें तभी खुलेंगी जब उसकी रानी उसके सिर पर तीन थप्पड़ लगाएगी। तब वानर महल से शिविर के लिए चल दिया। लेकिन चलने से पहले उसने दसकंठ के माथे पर अपना शाप और उससे मुक्ति का उपाय लिख दिया।

इसप्रकार सभी आवश्यकताएं पूरी कर लेने पर दवाई आसानी से तैयार कर ली गई और दे दी गई। लक्षण मृत्यु शैया से उठ गए और दुख आनंदोत्सव में बदल गया। उसी बीच दसकंठ भी अपनी सम्मोहक नींद से उठा। निःशंक राक्षस ने उठते समय सबसे पहले अपना सिर उठाया। लेकिन अचानक झटके के साथ उसे बालों की जड़ में दर्द महसूस हुआ। गुस्से में आकर उसने अपने सिर को घुमाया, परंतु दूसरे झटके से उसे फिर दर्द हुआ। किंतु इसने उसकी दुखपूर्ण हालत को स्पष्ट कर दिया। अधीरता से उसने गांठ को खोलने की कोशिश की किंतु वह व्यर्थ सिद्ध हुई। उसने अपने राक्षस सेवकों को पुकारा और अपने गुरु गोपुत्र को बुलवाया। ऋषि अविलंब अपने शिष्य की मदद के लिए शीघ्रता से आ गए। उनकी खोजी आँखें राजा के मस्तक पर पड़ीं। लेकिन उसके उपचार के लिए जो उपाय बताया गया था, वह अत्यधिक अधम था। कैसे अपने शक्तिशाली शिष्य को वह एक औरत से थप्पड़ खाने के लिए कहता, एक ऐसा काम जो न केवल उसके सम्मान को आहत करता वरन् अशुभ और अनिष्ट का भी सूचक था? इसलिए गोपुत्र ने उस उपचार को नकार दिया और अपनी चमत्कारिक शक्ति का प्रयोग करने लगा। लेकिन उसका अपनी शक्ति

का प्रयोग करना व्यर्थ ही रहा। गांठ वैसी ही उलझी रही जैसी वह थी और दोनों सिरों के बीच खींचतान होने लगी जिसने उनके दर्द को और अधिक बढ़ा दिया। अब केवल उस अधम उपचार को अपनाने के अलावा क्या किया जा सकता था जो उस शैतान वानर के द्वारा बताया गया था। महान और शक्तिशाली राजा होते हुए भी उसने अपने शाही सिर को अपनी पत्नी से तीन बार थप्पड़ खाने के लिए झुका दिया।

कितने विनाशक हैं ये वानर! उन्होंने न केवल उसके प्रभाव और प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचाई वरन् उसके घाव पर नमक भी छिड़क दिया। उन सबका पूरी तरह से विनाश कर दिया जाना चाहिए। इसलिए प्रतिशोध लेने का निश्चय कर दसकंठ ने अपने भाई चक्रवाल के राजा दसबानासुर को बुलवाया। जैसे ही उसने राक्षसराज पर पड़ी महान आपदा के बारे में सुना, वह तुरंत युद्धस्थल की ओर दौड़ा, अपने शरीर को ब्रह्मा के शरीर के समान विस्तृत किया और अपनी वृहद जीभ से सूर्य को ढक दिया। उसका भार सहने में असमर्थ पृथ्वी धँस गई और उसका आधा शरीर डूबकर उसके बीचोंबीच चला गया। तब उसने दो बड़ी दीवारों की तरह अपनी दोनों भुजाएं बाहर निकालीं और वानर सेना को घेर लिया। बेचारे जानवर घोर अंधेरे से ढक गए, वे उसके गुफा के समान मुख में लडखड़ाते गिरते गए। राक्षस उन्हें बिना चबाए निगलता चला गया। निराशाजनक चीखें शिविर में चारों तरफ सुनाई पड़ने लगीं। किंतु राम के मन में न तो भय था और न ही निराशा।

उनके आदेश से सुग्रीव ने राक्षस की दोनों भुजाएं काट दीं। उस तीक्ष्ण दुख को सहने में असमर्थ वह राक्षस तुरंत सिकुड़ कर अपने असली स्वरूप में आ गया। तत्क्षण सारे क्षेत्र में चकाचौंध कर देने वाला प्रकाश फैल गया। फिर राम ने घातक प्रक्षेपास्त्र छोड़ा। यह राक्षस को मारता हुआ उसके पेट को फाड़ कर बाहर निकल गया। जिन वानरों को उसने निगल लिया था, जमीन पर गिर गए जो अभी तक अनपचे, पर निर्जीव थे। इसलिए राम ने एक बाण छोड़ा। यह इंद्र के निवास पर पहुँचा और उसे युद्ध क्षेत्र में आने के लिए आमंत्रित किया। दयालु देवता ने उन सभी मृत शरीरों पर पवित्र जल छिड़का और एक बार उन्हें पुनः जीवन दान दिया। सारा शिविर खुशी और जय–जयकार से गुंजायमान हो उठा।

अध्याय 34

जीवन का अमृत

अब मंडो अपने पति की सहायता के लिए आई। वह मौत को उसकी विनाशकारी शक्ति से वंचित करने और मृत को जीवित करने का उपाय जानती थी। यह जीवन का अमृत था जो उसने उमा से सीखा था। एक बार अमृत तैयार किया गया था और मृत्यु–क्षेत्र में इसे छिड़का गया था, उसके पति के सभी सेनापति अपनी कब्रों से जीवित हो बाहर आ गए थे और उसके लिए लड़े थे। राम और उसकी सेना के अस्त्र अमृत के उस अपराजेय कवच के विरुद्ध क्या कर सकते थे? यदि राक्षस मारे भी गए तो भी वे नई शक्ति के साथ शत्रु का सामना करने के लिए फिर से खड़े हो जाएंगे। इसलिए मंडो ने संजीव अनुष्ठान को संपन्न करने के लिए शीघ्रता की जो उसे जीवन–अमृत प्रदान करता।

इसप्रकार अचानक उत्साहित हुए दसकंठ ने युद्धक्षेत्र के लिए अपने दो पुत्रों, दसगिरिवन और दसगिरिधर के साथ प्रस्थान किया। लक्षण के बाणों ने दोनों भाईयों को मृत्यु के मुँह में पहुँचा दिया, जबकि राम के पराक्रम ने पिता को पीछे हटने के लिए विवश कर दिया।

ऐसी चिंताजनक स्थिति में मंडो का जीवन–अमृत पहुँच गया। तुरंत राक्षस ने उसे मौत की घाटी पर छिड़क दिया। उसी क्षण राक्षसों की सारी सेना जीवित हो उठी और शत्रु का सामना करने लगी। कुंभकरण अपने अजेय भाले के साथ उठ खड़ा हुआ, सहस्सतेज अपने एक हजार मुखों के साथ, सेंग आदित्य अपने चमत्कारिक शीशे के साथ, और उन सबके साथ अन्य दूसरे राक्षस भी अपनी भयंकरता के साथ उठ खड़े हुए। युद्ध एक बार फिर से शुरू हो गया। बल्कि यह एक ऐसा युद्ध था जिसके अंत का पता न था क्योंकि मृतकों को जीवन प्रदान करने तथा उन्हें दोबारा युद्ध क्षेत्र में वापस लाने के लिए वहाँ अमृत था।

भाग्य के इस अनर्थकारी परिवर्तन से बचने का कोई रास्ता न था केवल इसके कि मंडो द्वारा किए जाने वाले अनुष्ठान में बाधा डाली जाए। लेकिन यह तभी संभव हो सकता था जब उसके हृदय में वासना उत्तेजित की जाए क्योंकि कामोत्तेजक मनोदशा से मुक्त होने पर ही अनुष्ठानकर्ता इसमें सफलता पा सकता था।

इसलिए, सभी युक्तियों के स्वामी हनुमान ने दसकंठ का स्वरूप धारण कर लिया, निलानन ने उसके हाथी का, जंबुवान ने उसके महावत का, जब कि बहुत से वानरों ने स्वयं को राक्षसों के रूप में बदल लिया। फिर नकली दसकंठ ने विजयी जुलूस के साथ लंका के लिए प्रस्थान किया।

जुलूस लंका की गलियों में से धीरे–धीरे आगे बढ़ता गया और रानी मंडो के पूजास्थल पर पहुँच गया जहाँ वह जीवन–अमृत को प्राप्त करने वाले अनुष्ठान में लीन थी।

अब जीवन का अमृत किस काम का? राम अब अपने भाई के निर्जीव शरीर तथा अपनी निर्जीव सेना के साथ मृत पड़े हुए हैं। इसप्रकार नकली दसकंठ ने रानी मंडो से झूठ बोला। अपनी आँखों से खुशी की चमक बिखेरते हुए वह अनुष्ठान वाले आसन से उठ गई और नकली दसकंठ की बाहों में आकर समा गई। एक अपवित्र चुंबन की छाप उसके गुलाबी होठों पर छोड़ दी गई और एक अपवित्र आलिंगन ने उसके कोमल शरीर को जकड़ लिया। इसप्रकार चतुर हनुमान ने सीधी–सादी रानी की पवित्रता भंग कर दी। अनुष्ठान को बाधित कर देने के बाद, वह मंडो को यह बहाना बनाकर छोड़ गए कि बिभेक अभी भी जीवित है और वह उसके विश्वासघाती जीवन का अंत कर अवश्य वापस लौटेगा।

उसी समय दसकंठ वहाँ अधीरता से अमृत की प्रतीक्षा कर रहा था। सभी पुनर्जीवित राक्षस दोबारा से मारे जा चुके थे, और अब उन्हें पुनर्जीवन देने वाला अमृत नहीं था। घंटों पर घंटे बीतते गए, लेकिन उसकी कोई ताजी आपूर्ति नहीं हो रही थी। पुनर्जीवित राक्षस घमंड से भरे हुए थे, परंतु अमृत से रहित होने के कारण वे सब आकाश में वापस चले गए। अब दसकंठ फिर

अकेला रह गया। बार–बार वह पीछे मुड़ कर देखता रहा, इस आशा में कि अमृत लाने वाला दिखाई दे जाए लेकिन उसके सामने रास्ता सूना पड़ा था। अंत में वह ज्यादा प्रतीक्षा न कर सका। अधीरता और शीघ्रता से उसने मंडो के पूजास्थल की ओर प्रस्थान किया।

वहाँ सत्य अपने आप स्पष्ट हो गया। हनुमान की निर्लज्जता से भौंचक्का, क्रोधोन्मत्त राजा शर्मसार हो गया और दुखी रानी अपनी पवित्रता के भंग किये जाने पर शर्मिंदा हो, मूर्च्छित होकर गिर पड़ी।

वे दोनों यद्यपि उनकी युक्तियों से परेशान थे, फिर भी किसी प्रकार के मनोमालिन्य ने उनके प्रेम पर बुरी छाया नहीं डाली, वह सदा की तरह जीवंत और निर्मल था।

अध्याय 35

जीवात्मा का पात्र

अपनी सारी कार्यविधियों और अपनी प्रिय पत्नी के अपमान से निराश होकर, दसकंठ अब पूरी शक्ति से विनाश करने के लिए क्रोधोन्मत्त हो गया। उसकी बीसों आँखें क्रोध की लपटें बरसाने लगीं, लगता था कि मानो वे समस्त सृष्टि को अग्निकांड में भस्म करना चाहती हों। वह दुनिया से शत्रु को मिटाने के संकल्प के साथ युद्धक्षेत्र की ओर चल पड़ा।

दोनों सेनाएं आमने–सामने आ गईं और राम ने दसकंठ का सामना किया। सारा आकाश बाणों की बौछारों से भर गया, जिन्हें उनके पराक्रमी धनुष निरंतर बरसा रहे थे। राम ऐसे पराक्रम से लड़े जो इससे पहले न देखा गया और न सुना गया। लेकिन दसकंठ सभी अस्त्रों से प्रतिरक्षित था। उसका मस्तक कट गया, किंतु पुनर्जीवित हो गया, उसकी भुजाएं कट गईं, किंतु दोबारा जुड़ गईं। कोई भी हथियार, चाहे कितना ही विनाशक क्यों न हो, उस अभेद्य राक्षस का कुछ भी नुकसान न कर सकता था। अंत में बिभेक राम की सहायता के लिए आए। उन्होंने उन्हें बताया कि दसकंठ की आत्मा उसके शरीर से बाहर निकाली जा चुकी है और उसे उसके गुरु गोपुत्र के संरक्षण में एक पात्र में रखा गया है। दसकंठ केवल तभी मर सकता है जब पात्र में रखी आत्मा को कुचल कर मार दिया जाए।

हनुमान ने इस काम को करने की इच्छा व्यक्त की किंतु उन्होंने राम को सचेत किया कि वे किसी भी प्रकार के छल–कपट का सहारा ले सकते हैं, इसलिए उन्हें अपने निष्ठावान सेवक पर न तो कोई संदेह होना चाहिए और न ही आश्चर्य, यदि वे उन्हें शत्रु के शिविर में देखें। राम को सतर्क करके, पवन पुत्र ने गोपुत्र के आश्रम की ओर प्रस्थान किया जिसे वे मूढ़ गुरु के रूप में जानते थे। उनके साथ सहकर्मी के रूप में इंद्र का पौत्र अंगद भी गया।

दोनों वानर आश्रम में पहुँच गए। उनके गालों पर आँसू बह रहे थे। राम द्वारा उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया जिनकी उन्होंने बड़ी निष्ठापूर्वक सेवा की थी और जिनके लिए उन्होंने अपना जीवन समर्पित कर दिया था। इसप्रकार हनुमान ने ऐसी शब्दावली में गोपुत्र से झूठ बोला जिससे उनकी उनके प्रति सहानुभूति जाग्रत हो गई। अब उनसे घृणा होने पर उन्होंने उन्हें छोड़ दिया है, ताकि वे उनसे महान लंका के राजा की सेवा कर सकें जो यह जानता है कि निष्ठावान सेवक को कैसे पुरस्कृत किया जाता है। चूंकि उन्होंने तो उसके साथ बुरा किया था, उसके पुत्रों और सेनानायकों को मार दिया था, वे अब उसके पास अकेले जाने से डर रहे हैं कि कहीं उन्हें देखते ही राजा इतना अधिक क्रुद्ध न हो जाए कि उन्हें अपनी याचिका प्रस्तुत करने का अवसर दिए बिना ही वह उन्हें मार दे। क्या दयालु गुरु उन्हें राजा के पास ले जा सकेंगे और उनके पक्ष में बोल सकेंगे? इसप्रकार चतुर हनुमान ने अश्रुपूर्ण शब्दों में उनसे अनुनय–विनय की।

गोपुत्र ने उन पर विश्वास कर लिया और उनको अपने साथ राजा के पास ले जाने के लिए तथा उनका पक्ष रखने के लिए सहमत हो गए। अतः वे राजमहल जाने के लिए तैयार हो गए। लेकिन वे उस पात्र का क्या करें जिसमें राजा की आत्मा रखी हुई थी? इसलिए शुभचिंतक हनुमान ने कहा कि राम पात्र को चुराने की उसुकता के कारण हर अवसर का लाभ उठाने की तैयारी में हैं। इसलिए उन्होंने ऋषि से प्रार्थना की कि वे उस पात्र को अपने साथ ले चलें। मूर्ख ऋषि ने किसी प्रकार के संदेह को अपने मन में न पनपने देते हुए वैसा ही किया जैसा उनसे कहा गया था।

लंका के गांवों के घुमावदार रास्तों से होते हुए वे चलते गए। हनुमान को देखते ही सारे राक्षस बड़ी ही भयाकुलता से भागने लगे–कुछ अपने छोटों को बाहों में उठाए, कुछ अपनी माँओं को ले जाते हुए और कुछ अपनी पत्नियों को। लंका के गांवों की गलियों में उस विशाल वानर को अचानक देखते ही एक भयानक कोलाहल हो गया।

अंत में वे शहर के द्वार पर पहुँचे। एक नई परेशानी वहाँ आ खड़ी हुई। पात्र शहर के अंदर नहीं ले जाया जा सकता था क्योंकि आत्मा दसकंठ की ओर उड़ जाती, जैसे एक छोटा पक्षी अपनी माँ से मिलने के लिए उसकी ओर दौड़ता है जब प्रतीक्षा कर रहे उसके नन्हें कानों में माँ के पंखों की फड़फड़ाहट पहुँचती है। हनुमान ने सुझाव दिया कि पात्र को अंगद की देखरेख में रख देना चाहिए जो द्वार पर ऋषि की प्रतीक्षा करेगा। अतः वैसा ही किया गया। अंगद को पात्र की देखरेख के लिए छोड़ दिया गया और हनुमान गोपुत्र के पथ प्रदर्शन में लंका में प्रविष्ट हो गए।

यह कैसा अप्रत्याशित सुनहरा अवसर था कि पात्र अंगद की देखरेख में छोड़ दिया गया! हनुमान स्वयं इस अवसर को पाने में सफल न हो सके। इसलिए उन्होंने ऋषि से इस बहाने के साथ थोड़ी देर के लिए अनुमति मांगी कि अंगद अकेला छोड़ दिया गया है, इसलिए उसे आवश्यक निर्देश देने हैं ताकि वह राक्षसों द्वारा शत्रु समझ कर मार दिए जाने से अपना बचाव कर सके। इसप्रकार उनसे अनुमति लेकर वे ऋषि को छोड़ कर अंगद के पास आ गए। तब अपनी चमत्कारिक शक्तियों की सहायता से उन्होंने पात्र की एक प्रतिकृति का निर्माण किया और अंगद को उस वास्तविक पात्र को समुद्र के किनारे ले जाने और वहाँ जमीन में गाड़ देने की सलाह दी। इसके बाद वह द्वार की ओर लौट आए और ऋषि के पहुँचने की प्रतीक्षा करे जिनको उसे उस प्रतिकृति को लौटाना है। तत्पश्चात् वह फिर वापस उस समुद्र के किनारे चला जाए और हनुमान की प्रतीक्षा करे। जब कभी वह उन्हें आकाश में चंद्रमा और तारों को मुँह फाड़कर अंदर लेते हुए देखे, वह पात्र के साथ आकाश में छलांग लगाए और उन्हें उस पात्र को वापस कर दे। इसप्रकार प्रत्येक चीज का अपनी संतुष्टि के अनुसार प्रबंध करके वे ऋषि के पास लौट गए और बहुत शीघ्र उन्होंने स्वयं को लंका के राजा के सामने पाया।

कभी चुपचाप रोते हुए और कभी आंसुओं से गला अवरुद्ध करते हुए, किंतु सदैव गोपुत्र के द्वारा सँभाले जाते हुए, वानर ने राम द्वारा उसके प्रति दुर्व्यवहार किए जाने की एक झूठी कहानी गढ़ी और राजसी सहानुभूति प्राप्त कर ली। इससे अधिक दुखद और हास्यास्पद बात क्या हो सकती है कि लंका जलाने का जोखिम उठाने के लिए उसे केवल एक नहाने वाली तौलिया देकर

पुरस्कृत किया गया? वानर ने झूठ बोला। इस निर्णय पर अपने हाथों से उसे थपथपाते हुए लंका के राजा ने वानर को अपने पोष्य पुत्र की तरह स्वीकार किया और उसे अपना सच्चा प्रेम और सहानुभूति प्रदान की, जो केवल उसे धोखा देने और उसकी मौत में वृद्धि करने आया था।

अगले दिन हनुमान ने स्वेच्छा से अकेले लड़ने की इच्छा व्यक्त की क्योंकि जैसा उसने कहा था कि उन दोनों नगण्य से व्यक्तियों को पकड़ना उसके लिए मुश्किल काम नहीं है। हनुमान को विरोधी पाले में देखकर वानर भाग खड़े हुए और लक्षण को किसी समय उनके सेनापति रहे हनुमान का सामना करने के लिए अकेला छोड़ दिया। लक्षण हनुमान की तात्कालिक गतिविधियों से अपरिचित होने के कारण उनको शत्रु रूप में सामने खड़ा देख आश्चर्यचकित हो गए। फिर भी उन्होंने वानर के साथ युद्ध किया। वानर उनके साथ केवल एक नाटकीय युद्ध करता रहा जब तक अंधेरे के कारण युद्ध बंद होने की घोषणा नहीं हो गई। हनुमान लंका वापस लौट आए जहाँ राक्षसराज उनकी बड़ी ही बेसब्री से प्रतीक्षा कर रहा था। राक्षसों ने राजा को बताया कि किस तरह वानर युद्धक्षेत्र को हनुमान के नियंत्रण में छोड़कर भाग गए। यदि अंधेरा नहीं हुआ होता तो वह राम और लक्षण को बंदी बनाकर ले आता।

दसकंठ यह सुनकर बहुत खुश हुआ और उसने पुरस्कारस्वरूप उसे इंद्रजीत के सारे खजाने के साथ–साथ उसकी चंचल मति वाली पत्नी भी दे दी जो वानर के आलिंगन में आते ही सब कुछ भूल गई– अपना सम्मान, पूर्व पति के प्रति अपना प्रेम, अपनी स्वामीभक्ति–अंत में उसने केवल एक ही बात याद रखी कि प्रेम से वीरान उसके हृदय ने एक ऐसे व्यक्ति को पा लिया है जो उससे खुश है और उसकी कामवासना की पुकार का उत्तर देने के लिए तैयार है। सुबह होने पर दूसरे दिन का युद्ध आरंभ होने का बिगुल बज गया। इस बार राजा भी हनुमान के साथ गया। यह निश्चित हुआ कि हनुमान तो आकाश में छलांग लगाकर सूर्य को ढक देगा और इन दोनों व्यक्तियों को पकड़ लेगा, जबकि दसकंठ सेना पर हमला बोल देगा और उन सभी को मार देगा। किंतु अपने सच्चे मन से हनुमान उसी दिन से ही उस राक्षस से बदला लेने की सोच रहे थे।

ज्योंही वायुपुत्र आकाश के बीचोंबीच पहुँचे, उन्होंने चंद्रमा और तारों को मुँह फाड़कर अंदर लेना शुरू कर दिया। समुद्र के किनारे चौंकन्ने बैठे अंगद ने चमत्कारिक प्रदर्शन देखा और उसने तुरंत आकाश में छलांग लगाई और उस विशाल वानर को पात्र दे दिया। हनुमान ने पात्र ले लिया और इसे राम के पास लेकर आए। उनकी प्रसन्नता और कृतज्ञता का कोई ठिकाना न रहा। असंख्य तारों को तो एक बार गिना जा सकता है, अगाध गहराई को भी एक बार मापा जा सकता है, किंतु हनुमान की समझ की कोई थाह नहीं है अथवा उनकी बुद्धिमत्ता को मापा नहीं जा सकता है, यह कहकर लक्षण ने उनकी प्रशंसा की। रत्नों में से एक रत्न हैं हनुमान, उनके जैसा दूसरा तीनों लोकों में भी नहीं पाया जा सकता, राम ने कहा।

इसके बाद इस बात पर सहमति हुई कि अब राम को अपना ब्रह्मास्त्र छोड़ देना चाहिए जबकि हनुमान उसकी आत्मा के पात्र को कुचल कर टुकड़े–टुकड़े कर देंगे। उसके बाद हनुमान युद्धक्षेत्र में लौटे जहाँ दसकंठ वानर सेना को अपने मौत के जाल में समेट रहा था। हनुमान को देखकर उसके मन में खुशी की लहर दौड़ गई और उल्लास में उसने अपने हाथों से ताली बजाई। लेकिन अचानक उसकी उल्लासभरी आँखों ने अपनी चमक खो दी और उनसे निराशा झलकने लगी। उसने वानर की उपहासभरी आवाज को सुन लिया था जो व्यंग्यात्मक टिप्पणियों के साथ उसकी आत्मा के पात्र को घुमा रहा था। उसका दिल एक अज्ञात भय से काँप गया और घोर निराशा में उसकी हिम्मत ने जबाब दे दिया। एक जीवित मृत की भावना ने उस पर आधिपत्य कर, उसे गतिहीन बना दिया। अंततः उसके मुँह से कुछ शब्द हल्के से निकले। क्या यह उसका निष्ठावान हनुमान है, उसका प्रिय पोष्य–पुत्र! उसने उसे एक पिता का प्रेम प्रदान किया, क्या उसे केवल फाँसी के तख्ते तक घसीटने के लिए? उसने उस पर मित्र के समान विश्वास किया, क्या केवल विश्वासघात करके उसे मौत तक पहुँचाने के लिए! क्या इस संसार में कृतज्ञता नाम की कोई चीज नहीं रही? क्या अब विश्वास को विश्वासघात से पुरस्कृत किया जाता है, प्रेम को घृणा से और उपकार को अकृतज्ञता से? लेकिन कुछ भी हनुमान को बेचारे राजा के प्रति दया से प्रेरित न कर सका–न तो कोई प्रतिवाद, न कोई पाप का भय। अब केवल एक ही चीज उसे पात्र वापस लौटाने के लिए प्रेरित कर

सकती थी। वह थी, सीता को उसके स्वामी को समर्पित कर देना। किंतु वह राजा अपनी बात पर अड़ा हुआ था। उसे सीता को वापस करने के स्थान पर मौत के मुँह में जाना मंजूर था। प्रेम के लिए वह लड़ा और प्रेम के लिए ही वह मर जाएगा। अपने प्रेम के लिए लड़ने से मिलने वाले सम्मान को छोडने के स्थान पर वह मौत का आलिंगन करेगा। इस जीवन में उसका प्रेमातुर हृदय, यद्यपि सीता के प्रेम को प्राप्त नहीं कर सका, लेकिन आने वाले जीवन में, ईश्वर की इच्छा से, वह उसके हृदय में स्थान अवश्य बना लेगा और जिस चित्र को उसने अपने हृदय में एक लंबे समय से धारण किया हुआ है, उसे जीवित रूप में अवश्य प्राप्त करेगा और उससे वह परमसुख प्रदान करेगा जिससे उसे इस दुखित जीवन में वंचित रखा गया है।

यह कहते हुए अभागे राजा ने, जिसके सिर पर मौत का साया मँडरा रहा था, युद्धक्षेत्र छोड़कर लंका के लिए यह प्रतिज्ञा करते हुए प्रस्थान किया कि अपनी रानी मंडो से अंतिम विदाई लेने के बाद वह अगले दिन अपने प्रारब्ध का सामना करेगा।

सुवर्णकन्युमा, इंद्रजीत की पत्नी

अध्याय 36

दसकंठ का वध

हमेशा की तरह प्रकाशमान और सुनहरा दिन निकल आया, नई आशा, नए जीवन और नई ऊर्जा का संचार करते हुए। लेकिन लंका के महल में उत्साह की कोई हलचल नहीं थी, आशा की कोई किरण नहीं थी। आशाओं को गलाती हुई और अभिलाषाओं को विस्फोट से उड़ाती हुई प्रलय और मौत विजय की धरती पर चारों ओर फैली हुई थी।

यह दसकंठ के जीवन का अंतिम दिन था। इसके बाद, यह आकर्षक दुनिया उसकी आँखों के सामने से सदा के लिए ओझल हो जाएगी। इसके बाद कोई भोर उसके जीवन की दिनचर्या का स्वागत नहीं करेगी, शाम को चलने वाली कोई मंद पवन उसे आराम से सुलाने के लिए नहीं बुलाएगी। उसके सामने चारों तरफ अंधकार का साम्राज्य था जहाँ संसार की सारी स्मृति स्वयं ही विस्मृति में खो जाती है और खुशी दिलाने वाली कोई पुरानी मधुर याद नहीं आती। आज, उसे इस संसार से और इसकी मधुर यादों से निश्चित ही विदा लेनी है। इसलिए वह एक दिन का युद्ध–विराम होने पर, विपत्ति की साथी और दुख में सदा सहभागी, मंडो से विदाई का निवेदन करने के लिए वापस आया था।

जिस कमरे में उसने मंडो के साथ अनेक रातें सुखपूर्वक बिताई थीं, वही राजा अब उससे विदा ले रहा था। अभागी रानी अब उसके कदमों में पड़ी थी–मुरझाई दृष्टि से, यद्यपि वह अभी यौवनावस्था में थी। दुख आंसुओं की निरंतर बहती धाराओं में द्रवित होने लगा और उसके उदास गालों पर बहने लगा। आज से उसकी तलाशती आँखों के सामने अपने स्वामी के बिना महल का सूनापन होगा। विजय की भूमि लंका अब अपने विजेता के बिना रहेगी। प्रकाश जो कभी क्षीण होना नहीं जानता था, अब हमेशा के लिए समाप्त होने जा रहा था। उसका पराक्रमी पति जिसका सामना करने से देवता भी डरते थे, अब एक मनुष्य के हाथों वह अपनी मौत से मिलने वाला था। उसका स्नेही पति, जिसने उसे शीतलता देने वाले छाते के समान संसार के आघातों से एक

लंबे समय तक बचाए रखा, अब अपने को मृत्यु के हवाले करने जा रहा था। अब से वह अकेली ही रहेगी जिसका कोई मित्र नहीं होगा, उसकी खुशियों को पूरा करने के लिए अथवा उसके दुख में सहभागी बनने के लिए। उसके पति के अलावा और कोई उसके हृदय की शून्यता को नहीं भर सकता। इसलिए उसने हाथ जोड़कर उससे प्रार्थना की कि वह सीता को वापस लौटा दे और उस विपत्ति से बचे जो सारी लंका और उसके स्वामी को निगलने के लिए तैयार है। लेकिन राक्षसराज अपनी बात पर अडिग रहा। कोई भी उसे सीता को वापस करने के लिए प्रेरित नहीं कर सकता था। जिसके लिए उसके पराक्रमी पुत्र और समर्पित सैनिक मौत को गले लगा चुके थे, उनके बलिदान के क्रोध से उसका सदा सामना होता रहेगा और वह देवताओं के लिए हँसी का पात्र भी बन जाएगा। इसलिए सीता को लौटाने का तो प्रश्न ही नहीं था। अब चाहे जो हो, वह बहादुरी से शत्रु का सामना करेगा और सम्मानपूर्वक प्रेम की वेदी पर अपने जीवन का बलिदान करेगा। अत्यंत दुख से भरे, किंतु दृढ़ संकल्प के साथ अंत में स्वयं को उसने मंडो से अलग कर लिया जैसेकि सूर्य ने स्वयं ही अपने को अपनी तेजस्विता से खाली कर लिया हो और युद्धक्षेत्र के लिए चल पड़ा जहाँ से उसे कभी नहीं लौटना था।

किंतु जब उसे इस सुंदर संसार से निश्चित रूप से जाना है तो क्यों न वह सराहनीय और गौरवपूर्ण तरीके से जाए? इसलिए उसने सुंदर देवताओं के सुंदर राजा इंद्र का स्वरूप धारण किया और शेरों द्वारा खींचे जाने वाले अपने रथ पर स्वयं को विराजमान किया। महल के गेट से बाहर निकलने पर एक बार पुरानी स्मृतियों ने उसे वापस लौटा लिया। उसने अपनी उदास आँखों से पीछे देखा, वहाँ महल था और उसकी मजबूत चहारदीवारी में वह छूट गयी थी जिसे वह सबसे ज्यादा प्यार करता था और जो उसके लिए सबसे महत्व की थी। उसकी जीवनरहित दीवारों के बीच उसने जीवन को जाना था और प्रेम की अनुभूति की थी लेकिन अब उससे बाहर जाकर वह मौत को जानेगा और नफरत का स्वाद चखेगा। महल, जो एक समय उसके लिए शांति का स्वर्ग था, उसका घर अथवा विश्रामस्थल था, अब घर वापसी पर उसका स्वागत नहीं करेगा।

वहीं एक बगीचा था–एक आनंददायक बगीचा, उसकी मीठी–मीठी यादों से भरा हुआ। बगीचा अब भी वहाँ था, फूलों से सजा हुआ और फलों से लदा हुआ। उसके अहाते में सीता थी जिसके लिए उसने अपना सब कुछ दाँव पर लगा दिया था, पर सब कुछ हार गया था। निस्संदेह वह उसे प्रेम करता था, अन्यथा उसके प्रेम के बदले में नफरत देने पर वह उस पर कभी क्रुद्ध क्यों नहीं हो सका? क्या वह उसे अंतिम बार देखने जाएगा? नहीं ऐसा नहीं हो सकता! सीता ने छीन लिया था उसकी खुशियों को, उसके जीवन को, उसके वंश को, और उसके देश को। लेकिन जिसे वह नहीं लूट सकी, वह था उसका सम्मान, जो उसके लिए सर्वोपरि था। निश्चित मृत्यु के इस द्वार पर आकर, वह उसे उसकी इस बहुमूल्य अंतिम धरोहर को लूटने की अनुमति नहीं देगा। वह किसी को भी हँसी उड़ाने का मौका नहीं देगा कि वह मृत्यु का सामना करने से पीछे हट गया। सीता की एक काल्पनिक मूर्ति उसने एक लंबे समय से अपने हृदय में संजो रखी थी और इसके साथ ही वह प्रेम की वेदी पर चढ़ेगा और बिना डगमगाए और बिना पीछे देखे अपने जीवन का बलिदान कर देगा।

इसप्रकार दुखी राजा आगे बढ़ गया। एक मौन अकेलेपन ने उसके हृदय पर दबाब बना दिया और उसने जीवित मौत की सिहरन अनुभूत की। क्या अंतिम क्षण इतना अकेला! क्या मौत शून्यता का आवरण ओढ़े थी! यदि ऐसा नहीं, तो क्या अपनी विशाल सेना के बीच में खड़ा वह अपने को एकाकी और अकेला महसूस कर रहा है? किंतु सेना भी अपना उत्साह खो चुकी थी। उसके आगे बढ़ने में कोई उत्साह नहीं था और उसके नगाड़ों में भी पराक्रम को जगाने के लिए कोई शक्ति नहीं थी। और इसकी ध्वजा, जो कभी आकाश में बड़े गर्व से फहराया करती थी, म्लान होकर ऐसे झुकी हुई थी कि मानो यह विजयी सेना के आगे–आगे फिर कभी नहीं चलेगी। चीत्कार करते हुए उल्लू उसके रथ पर झपट्टा मार रहे थे, जबकि चहकने वाली चिड़ियाँ अपने अभिनन्दित स्वर खो चुकी थीं। सैनिकों के जयघोष जो शत्रुओं के साहसी हृदयों में कँपकँपी भर देते थे, अब भूत–प्रेतों जैसी चीत्कारों से वातावरण को गुँजा रहे थे। यहाँ तक कि उसका रथ, जो अपनी डरावनी चरमराने वाली आवाज से भय पैदा कर दिया करता था, अब मातमी मौन के साथ आगे बढ़ रहा था। काले घने बादलों ने दिन की चमक को खत्म कर दिया था और बिजली की गर्जना

उसके सर्वनाश की घोषणा कर रही थी। वास्तव में, यह उसका निर्जीव प्रयाण था जिसका नेतृत्व वह स्वयं ऐसे रथ पर बैठकर कर रहा था, जो अब उत्साहहीन शेरों के द्वारा खींचा जा रहा था।

दसकंठ अब और लंबे समय तक उन अपशकुनों की कोपदृष्टि को नहीं सह सकता था जिन्होंने उसकी मृत्यु की पूर्व सूचना दे दी थी। उसने सेना को तेजी से आगे बढ़ाया। यदि सर्वनाश ही उसका लक्ष्य है, तब वह जितनी जल्दी हो सके, आए। मौत की सुलगती चिता में पल–पल जीवित मरने से तत्क्षण मर जाना ज्यादा अच्छा होता है।

युद्धक्षेत्र में राम से उसका सामना हुआ। दसकंठ ने घातक अस्त्र छोड़ा। लेकिन आज वह एक शत्रु से नहीं लड़ रहा था, वरन् अपने उद्धारक की आराधना कर रहा था जो उसे उसके सांसारिक जीवन और राक्षसी आत्मा से मुक्ति दिलाएगा। इसलिए जैसे ही उसके धनुष की प्रत्यंचा से बाण छूटा, वह अपने आप ही भुने हुए दानों और खिले फूलों में बदल गया और वे राम के रथ के सामने नीचे गिर कर बिखर गए। अयुध्या के विस्मित राजकुमार ने ऊपर देखा और दसकंठ के स्थान पर स्वयं को इंद्र से सामना करते हुए पाया। उत्कृष्ट सौंदर्य से चमकती हुई राक्षस की आकृति को देखकर वे हक्के–बक्के रह गए और उनके हृदय ने ऐसे सुंदर रूप को मार गिराने के लिए गवाही नहीं दी। लेकिन वायुपुत्र, जिन्हें स्त्री की सुंदरता के अतिरिक्त और कोई सुंदरता आकृष्ट न कर सकती थी, ने उन्हें सलाह दी कि वे किसी भी मिथ्या रूप, स्वाद, वाणी अथवा संगीत से प्रभावित न हों।

राम तुरंत सचेत हो गए। उन्होंने अपना ब्रह्मास्त्र उठाया और अचूक निशाने के साथ अपने धनुष से उसे राक्षसराज पर छोड दिया। घातक बिजली के समान वह बाण दसकंठ की छाती में घुस गया। राक्षस अपने राक्षसी स्वरूप में आ गिरा। जिसने समस्त सृष्टि पर मौत का आतंक मचा रखा था, आज वह स्वयं ही उसका शिकार हुआ पड़ा था।

अंततः सबसे बड़ा दुश्मन मारा जा चुका था–एक बहादुर प्रतिद्वंद्वी मारा जा चुका था, न कि पराजित किया गया था। मरते हुए राजा ने धीरे से अपनी

आँखें खोलीं। उसकी दृष्टि बिभेक पर पड़ी, उसने सोचा कि अपने सगे भाई का जीवन लेकर उसने अपना बदला ले लिया है। मरते हुए, उसके मन में विभिन्न प्रकार के भाव उठने लगे। मौत की छाया से निस्तेज हुई उसकी आँखें भावावेश, दुख, पश्चाताप और वेदना से जलने लगीं। उसके मुखों में से एक मुख से कुछ क्षीण शब्द निकले। बिभेक अपने भाई को कैसे मार सकता है? क्या उनकी शिराओं में एक जैसा रक्त प्रवाहित नहीं होता? उसके दूसरे मुख ने उलाहना मारते हुए कहा। अपने भाई को मारकर उसने केवल अपना ही रक्त बहाया है। अपने भाई के खून से रंगा अब वह लंका के सिंहासन पर आरूढ़ होगा। फिर भी, यह सोच कर प्रसन्नता होती है कि देश की स्वतंत्रता को कोई खतरा नहीं होगा।

इसके बाद मंडो का विचार उसके मन में आया और उसके प्रति फिक्र से भरे शब्द बिभेक से प्रार्थना करते हुए, उसके तीसरे मुख से लड़खडाते हुए बाहर आने लगे कि जैसे वह अपने राज्य की देखभाल करे वैसे ही वह उसकी शोकसंतप्त रानी की भी देखभाल करे। फिर मरता हुआ राजा अपने राजवंश के बारे में सोचने लगा जो उन्हें भगवान ब्रह्मा से उत्तराधिकार में प्राप्त हुआ था और उनके चौथे मुख ने बिभेक से निवेदन किया कि वे अपना स्नेहमय संरक्षण उसके राजवंश को प्रदान करे।

तब उसने सोचा कि वह कैसे अपने सच्चाई के रास्ते से भटक गया और यहाँ तक कि उसने स्वयं ही अपने लिए मौत के खूनी पंजों को आमंत्रित कर लिया। उसकी आँखें वेदना से जलने लगी थीं और पांचवें मुख ने अपने भाई को लड़खड़ाते शब्दों में चेतावनी देते हुए कहा।

पारलौकिक जीवन के द्वार पर खड़े राजा ने देखा कि उसका सूर्य अब अस्त होने को है। क्या उसके अपने ही मोहभ्रम से उत्पन्न इस स्थिति के लिए बिभेक के तीव्र रोष को ही जिम्मेदार बनाया जाए? वह आँख बंद करते समय क्यों न उस भाई को देखे जिसने उसे प्यार किया, न कि उसे जिसने उससे घृणा की? इसलिए पश्चाताप से भरे शब्दों में उसके छठे मुख ने बिभेक से माफी मांगी।

फिर जाते हुए शक्तिशाली राजा के मन में अपने सिंहासन, अपनी प्रजा का विचार कौंधा। अपने राजा की अनुस्थिति में प्रजा विद्रोह कर सकती है और उसके पूर्वजों के सिंहासन को हड़प सकती है। इसलिए उसके सातवें मुख ने भावी राजा को देश पर दृढ़ता और प्रेम से शासन करने के लिए चेताया।

अब उस शक्तिशाली राजा का अभिनय समाप्त होने वाला था और उसके जीवन पर पर्दा गिरने से पहले ही वह सब कुछ भूल गया। वह भूल गया कि वह एक राजा था जिसके पास कभी अपार शक्ति हुआ करती थी। वह भूल गया कि उसके पास उसका भाई बिभेक था जिसने अपने भाई और देश के साथ विश्वासघात किया था और इसके विनाशकारियों की सेवा की। उसे केवल यह याद था कि वह बिभेक का बड़ा भाई था जिसे उसने अपनी बांहों में लेकर दुलारा था, जिसे उसने सदा प्रेम और सुरक्षा प्रदान की थी, न कि घृणा और बदला। फिर से पश्चाताप से भरे शब्द उसके आठवें मुख से हकला–हकला कर निकलने लगे और राक्षस प्रायश्चित करने लगा कि यह उसकी अपनी दुष्टता थी जिसने उसके भाई को उससे विमुख कर दिया था।

इसी क्षण उसके जीवन की आखिरी लौ टिमटिमाई और उसकी मंद पड़ती चमक में राजा ने अनुभव किया कि वह समय आ चुका है जब उसे अपना यह पार्थिव शरीर छोड़ना है। उसने इसको भ्रातृत्व संरक्षण में बिभेक को सौंपने की इच्छा जताई और इससे पहले कि सूर्य भोर की सूचना दे, वह इसे अग्नि को सुपुर्द कर दे ताकि उसके अंतिम अवशेषों के समक्ष संसार को बुराई करने का अवसर ही न मिले।

तभी अचानक शरीर शक्तिहीन हो गया और उसके मन के सब विचार खत्म हो गए। उसके दसवें मुख से फुसफसाहट भी बाहर नहीं आई। लंका का शक्तिशाली राजा अब अपनी अंतिम विश्रामावस्था में था।

उसी समय हनुमान ने उसकी आत्मा के पात्र को कुचल दिया। इसप्रकार देवताओं और मनुष्यों के लिए आतंक बने दसकंठ के राक्षसी जीवन का अंत हो गया। स्वर्ग से फूलों की वर्षा होने लगी, दिव्य संगीत पूरे आकाश में

गूँजने लगा और मंद–मंद पवन शाश्वत शांति और खुशी के संदेश को प्रसारित करती हुई सम्पूर्ण सृष्टि में बहने लगी। संकटपूर्ण समय का अंत हो चुका था और एक खिला हुआ और सुस्पष्ट नया दिन संसार के लिए खुशियाँ लेकर आया था।

अध्याय 37

सीता की अग्नि परीक्षा

अपने स्वामी की मृत्यु के बाद लंका में शोक का वातावरण छा गया। इसके शांत वातावरण में कोई भी हास्य ध्वनि सुनाई नहीं पड़ रही थी, उसको अब विलापों की ध्वनियाँ चीर रही थीं। बिभेक अपने भाई के लिए विलाप कर रहे थे और मंडो अपने पति के लिए। लेकिन आँसू अब उसे वापस नहीं ला सकते थे जिसे मौत के झौंके ने अपने अंधकारमय सीने में समेट लिया हो। इसलिए उन्होंने अपने दुख को छिपा लिया और अपने राजा के शव का वीरोचित दाह संस्कार किया।

उसके बाद लंका का शोकाकुल वातावरण उल्लास में बदल गया। दुख विस्मृति में समा गया और सारा नगर लंका के खाली सिंहासन पर बैठे अपने नए राजा और साथ में उनके दाँयी तरफ रानी त्रिजटा तथा बाँयी तरफ रानी मंडो के स्वागत के लिए सौभाग्यशाली वैभव से चमकने लगा।

अब दसकंठ की मृत्यु और उसके दाह–संस्कार के संपन्न होने के बाद राम का हृदय स्वाभाविक रूप से सीता के लिए व्याकुल हो गया जिन्हें उन्होंने एक लंबे समय से नहीं देखा था। इसलिए, बिभेक तेजी से सीता के पास गए और उन्हें उनके स्वामी के सामने ले आए। यद्यपि राम उन्हें सबसे अधिक प्रेम करते थे, तथापि वे समाज द्वारा की जाने वाली निंदा से भयभीत थे, यदि उन्होंने लंबे समय से खोई सीता को अपनी पत्नी स्वीकार किया। उन्होंने चुपचाप पास आती हुई सीता को देखा–उनके गाल लज्जालु दीप्ति से आवृत्त थे और उनकी आँखें चोरी–चोरी इधर–उधर देख रही थीं जो उनमें व्याप्त खुशी को व्यक्त कर रही थीं। एक लंबे समय के बाद अब उनका अपने हृदय के स्वामी से पुनर्मिलन होने जा रहा था। उनके उत्सुक हृदय की प्रसन्नता बाहर झलक रही थी जो उनके गालों पर पहले से छाई लाली को और उद्दीप्त कर रही थी। लेकिन क्या वे उसे स्वीकार करेंगे और अनिष्ठावान पत्नी की तरह कहीं उसे दूर तो नहीं कर देंगे जिसने अपने चढ़ते यौवन को किसी तीसरे व्यक्ति के घर में बिताया हो? एक अनजाना भय उनकी खुशी में मिश्रित

हो गया और अचानक उनके मुखमंडल की लाली पर पीलापन छा गया। झिझकते हुए कदमों से वह अपने पति के पास पहुँचीं और कुछ दूरी पर जाकर बैठ गईं। अस्वीकार किए जाने के भय ने, अपने प्रति पति के प्रेम के संदेह ने उनको आगे बढ़ने से रोक दिया तथा वह और आगे न बढ़ सकीं।

लेकिन राम उनके प्रेम को प्रसन्नतापूर्वक पाने के लिए तथा उनके भय और चिंता को अपने चुंबन द्वारा दूर करने के लिए तड़प रहे थे। लेकिन सीता के लिए उनका प्रेम इतना दृढ़ नहीं था कि वह सामाजिक भर्त्सना को सह सकता। सीता को स्वीकार करने से पहले वे समाज के अनुमोदन को सुनिश्चित कर लेना चाहते थे। कैसे वे सीता की पवित्रता, जिस पर उन्हें दृढ़ विश्वास था, के बारे में समाज का संदेह दूर करें? अचानक एक अच्छा विचार उनके मस्तिष्क में कोंधा। वे सीता से उन उपहारों के बारे में पूछें जो संभवतः दसकंठ ने उन्हें दिए होंगे ताकि सीता उनके इशारे को समझते हुए अपनी अक्षत पवित्रता का प्रमाण दे सकें। स्वागत भरी मुस्कान से राम ने सीता से उन बहुमूल्य उपहारों के बारे में पूछा जो संभवतः दसकंठ से उन्होंने प्राप्त किए हों। क्या वे उनकी जिज्ञासा को शांत करने के लिए उन उपहारों को उन्हें दिखाएंगी और उनकी प्रशंसा प्राप्त करेंगी?

अप्रत्याशित वज्रपात! उनके स्नेही पति द्वारा किया गया एक निष्ठुर प्रश्न! यह उन पर ऐसे गिरा जैसे किसी कोमल पौधे पर बिजली गिर जाती है। शत्रु के धनुष से निकला बाण भी इतना तीक्ष्ण नहीं हो सकता था जितना उसके प्रिय पति का यह हृदयविदारक कथन। उसके पति की यह निष्ठुर दृष्टि उसे तलवार की धार से भी अधिक दर्द दे गई। दसकंठ अपने सभी प्रकार के अनैतिक प्रणय निवेदन से उसे इतनी यंत्रण नहीं दे पाया जितनी राम के इस निष्ठुर प्रश्न ने दे दी। वह प्रेम कैसे खुशी दे सकता है जो संदेह से घिरा हो? लेकिन, वह अपनी पवित्रता का एक ऐसा प्रमाण प्रस्तुत करेगी जो संदेही हृदयों को आश्चर्यचकित कर देगा तथा उसे एक आदर्श स्त्रीत्व के सिंहासन पर सुशोभित करेगा। देवताओं के समक्ष वह अग्नि में प्रवेश करेगी और सिद्ध करेगी कि उसकी पवित्रता की तेजस्विता आग की क्रुद्ध लपटों को भी ठंडा कर सकती है।

तत्पश्चात् राम ने आकाश में बाण छोड़ा और पवित्रता की शक्ति का साक्षी बनने के लिए सभी देवताओं को आमंत्रित किया। एक ही पल में राक्षसों का नगर देवताओं के नगर में बदल गया। सुग्रीव ने चिता तैयार की और राम के बाण ने इसमें अग्नि प्रज्ज्वलित की। तब वह कार्य शुरु हुआ जिसने देवताओं की आँखों को भी विस्मित कर दिया। धीरे–धीरे किंतु दृढ़ता से, प्रेम से भरी आँखों और पवित्रता से भरे हृदय से सीता ने कदम बढ़ाए और भस्म कर देने वाली लपटों में प्रवेश कर गईं। तब सभी चमत्कारों से ऊपर एक चमत्कार घटित हुआ। सीता की पवित्रता के सामने प्रकृति भी अपनी दिशा का अनुसरण करना भूल गई। चारों ओर से घिरी हुई सुनहरी आग की लपटों में से नारायण की दुखी पत्नी प्रकट हुई और उनके ऊपर ताजा जल छिड़क कर शीतलता प्रदान की। जलती हुई लकड़ियों की शुष्कता ने खिले हुए कमलों की कोमलता को जगह दी जो उनके कोमल कदमों को ग्रहण करने के लिए खिल गए और सारे वातावरण में एक हल्की सुगंध फैल गई। सोने की एक जीवित प्रतिमा, सीता अग्नि की लपटों के बीच में खड़ी थी और संदिग्ध संसार को दिखा दिया कि स्त्री की पवित्रता के सामने लपटें भी अपनी तेजी खो देती हैं और अग्नि भी शीतलता प्रदान करती है।

बिभेक, दसकंठ का भाई

रानी मंडो

अध्याय 38

राम की अयुध्या वापसी

सीता की अग्नि परीक्षा के बाद राम ने अयुध्या जाने की तैयारी आरंभ की, क्योंकि उनके वनवास का समय समाप्त होने वाला था और यदि वह समय पर वापस लौटने में असमर्थ रहे, सत्रुद जलती हुई चिता में जान दे देगा। भक्त विभीषण ने उनसे लंका के सिंहासन पर आरूढ़ होने के लिए काफी अनुनय–विनय की। किंतु राम ने उनका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया। वे तो केवल सत्य को पुनः प्रतिष्ठित करने के लिए लड़े थे, न कि उसके विधिसम्मत उत्तराधिकारी से उसका हक छीनने के लिए।

किंतु अपनी राजधानी के लिए प्रस्थान करने से पहले, उन्हें एक दूसरा युद्ध लड़ना पड़ा। दसगिरिवन और दसगिरिधर के पोष्य पिता अश्कर्ण को यह पता चल चुका था कि दसकंठ के साथ उनके दोनों पोष्य पुत्र भी राम के बाणों का शिकार बन चुके हैं। इसलिए, इससे पहले कि अपराधी द्वीप छोड़ कर चला जाए, अपने पोष्य पुत्रों का बदला लेने के लिए वह जल्दी से वहाँ पहुँच गया।

वे एक भयंकर और विस्मित कर देने वाला युद्ध लड़े। राम ने राक्षस के दो टकड़े किए किंतु तुरंत ही दोनों टुकड़े जीवित हो गए। अब राम को एक के स्थान पर दो राक्षसों से लड़ना पड़ा। हालांकि उनके तीक्ष्ण प्रक्षेपास्त्र ने उन दोनों को काट दिया, किंतु उनको बड़ा आश्चर्य हुआ कि वे दोनों अब चार हो गए। अब उन्हें ऐसे शत्रु के साथ क्या करना चाहिए, जिसका कटा हुआ शरीर ईस्वर की कृपा से दोगुना हो रहा था? लेकिन उनको सलाह देने के लिए वहाँ पर बिभेक थे। उत्साहित होकर राम ने एक बाण छोड़ा। इसने उन शरीरों के आधे–आधे टुकड़े कर दिए। और जैसे ही शरीर कटे, उन्होंने दूसरा बाण छोड़ दिया जिसने उन सभी को समेट कर नदी में डाल दिया और उन्हें जल समाधि दे दी जिसके बाद राक्षस दोबारा नहीं उठा। शत्रु से छुटकारा पाकर, राम ने अपने भाई और पत्नी के साथ अयुध्या के लिए प्रस्थान किया। उनके पीछे उनकी निष्ठावान सेना ने उनका अनुगमन किया। समुद्र पार करने के बाद बिभेक ने राम से पुल को नष्ट कर जल को प्रवाहित करने की प्रार्थना की। राम ने उनकी प्रार्थना को पूर्ण किया और एक बार फिर अनंत सागर की अनियंत्रित

लहरें नृत्य करने लगीं। वे अभी आगे बढ़े भी नहीं थे कि मेघों की गर्जना ने आकाश को घेर लिया। यह प्रलयकल्प था, काल–अग्गी से पैदा हुआ दसकंठ का पुत्र। पाताल में पला–बड़ा हुआ, उसे उस महाविपदा का पता नहीं लगा जो उसके पिता पर पड़ चुकी थी। लेकिन अब उसे अपने शक्तिशाली पिता के दुर्भाग्य का पता चल चुका था और इसलिए वह उसकी हार और मौत का बदला लेने आया था।

हनुमान ने प्रलयकल्प का मुकाबला किया। यह राक्षस दसकंठ का असाधारण शक्ति वाला पुत्र था। इसलिए चतुर वानर ने सबसे पहले उसे थकाने का प्रयत्न किया ताकि वे उसको सरलता से पराजित कर सकें। वानर ने एक भैंसे का रूप बनाया और कीचड़ में डूबने का दिखावा करने लगा। प्रलयकल्प उस रास्ते से गुजर रहा था। उसने भैंसे से राम और लक्ष्मण के बारे में पूछा। लेकिन संघर्ष कर रहे उस जानवर ने कीचड़ से बाहर निकालने और उसकी जान बचाने के लिए उससे सहायता मांगी। एक भीषण संघर्ष के बाद, जिसने उसकी सारी शक्ति क्षीण कर दी थी, वह भैंसे को बाहर निकालने में सफल हुआ।

हनुमान ने उसे राम और लक्ष्मण के पास जाने से रोकने का प्रयत्न किया। लेकिन राक्षस ने इसके बारे में एक न सुनी। तब उसके पास अपने वानर रूप में आने और उससे युद्ध करने के अलावा कोई दूसरा विकल्प न था। उन दोनों के बीच एक भयंकर युद्ध हुआ। अब भी राक्षस अपराजित था, यद्यपि वह थक चुका था। यह इसलिए था कि उसकी चमत्कारिक शक्ति ने उसके शरीर को इतना चिकना बना दिया था कि कोई उसे पकड़ कर नहीं रख सकता था। लेकिन वायुपुत्र ने अभी तक हार स्वीकार करना नहीं सीखा था। उन्होंने अपना ही एक प्रतिरूप बनाया, जिसने उनका स्थान ले लिया और वे स्वयं दिशपाई नाम के किसी ऋषि के पास उड़ कर चले गए और उनसे परामर्श मांगा। किंतु किसी को दूसरे की जान ले लेने के लिए शिक्षित करना तपस्वी जीवन के नियमों के विरुद्ध था। इसलिए मौखिक शिक्षण के स्थान पर सहायता करने के इच्छुक ऋषि ने मैदान पर रेत बिखेर कर एक संकेत दे दिया। बुद्धिमान वानर ने उनके संकेत को समझ लिया। वे तुरंत लौट आए और राक्षस के शरीर पर रेत बरसाने लगे जिससे उसके शरीर का सारा चिकनापन

समाप्त हो गया। हनुमान ने दृढ़ता से उसे पकड़ लिया और उसे अपने पिता के पास भेज दिया।

उस एकमात्र अवरोध से छुटकारा पाने के बाद, उन्होंने जंगल के रास्ते से आगे बढ़ना शुरु किया–उनके आँसुओं और मुस्कानों के दृश्यों ने उन्हें उन दुखों की याद दिला दी जो उन्होंने सहे थे और उन खुशियों की जिनका उन्होंने आनंद लिया था। अंत में वे खिडकिन पहुँचे जहाँ निलाबद ने उनका हार्दिक स्वागत किया। वहाँ से रास्ते में राम के निष्ठावान मित्र खुखान से मिलते हुए उन्होंने सीधे अयुध्या के लिए प्रस्थान किया। भरत और सत्रुद को बचाने के लिए, जो उस समय राम के लौटने की आशा को छोड़कर जलती हुई चिता में अपने जीवन को झोंकने की तैयारी कर रहे थे, वे बिल्कुल सही समय पर अयुध्या पहुँच गए। प्रसन्नता ने सारे नगर को रोमांचित कर दिया और खुशी से प्रत्येक का मुखमंडल खिल उठा। राम का नगर में वापस आना ऐसा ही था जैसेकि रात के बाद सूरज वापस आता है। अब वे राजसिंहासन पर आरूढ़ होंगे और अपनी प्रजा को समृद्धि की ओर ले जाएंगे।

उनकी विजय ने एक विशाल राज्य को उनके नियंत्रण में ला दिया था। इसलिए कृतज्ञ राजा ने उसे अपने मित्रों में बाँट दिया जिन्होंने उनके सम्मान को पुनः प्रतिष्ठापित करने के लिए अपने जीवन की बाजी लगा दी थी। लक्षण को उन्होंने रोमागल राज्य दिया जिसे पहले खर द्वारा शासित किया जाता था। भरत और सत्रुद को उन्होंने अपना प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी बना दिया। सुग्रीव को फ्राया वैयवंग्स महासुरतेज रअंग्श्रि के नाम से खिडकिन का राजा बना दिया। विभेक को राजा दशगिरिवंग्स बंग्सब्रह्माधिराज रंगसर्ग के नाम से लंका का राजा बनाया गया। फ्राया इंद्रानुभब के नाम से अंगद को खिडकिन का युवराज बना दिया। जंबुवान को पंग्ताल का राजा बना दिया गया और इसके साथ ही जंभुवराज को उनका प्रत्यक्ष उत्तराधिकारी बना दिया गया। खुखान को फ्राया खुखांधिपति की उपाधि के साथ पुरीराम देश दे दिया गया। हनुमान को फ्राया अनुजित चक्रकृष्ण बिबादवंग्स नाम के साथ अयुध्या का राजा बना दिया गया। किंतु फ्राया अनुजित का उस देश का राजा बनना नियति निर्धारित नहीं था जिसके विधिसम्मत उत्तराधिकारी नारायण के अवतार थे, ज्यों ही वे सिंहासन पर विराजमान हुए त्यों ही एक जला देने वाली संवेदना उनके

सारे शरीर में फैल गई और सलामी लेने की क्रिया उन्हें ऐसी मालूम पड़ी कि मानो बहुत से भाले उनकी आँखों को वेध रहे हों। वे सिंहासन से उतर गए और उसे विधिसम्मत राजा को सौंप दिया।

तब कृतज्ञ राम ने एक बाण छोड़ा और फ्राया अनुजित को उसका पीछा करने के लिए कहा। जहाँ पर यह बाण जाकर गिरेगा, वहीं पर वे उनके लिए एक नगर का निर्माण करेंगे। बाण एक नौ चोटी वाले पर्वत पर जाकर गिरा और उसे ध्वस्त कर मिट्टी में मिला दिया। अपनी पूँछ से झाड़ू लगाकर फ्राया अनुजित ने उस स्थान को साफ किया, एक चहारदीवारी बनाई और राम के पास लौटे, जिन्होंने विष्णुकर्मा को फ्राया अनुजित के लिए एक नगर बनाने का आदेश दिया। नगर का निर्माण किया गया, इसे नाबपुरी नाम दिया गया और फ्राया अनुजित को इसका शासक बना दिया गया।

अब राजा राम सब राजाओं के राजा हो गए और उनके भद्र शासन और नेतृत्व में सारे साम्राज्य में सुख–शांति का वातावरण हो गया।

काल–अग्गी, दसकंठ की पत्नी प्रलयकल्प

अध्याय 39

लंका में विद्रोह

अब, चक्रवाल का राजा और दसकंठ का मित्र महापाल देबासुर अपने मित्र से मिलने के लिए आया, लेकिन जब उसे यह पता चला कि उसकी हत्या कर दी गई है, उसे बड़ा दुख हुआ। उसने बिभेक, जो अब राजा दसगिरिवंग्श था, को बुलवाया। लेकिन उसने उसकी प्रार्थना को स्वीकार करने से मना कर दिया। इस पर चक्रवाल के राजा ने लंका को चारों ओर से घेर लिया।

राजा दसगिरिवंग्श के पास अब कोई चमत्कारिक शक्ति नहीं थी केवल भविष्य की अंधकारमय छाती को वेधने की शक्ति के। इसलिए यह निर्णय किया गया कि प्रत्येक सप्ताह राम उसके पास एक बाण भेजेंगे और यदि कुछ गलत घटता है तो दसगिरिवंग्श उसके साथ एक टिप्पणी नत्थी कर उसे वापस भेज देंगे। उस समय जब देबासुर ने नगर को चारों ओर से घेर लिया था, बिभेक राम के बाण की प्रतीक्षा कर रहे थे। बाण पहुँचा और टिप्पणी के साथ लौट गया। राम ने फ्राया अनुजित को उसकी मदद के लिए भेज दिया। उस विशाल वानर ने शत्रु का सामना किया। उन्होंने राक्षस की दोनों टांगों को पकड़ा और उसे दो भागों में फाड़ दिया। लेकिन यह देखकर वे आश्चर्यचकित रह गए कि दोनों भाग आपस में जुड़ गए और राक्षस जीवित खड़ा हो गया। अंत में बिभेक के निर्देश पर उन्होंने पूरी ताकत से उसकी छाती फाड़ दी और उसका दिल बाहर निकाल लिया। राक्षस गिरकर मर गया। चक्रवाल के रिक्त सिंहासन पर पाओवानासुर को बैठाकर हनुमान अपने देश लौट गए।

इस आपदा के बाद एक लंबा समय सुखद रहा। उसके बाद राजादसगिरिवंग्श पर दूसरी विपत्ति आ पड़ी–एक विद्रोह जिसने उसे बेड़ियों में जकड़ लिया। जब मंडो बिभेक की रानी बनी थी, वह पहले से ही गर्भवती थी। समय आने पर उसने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम बैनासुरीबंग्श रखा गया। बच्चा अपने पिता की पहचान से अनभिज्ञ बड़ा होता गया। जब वह वयस्क हो गया, उसके शिक्षक वारानिसुर ने उसके पिता की दुखद कहानी से

उसे परिचित करवाया। इसने उसके मन में अपने पिता का बदला लेने और उसकी इस शर्मनाक स्थिति के निर्माता के सर्वनाश की तीव्र भावना को जाग्रत कर दिया। मंडो ने अपने पुत्र को उस रास्ते पर चलने से रोकने का प्रयास किया जिसका अंत उसके विनाश में होना था, किंतु वह व्यर्थ सिद्ध हुआ।

दोनों राक्षसों, बैनासुरीबंग्श और वारानिसुर ने तब मालिवन देश के लिए प्रस्थान किया जिस पर दसकंठ के मित्र राजा चक्रवर्ती का शासन था। लेकिन उस देश को चारों ओर से भस्म कर देने वाली आग की दीवार और मौत के पानी की खाई ने इतनी अच्छी तरह से घेर रखा था कि नगर में प्रवेश के सभी रास्ते बंद थे। लेकिन एक ऋषि से सीखे गए एक वैदिक मंत्रोच्चारण से उसने आग बुझा दी और उन्होंन पानी पर रेत बिछाई जिससे उन्हें खाई को पार करने में सहायता मिली।

मालिवन के राजा ने अपने मित्र के अनाथ पुत्र का अपने पुत्र की तरह स्वागत किया। थोड़े ही समय में सेना का सेनापति बनकर उसने लंका पर चढ़ाई की, बिभेक को हराया और उसे बेड़ियों में जकड़ दिया और लंका के राजा के रूप में बैनासुरीबंग्श को प्रतिष्ठापित कर दिया। अब बेनजाकया से जन्मा हनुमान का पुत्र असुरफद किसी प्रकार से लंका से भागने में सफल हो गया और उसने अपने पिता से सहायता मांगी। वह जानता था कि उस समय उसके पिता एक पर्वत पर तपस्वी जीवन बिता रहे हैं।

अपनी मूर्खता को दूर करने के लिए ही फ्राया अनुजित ने तपस्वी जीवन स्वीकार किया था। एक बार, जंगल में घूमते हुए वे हरी पत्तियों में से झांकते हुए मोहक पके हुए आमों की ओर आकृष्ट हो गए थे। वानर तुरंत पेड़ पर चढ़ गया और आम तोड़ने लगा। लेकिन ऐसा करने से उसका चिपचिपा दूध उसके सिर पर फैल गया। उसने अपने हाथों से इसे पौंछना चाहा लेकिन वह ऐसा न कर सका। चूंकि वह जन्म से एक वानर था, उसने अपने दोनों हाथों और पैरों का उपयोग किया। उसके इस वानरी करतब पर उसकी पत्नियाँ जोर–जोर से हँसने लगीं। इससे वानर ने स्वयं को अपमानित महसूस किया। इसलिए अपने अपमान को धोने के लिए उसने तपस्वी जीवन बिताने का संकल्प लिया। वह दिशफाइ ऋषि के पास पहुँचा। लेकिन एक वानर तपस्वी कैसे हो

सकता था? इसलिए उनके अनुरोध पर वानर ने एक मनुष्य का स्वरूप धारण किया और एक पर्वत पर तपस्वी जीवन बिताने लगा।

असुरफद ने उन्हें वहाँ ढूंढ लिया। किंतु एक शक्तिशाली वानर के स्थान पर जिसकी वह अपेक्षा कर रहा था, उसकी दृष्टि के सामने एक मनुष्य था। असुरफद ने उससे हनुमान के बारे में पूछा। जब उसे बताया गया कि वह मनुष्य ही स्वयं हनुमान है, उसे बहुत गुस्सा आया। इतना कमजोर मनुष्य उसका पिता कैसे हो सकता है जिसने चंद्रमा और तारों को मुँह में रखा था? अपने पुत्र में अपने लिए इतना आदर देखकर हनुमान बहुत प्रसन्न हुए। अपने पूर्व रूप में आकर और चांद तथा तारों को मुँह में रख कर उसके सारे संदेह दूर कर दिए। असुरफद ने तब उस संकट के बारे में उन्हें बताया जो राजा दसगिरिवन के रूप में आ चुका था।

तत्पश्चात् वे शीघ्र ही खिडकिन गए, सेना का सारा प्रबंध किया और तुरंत अयुध्या पहुँचे। वहाँ बरत और सत्रुद भी उनसे जुड़ गए। सेना ने तब लंका के लिए प्रस्थान किया। इस बार समुद्र को बांधने की कोई आवश्यकता न थी, क्योंकि निलाबद ने अपने शरीर का विस्तार कर लिया और दोनों किनारों को जोड़ते हुए जीवित पुल बन कर लेट गया। सेना ने समुद्र को पार कर लिया और मरकट पर्वत पर अपना शिविर लगा दिया। सभी संधि वार्ताओं के असफल हो जाने पर, उन्होंने अपने अस्त्र उठाए और वह क्षेत्र, जो मखमली हरी घास से ढकना शुरू हो चुका था, दोबारा खून से नहला दिया गया। बैनासुरीबंग्श मारा गया और बिभेक आजाद हुए। फिर विजयी सेना ने मालिवन की ओर प्रस्थान किया और देश को चारों ओर से घेर लिया।

राजा ने युद्ध किया, किंतु अपने मित्र दसकंठ से अधिक कुछ न कर सका। एक–एक करके उसके तीनों पुत्र मारे गए, सूरियभब और प्रलयचक्र बरत के द्वारा मारे गए और नन्युबक्त्र सत्रुद के द्वारा। उसके बाद उसके मित्र, कुरुरशत्र का राजा वैतल निलाबद द्वारा मारा गया। अंत में राजा चक्रवर्ती बरत के घातक प्रक्षेपास्त्र, ब्रह्मास्त्र का शिकार हुआ।

मालिवन के खाली सिंहासन पर मच्छानु, जिसकी लंबी पूँछ राम के द्वारा काटी जा चुकी थी, को फ्राया हनुराज नाम से, साथ ही चक्रवर्ती की पुत्री रत्नमाली को उसकी रानी के रूप में प्रतिष्ठापित किया गया। निलाबद को उसकी पूर्ण इच्छापूर्ति के साथ पुरस्कृत किया गया। उसे फ्राया अभयबादवंग्श के नाम के साथ जम्बु के युवराज के रूप में प्रतिष्ठापित किया गया। और सभी अन्य सेनापतियों जैसे, हनुमान के पुत्र, असुरफद, इंद्र के पुत्र, कान्युवेक और जामालिवान, जिन्होंने युद्ध को जीतने में सहायता की, को भी उनके द्वारा जोखिम उठाने के लिए पुरस्कृत किया गया। इसप्रकार रक्तपात का युग समाप्त हो गया और सारे राज्यों में शांति का साम्राज्य हो गया जो राम की दयालु प्रभुसत्ता के लहराते हुए ध्वज के नीचे आ गए थे[1]।

असुरफद

[1]कथानक का विस्तार लंका अध्याय के सद्‌श होता है। वही कुशलता अपनाई गई है। एकमात्र बदलाव हम पात्रों या वस्तुओं में देखते हैं। उदाहरण के तौर पर, कपिलाबद के स्थान पर हम मेघाबद पाते हैं। लक्षण के स्थान पर हम इसका शिकार सत्रुद को पाते हैं। नागपाश, जो सर्पों को उत्पन्न करता है, के स्थान पर हम हेरा को पाते हैं जो एक समुद्री परदार सर्प है जिसके एक हजार फन होते हैं। वैसे ही यज्ञ और वानरों द्वारा उनको विफल करना, वही बुरे शकुन, मृत्योन्मुख चक्रवर्ती के चारों मुखों से वही पश्चाताप के शब्द। चूंकि कथानक का विस्तार मात्र एक नकल के और कुछ नहीं है, इसलिए हमने अपने सार को केवल युद्ध के सार तक ही सीमित रखा है।

अध्याय 40

सीता का निर्वासन

आतंक के दिन बीत चुके थे और व्यवधानरहित खुशी के दिन आ चुके थे। किंतु भाग्य जैसा चंचल है वैसा ही पक्षपाती है। कभी वह अपने पूरे वैभव के साथ मुस्कराता है और कभी वह अपना क्रुद्ध रूप दिखलाता है। किसी के लिए तो वह फूलों की सेज बिछाता है और किसी के लिए वह काँटों की सेज आरक्षित रखता है। इसप्रकार चंचल और पक्षपाती भाग्य मनुष्य के जीवन के साथ मनमौजी ढंग से खेल खेलता है जैसे उसने सीता के जीवन के साथ खेला।

उस समय अयुध्या पर भाग्य की कृपा थी और उसी प्रकार सीता पर भी थी। वास्तव में उनकी खुशियों की कोई सीमा नहीं थी। वे राक्षसों की कैद से मुक्त हो गई थीं और अब वे अपने पति की पराक्रमयुक्त, प्रेममयी बाँहों में थीं। इसके अतिरिक्त, वे एक बच्चे को भी जन्म देने वाली थीं जो एक दिन अयुध्या के सिंहासन को सुशोभित करने वाला होगा। यह उनके लिए अपार प्रसन्नता का स्त्रोत था और उन्होंने सोचा कि वे भाग्य की परम कृपा पात्र हैं।

किंतु अफसोस! यह तो चंचल भाग्य की कृपा की एक झलक थी। बहुत शीघ्र ही वह लुप्त हो गई और उसका स्थान उसकी क्रुद्ध और निष्ठुर दृष्टि ने ले लिया। सीता फिर से दुख के सागर में डूब गईं।

हुआ यूँ कि सम्मानखा की पुत्री अदुल अपने सगे–संबंधियों की मृत्यु का बदला लेने की सोच रही थी। उसकी स्थिति इस बात की अनुमति नहीं दे रही थी कि वह शत्रु को शस्त्रों से चुनौती दे। इसलिए अपने प्रतिशोध को तृप्त करने के लिए उसने राम और सीता के बीच संबंध विच्छेद कराने की सोची। अंततः इसके लिए उसे अपने आप ही एक सुनहरा अवसर मिल गया।

एक बार राम कुछ समय के लिए जंगल में प्रवास हेतु चले गए और सीता महल में अकेली रह गईं। पति की अनुपस्थिति ने महल के सारे सुख फीके कर दिए। इसलिए उन्होंने नदी के ठंडे पानी में नहा कर क्षणिक सुख पाने की सोची। उस राक्षसी ने इस अवसर का लाभ उठाया। उसने महल में काम करने वाली किसी स्त्री का स्वरूप धारण किया और सीता के सामने उनकी एक दासी बनकर प्रस्तुत हो गई। राम की निःशंक रानी ने इस मायावी दासी से अपना काम करवाने में कोई संकोच नहीं किया।

अब, एक दिन मायावी अदुल ने यह जानने में भारी उत्सुकता दिखाई कि दसकंठ कैसा दिखाई देता था। उसने सीता से स्लेट पर उसकी आकृति खींचने की प्रार्थना की। चूंकि उनके मन में कोई संदेह नहीं था, अतः उन्होंने अपनी उत्सुक दासी की इच्छा को पूरा कर दिया।

जैसे ही सीता ने आकृति पूरी की, वैसे ही प्रतिशोधी दासी उनकी दृष्टि से ओझल हो गई और स्लेट पर खींची गई आकृति में प्रविष्ट हो गई। उसी क्षण राम अपने प्रवास से लौट आए। भयाकुलता से उन्होंने आकृति को मिटाने का बार–बार प्रयत्न किया। लेकिन पूरी तरह से भयाकुल वे जितना अधिक उसे मिटातीं, उतनी ही अधिक स्पष्ट वह दिखाई देने लगती। परेशान होकर उन्होंने वह स्लेट बिस्तर के नीचे छिपा दी।

अब राम प्रतिदिन की तरह विश्राम करने के लिए आए। ज्यों ही वे बिस्तर पर लेटे, वे अत्यधिक गर्मी का अनुभव करने लगे। इसका कारण था कि वह राक्षसी स्लेट के अंदर से असहनीय गर्मी छोड रही थी। राम के स्वयं को ठंडा रखने के सारे प्रयास व्यर्थ सिद्ध हुए। उन्हें ऐसा लगा कि मानो लपटें उन्हें जला रही हों। अंत में उन्होंने लक्षण को बुलवाया जो जल्दी से अपने भाई के कमरे में पहुँचे और अचानक उत्पन्न हुई गर्मी का कारण ढूंढने लगे। उनकी खोज ने उस स्लेट को ढूंढ लिया जो अपने आप ही सारी कहानी कह रही थी।

राम विस्मित रह गए। किसने इस दिवंगत शैतान की आकृति बनाने की हिम्मत की? उनके आश्चर्य की सारी सीमाएं पार हो गईं जब सीता ने स्वीकार किया कि यह आकृति उन्होंने बनाई थी।

सीता के स्वीकार्य ने राम को अधमरा कर दिया। क्या वह दसकंठ से प्यार करती थी? क्या एक निष्ठाहीन पत्नी के लिए उन्होंने अपने और अपने मित्रों के जीवन को दाँव पर लगा दिया था? क्या एक विश्वासघाती ने उनके साथ बिस्तर साझा किया था? उनका दुख क्रोध में बदल गया और उन्होंने लक्षण को सीता को वहाँ से ले जाने, उसे मार देने और उसके विदीर्ण हृदय को उन्हें लाकर दिखाने की आज्ञा दी। भविष्य में आने वाले उनके उत्तराधिकारी की अभागी माँ का अपने कार्य के बारे में सफाई देने का प्रयत्न व्यर्थ ही रहा। दुराग्रही राम को उसकी बातों से सहमत नहीं होना था, उसे स्वीकार करना और अपने क्रूर आदेश को वापस नहीं लेना था।

यद्यपि लक्षण को उन पर कोई संदेह नहीं था, फिर भी पीड़ित हृदय से उन्हें सीता को जंगल में ले जाना पड़ा। सीता ने उनका अनुगमन किया, उनके गाल गहरे दुख से बहने वाले अश्रुओं से भीग रहे थे।

कुछ दूरी पार करने के बाद वे एक विशाल वृक्ष के पास पहुँचे। उसकी ठंडी छाया में सीता अपने पति का आदेश पूरा करने के लिए बैठ गईं। उनके ऊपर आघात उस के द्वारा किया जाना था, जो उनके लिए उतना ही प्रिय था जैसा उनका अपना भाई। फिर भी वे अपने प्रिय भाई लक्षण से विदा लिए बिना संसार को नहीं छोड़ सकती थीं। प्रिय लक्षण! उन्होंने उनको सदैव एक बहन की तरह प्रेम किया और बदले में सदा एक भाई के समर्पण को प्राप्त किया। हाथ में हाथ पकड़ कर, कंधे से कंधा मिलाकर, उन्होंने एक साथ दुख को सहन किया! लेकिन इसके बाद, उनकी स्नेहभरी आँखें कभी नहीं मिलेंगी। किस कारण से वह मौत के लिए भेजी गई है? एक छोटी सी बात के लिए—मात्र आकृति बनाने के लिए! वह पवित्र और निर्दोष मरने के लिए जा रही है और एक दिन उसकी मौत सत्य को उजागर कर देगी। उस मौत की कौन परवाह करे जिसके लिए किसी को अपनी निर्दोषता सिद्ध करनी पड़े? शंकालु जीवन जीने से निर्दोषता को सिद्ध करने के लिए मर जाना अधिक अच्छा है। इसलिए लक्षण, कठोर प्रहार करो ताकि जीवन के बंधन को प्रेम के बंधन से काटा जा सके।

लक्षण का हृदय दुख से फट गया। कैसे वह अपनी तलवार उस के खिलाफ उठा सकता है जिसका उसने अपनी बहन के समान आदर किया हो? कैसे वह उस स्त्री की जान ले सकता है जिसके गर्भ में अयुध्या के सिंहासन का भावी उत्तराधिकारी है? और इससे भी अधिक कैसे वह किसी निर्दोष के रक्त को बहा सकता है?

सीता उनके संकोच को समझ गईं और उन्हें उनके लिए दुख का अनुभव हुआ। वे समझ गईं कि लक्षण का हृदय उनका साथ नहीं दे रहा है और वे स्वयं को अन्यायपूर्ण आदेश को क्रियान्वित करने के लिए प्रेरित नहीं कर पा रहे हैं।

चूंकि सीता का जीवन अपना उज्ज्वल भविष्य खो चुका था, वह मरने के लिए कृतसंकल्प थीं। इसलिए लक्षण को इस क्रूर कार्य को करने हेतु मनाने के लिए उन्होंने जानबूझ कर उन पर झूठे आरोप लगाने शुरु कर दिए, ताकि वे निस्संकोच उनके जीवन को समाप्त करने के लिए उत्तेजित हो सके। क्या वे अपने भाई के आदेश से उनका वधिक बनकर नहीं आये हैं? फिर वे अब क्यों कमजोर पड़ गए हैं? क्या उन्हें कोई गुप्त उद्देश्य पूरा करना है जब संयोग से वे दोनों एकांत वन में आ गए हैं? क्या उनके मीठे शब्द केवल उन्हें धोखा देकर फँसाने के लिए थे क्योंकि वे अब उनकी बंधक हैं?

जब लक्षण ने इन अन्यायपूर्ण आरोपों को सुना, उनका हृदय काँप उठा। फिर भी, उनके आरोपों में सच्चाई दिखाई देती है, कोई भी उसे निर्दोष नहीं मान सकता क्योंकि एक बार जब वह स्वयं ही एक अकेली औरत के साथ सूने जंगल में आ गया है। हर व्यक्ति अपने मन के अनुसार दूसरे को परखता है। स्वाभाविक है कि शंकालु संसार, जिसका मन विद्वेषपूर्ण होता है, निस्संदेह ही उसे व्यभिचार का अपराधी मान लेगा। इसलिए यह अधिक अच्छा होगा कि सामाजिक निंदा के डंक को सहने की अपेक्षा वह उसे मार दे, जैसाकि उसे आदेश दिया गया है।

उसने अपनी तलवार उठाई। लेकिन संवेदना ने उसके हृदय को अभिभूत कर लिया और वह नहीं उठी। उसके विवश हाथों से तलवार छूट गई।

अपने संकल्प को दृढ करके उसने दूसरी बार अपनी तलवार उठाई। वहाँ उनकी शिकार बैठी थी, अपनी पवित्रता की प्रतिष्ठा में महान और उनके साथ था उनका वधिक, जो मनहूस हत्या के कलंक से घृणित व्यक्ति होने वाला था। दया और पश्चाताप ने उन्हें अशक्त कर दिया था और उन्होंने अपनी तलवार पर नियंत्रण खो दिया। वह जमीन पर दोबारा गिर पड़ी।

अब लक्षण अपनी आँखों से भी भयभीत हो गए जिन्होंने दो बार दया और प्रायश्चित दिखाकर उनकी सच्चाई को उजागर कर दिया। इसलिए उन्होंने इन्हें पूरी तरह कस कर बंद कर लिया, फिर तेज गति से उन्होंने अपनी तलवार सीता की कोमल गरदन पर गिरने दी। तलवार के गिरने के साथ वे भी अपने शिकार के पास मूर्च्छित होकर गिर पड़े। लेकिन लक्षण की तलवार ने कभी निर्दोष का खून नहीं पिया था और इस बार भी इसने नहीं पिया। यह उनकी गरदन पर एक तीक्ष्ण प्रहार की तरह नहीं गिरी जो उसे काट देती बल्कि सुगंधित फूलों की माला की तरह गिरी। वास्तव में उनकी पवित्रता ने तलवार से उसकी घातक तीक्ष्णता छीन ली थी।

सीता ने लक्षण की दण्डवत मुद्रा देखी। दुख ने उनके हृदय को आक्रांत कर दिया और वे भी चेतनाशून्य होकर गिर पड़ीं। कुछ समय के बाद उन्होंने अपनी आँखें खोलीं। जीवन की किसी प्रकार की हलचल के बिना लक्षण अब भी वहाँ मूर्च्छित पड़े थे। बिना ढाढस बांधे उन्होंने देवताओं का उन पर दया करने और लक्षण का जीवन बचाने के लिए आह्वान किया। उनकी प्रार्थना फलीभूत हुई। उनके भस्मवत मुखमंडल पर जीवन की झलक दिखाई दी और उन्होंने अपनी आँखें खोल दीं।

उनकी आँखों के सामने यह क्या था? क्या सीता अब भी जीवित है।? यह कितनी खुशी की बात थी कि निर्दोषता ने अपराध पर विजय पाली थी, सत्य ने झूठ को पराजित कर दिया था। वे उठे और देवताओं से सीता को अपने दैवीय संरक्षण में लेने के लिए प्रार्थना करके, उन्होंने उदास मन से सीता से विदाई ली और अपने कदमों को अयुध्या नगर की ओर धीरे–धीरे बढ़ाने लगे।

लेकिन केवल उनके शरीर ने ही सीता को छोड़ा था, उनका मन अब भी अपनी बहन के इर्द–गिर्द घूम रहा था। उन्हें अब बड़ी संख्या में जंगली जानवरों वाले जंगल में अकेले ही रहना पड़ेगा और वहाँ पर कोई लक्षण नहीं होगा जो उन पर चौकन्नी नजर रख सकेगा। मूसलाधार वर्षा उनकी हड्डियों तक को गला देगी और धूप का आघात उनकी गोरी त्वचा को झुलसा देगा। संकट से आमना–सामना होने पर, जब वह किसी को सहायता के लिए ढूंढेंगी तो सूने जंगल का शून्य वातावरण उनकी भयभीत आँखों के सामने होगा। चलने से थककर, जब उनका थका–मांदा शरीर बिना आराम अथवा विश्राम किये आगे बढ़ने से इंकार कर देगा, तब यह केवल कठोर मैदान ही होगा जो उनके इस असहाय शरीर को स्वीकार करेगा और उनके गर्भ में नारायण का जो वंशज है, वह पहली बार महलों के राजसी वैभव में नहीं, वरन् जंगलों के निर्मम वातावरण में अपनी आँखें खोलेगा। यह कितनी दयनीय स्थिति होगी! दुखद विचारों ने उन्हें उनके चलने की शक्ति से लगभग वंचित कर दिया। वे स्वयं को अभागे अयुध्या नगर की ओर केवल घसीट सकते थे।

लेकिन निर्दयी भाग्य भी शायद उनकी प्रतीक्षा करता, यदि वह सीता का हृदय दिखाने में असफल होते। इसलिए इंद्र ने दया करते हुए रेत पर पड़े एक मृत मृग की रचना की। उस रास्ते से गुजरते हुए लक्षण की दुख से भरी दृष्टि उस लाश पर पड़ी। उन्होंने तुरंत उसका दिल सीता का दिल बता कर दिखाने के लिए निकाल लिया और दुखी मन से राम को उनके निष्ठुर आदेश का पालन किये जाने के बारे में विवरण देने के लिए अपने रास्ते पर चल दिए। राम ने वह दिल देखा और उनके ईर्ष्यालु होठों से केवल एक ही टिप्पणी बाहर आई कि उसका हृदय उतना ही गंदा था जितना एक पशु का।

अध्याय 41

मंकुट और लब का जन्म

जंगल में अकेली रह जाने पर, सीता का अवर्णनीय दुख अब आँसुओं के रूप में उमड़ कर बाहर आ गया। आँसू, जिन्होंने अपने पति की दया पाने के लिए व्यर्थ ही सफाई दी थी, अब उन्होंने स्वर्ग के देवता की सहानुभूति को अपनी ओर खींचा। दयालु देवता ने एक भैंसे का रूप धारण किया और उनके सामने प्रकट हुए, उसकी मूक आँखों ने उन्हें सहानुभूतिपूर्वक अपने पीछे चलने के लिए आमंत्रित किया। वे तुरंत उस दयालु पशु के पीछे चलने लगीं और बहुत शीघ्र ही स्वयं को ऋषि वजमृग[1] के आश्रम में पाया।

दयालु हृदय ऋषि ने उन्हें पिता के जैसा घर प्रदान किया, जो छप्पर का तो था किंतु सुरक्षित, जिसकी छत के नीचे उन्होंने अयुध्या के राजा के उत्तराधिकारी को जन्म दिया। इंद्र की दिव्य रानियाँ स्वर्ग से नीचे आईं और परित्यक्त रानी तथा अयुध्या के भावी राजा के लिए दाई की भूमिका निभाई।

ऋषि ने उसका नाम मंकुट[2] रखा। सीता के अंधकारमय जीवन में यही एक आशा की किरण थी। बच्चे की मुखाकृति में उन्होंने अपने पति की झलक देखी लेकिन इसने केवल उनके दुख को और बढ़ा दिया जो उनके हृदय को निर्दयता से निरंतर पीड़ित कर रहा था। एक शक्तिशाली राज्य के उत्तराधिकारी ने एक एकांत पेड़ की छाया में जन्म लिया! संसार में बच्चे का स्वागत करने के लिए पिता नहीं! पोषण करने और नींद में सुलाने के लिए कोई दासी नहीं! एक सम्राट के बालक का जन्म एक अभागी माँ की अभावग्रस्त गोद में! टूटे हृदय से निकली एक गहरी आह के साथ उन्होंने अपनी अंगूठी निकाली, जो उनके पास एक मात्र संपत्ति थी और इसे उन्होंने अपने नवजात शिशु की कोमल अंगुली में

---

[1]वा. वाल्मीकि

[2]वा. कुश

पहना दिया। उसके बाद वह धीरे–धीरे अपने पिता तुल्य ऋषि के आश्रम की ओर चल दीं।

उसके बाद उन्होंने अपने शिशु को ऋषि की देखरेख में छोड़ दिया, जो उस समय गहन ध्यान में लीन थे और स्वयं स्नान करने चली गईं। उन्होंने वहाँ बहुत सारे वानरों को एक पेड़ से दूसरे पेड़ पर छलांग लगाते हुए देखा जिन्होंने अपने छोटे बच्चों को दृढ़ता से अपनी छाती से लगा रखा था। वे भय से काँप गईं कि किसी भी क्षण कोई भी बच्चा अपनी पकड़ ढीली कर सकता है और नीचे गिर सकता है। इसलिए उन्होंने वानरों द्वारा अपने बच्चों की सही ढंग से देखभाल न करने के लिए उन्हें सचेत करने के उद्देश्य से डाँटा–फटकारा। लेकिन उनकी फटकार का वानरों ने गुस्से में प्रत्युत्तर दिया, क्या वानरों से अधिक वे स्वयं असावधान नहीं हैं? क्या वे स्वयं मूर्ख नहीं हैं जिन्होंने अपने बच्चे को एक ऋषि की देखरेख में, जो उस समय आसपास के वातवावरण से बेखबर गहन ध्यान में लीन थे, एकांत कुटिया में छोड़ दिया है? अब कौन उस बच्चे की देखभाल करने वाला है? अब उन्होंने एक माँ की दृष्टि से देखा? वानर इतने मूर्ख नहीं होते हैं कि उनका ध्यान अपने बच्चों से हट जाए।

उनके प्रत्युत्तर ने सीता को इतना अधिक चेता दिया कि वह बिना समय गंवाए वापस गईं और बच्चे को अपने साथ ले आईं।

उसी समय ऋषि अपने ध्यान से उठ गए। उन्होंने बच्चे को चारों तरफ देखा। क्या? बच्चा गायब हो गया! बच्चे को क्या हो गया! निश्चित ही, बच्चे पर कोई विपत्ति आ पड़ी है! बेचारी सीता! वह कैसे इस आघात को सहन करेगी, पति से वंचित, अब बच्चे से भी वंचित! लेकिन ऋषि तो दया के साकार रूप थे। सीता को इस कठोर विपत्ति से उन्हें बचाना चाहिए। इसलिए उन्होंने उनके बच्चे के बदले एक नए बच्चे की रचना करने की सोची। तदनुसार, एक आकृति में जीवन संचार करने के लिए किए जाने वाले आवश्यक धार्मिक कृत्य से पहले, उन्होंने स्लेट पर एक बच्चे की आकृति खींची। जब वे धार्मिक कृत्य शुरु करने ही जा रहे थे, तभी सीता मंकुट को बाहों में लिए अंदर आईं। ऋषि ने बच्चे को देखकर राहत की सांस ली और उन्होंने अनुष्ठान को बीच में ही छोड़ दिया, लेकिन सीता ने उनसे उस अनुष्ठान को पूरा करने की प्रार्थना की

ताकि मंकुट को उसके साथ खेलने के लिए साथी मिल जाए। अंततः ऋषि की अलौकिक शक्तियों के द्वारा, सीता के मातृवत ध्यान और प्रेम को बाँटने के लिए एक दूसरा बच्चा आ गया जिसने उन्हें उनकी पीड़ा से मुक्त करने में सहायता की। नए बच्चे का नाम लब रखा गया। दोनों बच्चे स्वस्थ और ओजस्वी होते हुए बड़े होने लगे और उनकी प्रसन्नतापूर्ण ठिठोलियाँ, जो प्रायः आश्रम की शांति को भंग करती रहतीं, उनकी माता के जख्मी हृदय के लिए ठंडे मलहम का काम करतीं।

अध्याय 42

राम का अश्वमेध यज्ञ। पिता और पुत्र के बीच युद्ध

समय के साथ दोनों लड़के दस वर्ष के हो गए। किंतु पराक्रम और शक्ति में वे बड़े से बड़े शूरवीरों से भी बढ़कर थे। एक दिन दोनों भाईयों ने अपनी माता से अनुमति ली और सघन जंगल के बीचोंबीच घूमने चले गए। वहाँ उन्होंने एक विशाल 'रंग' वृक्ष को देखा जिसकी पत्तेदार चोटी हरे–भरे जंगल से भी बहुत ऊँची थी। मंकुट ने अपना बाण उठाया और अपने अस्त्र की शक्ति–परीक्षा के लिए पेड़ पर छोड़ा। बिजली के समान तेज गति से वह बाण उसके धनुष से निकला और पेड़ को दो भागों में तोड़ दिया। बहुत तेज गड़गड़ाहट के साथ वह जमीन पर आ गिरा। उसके गिरने ने दूर–दूर तक सारी पृथ्वी को हिला दिया और गुंजायमान कर दिया।

इससे जो कोलाहल हुआ, वह अयुध्या के महल में राम के कानों तक पहुँचा। किसने इस अकल्पनीय कोलाहल को करने की हिम्मत की जबकि नारायण इस समय स्वयं मानव रूप में हैं? क्या किसी ने उनकी शक्ति को छीनने के लिए जन्म ले लिया है? यदि ऐसा है, तो उन्हें इसके बारे में जानना चाहिए और उसे परास्त करना चाहिए

इस बात को ध्यान में रखकर, उन्होंने अश्वमेध करने का निर्णय किया। बर्फ के समान सफेद शरीर, गहरे काले रंग के चेहरे वाले, लाल गुलाब के समान मुख और टांगों वाले घोड़े को आजाद छोड़ दिया गया। इसकी गरदन पर एक लेख संलग्न था कि जो कोई भी इस पर चढ़ने की हिम्मत करेगा, वह विद्रोही समझा जाएगा, तदनुरूप उसके साथ बरताव किया जाएगा। बरत और सत्रुद के साथ फ्राया अनुजित उस घोड़े के पीछे–पीछे गए।

अनेक जंगलों और स्थानों से होता हुआ वह घोड़ा घूमता रहा। अंत में, ईश्वरीय इच्छा से वह जंगल के उस हिस्से में चला गया जहाँ उस कोलाहल को पैदा करने वाला अपने भाई के साथ खेल रहा था।

मंकुट ने वह लेख पढ़ा और तुरंत समझ गया कि किसने और क्यों इस घोड़े को आजाद छोड़ा हुआ है? बहादुर पिता का बहादुर पुत्र, वह इस घमंड से भरे लेख पर केवल हँसा। उन दोनों भाईयों ने फिर उस सुंदर जानवर को उसकी सरपट दौड़ का आनंद लेने के लिए पकड़ लिया।

फ्राया अनुजित इन दोनों लड़कों के बचकाने आचरण को देख रहे थे। वे इस प्रकार से जानवर को ले जाने को और अधिक सहन न कर सके। तत्क्षण वे सामने आए और उनका रास्ता रोक लिया। लेकिन मंकुट के एक बाण के प्रहार ने उन्हें बेहोश कर जमीन पर गिरा दिया।

उन्हें होश में आने में कुछ ही क्षण लगे। स्वस्थ हो जाने पर उन्होंने एक छोटे वानर का रूप धारण किया और उन दोनों भाईयों के पास पहुँचे। लेकिन वे पहले से कुछ अधिक अच्छा न कर सके। इस समय मंकुट उसे मारने ही वाला था कि लब ने उसे कपड़ों में देखा। एक वानर कपड़े पहने हुए! इसका मालिक कोई और होना चाहिए। इसलिए मारने के स्थान पर उन्होंने उसे मजबूती से बाँध दिया और जंगल में छोड़ दिया इस अभिशाप के साथ कि इसके स्वामी के अतिरिक्त और कोई इसे बंधन से मुक्त कर पाने में सक्षम नहीं होगा।

फ्राया अनुजित ने होश में आने पर अपने को इस दुर्दशा में पाया। उन्होंने, बरत और सत्रुद ने बंधन से छुटकारा पाने के लिए प्रयत्न किए, किंतु सब व्यर्थ ही गए। बंधन पहले की तरह उतना ही मजबूत था। इस अपकीर्तिकर दशा में उन्हें राम के पास जाना होगा। लेकिन वे अयुध्या कैसे जा सकेंगे? आकाश मार्ग से? देवतागण उन पर हसेंगे। थलमार्ग से? लोग उनका उपहास उड़ायेंगे। लेकिन उन्हें अपमान और अनंत बंधन में से एक को चुनना होगा। उन्होंने निर्णय किया कि अनंत बंधन की अपेक्षा अपमान कहीं अधिक स्वीकार्य है। इसलिए अपमान का शिकार वानर राम के पास आया और उसको बंधन से

मुक्त कर दिया गया। अपने सेवक की अपकीर्ति होने से परेशान राम ने बरत और सत्रुद को विशाल सेना के साथ फ्राया अनुजित के साथ जाने और दोनों छोटे दुष्ट बालकों को पकडने का आदेश दिया।

एक भयंकर युद्ध लड़ा गया, जिसके अंत में बरत के बाणों से मंकुट मूर्च्छित हो गिर गया, जबकि लब अपनी माँ की कुटिया की ओर भागा। इसप्रकार मंकुट को पकड़ कर अयुध्या ले जाया गया जहाँ उसे राम के आदेश द्वारा उसका सिर काटने तक कैद में सुरक्षित रखा गया।

इसी बीच लब ने अपनी माता को मंकुट के बारे में दुखभरी कहानी बताई। इस समय सीता के पास एक रहस्यमयी अंगूठी थी जो कठोर से कठोर गांठ को खोल सकती थी। उन्होंने इसे लब को दिया और उसे मंकुट को छुड़ाने के लिए भेजा।

नगर में उसने मानव रूप में एक दिव्य परी को देखा, जो मंकुट के लिए पानी खींच रही थी। लब ने पानी खींचने के लिए उसे अपनी सेवाएं प्रस्तुत कीं और ऐसा करते हुए उसने पानी के बर्तन में अपनी अंगूठी डाल दी। ज्योंही अंगूठी मंकुट के हाथ में पहुँची, उसने स्वयं को बंधनों से मुक्त पाया।

दोनों भाई तब नगर से बाहर जंगल में आ गए और शत्रु पर घात लगाकर आक्रमण करने के लिए बैठ गए।

जब राम ने देखा कि उनका कैदी बच निकल भागा है, वे स्वयं एक विशाल सेना का नेतृत्व करते हुए मंकुट को खोजने के लिए चल दिए। जंगल के बीचोंबीच पिता और उनके दोनों पुत्रों के बीच एक भीषण संघर्ष हुआ। लेकिन पुत्र का बाण पिता का खून पीने के लिए नहीं था, और न ही पिता का बाण अपने पुत्र का जीवन समाप्त करने के लिए। बाण आकाश से उड़ते हुए आए और बिना किसी पर प्रहार किए नीचे गिर गए। पहले पुत्र का बाण पुष्पों में बदला और राम के चरण कमलों की वंदना की।

विस्मित और आश्चर्यचकित राम ने अपने सामने वालों के वंश के बारे में जानना चाहा। जब उन्हें यह पता चला कि वे दोनों सीता के पुत्र हैं, वे

आश्चर्य से अभिभूत हो गए। क्या सीता लक्षण के द्वारा नहीं मारी गई? राम के द्वारा पूछे जाने पर लक्षण ने सारी कहानी बता दी। राम की प्रसन्नता की कोई सीमा न रही, जब उन्होंने अपनी रानी के निष्ठावान और स्वामीभक्त हृदय को ढूंढ निकाला।

वे उन दोनों भाईयों के साथ उनकी कुटिया में गए जहाँ सीता अपने पुत्रों की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रही थीं। यह उनकी प्रिय सीता की पहली झलक थी, नीले बादलों के पीछे क्षीण होता हुआ चाँद। लेकिन जब उन्हें यह पता चला कि राम उनके साथ उनकी कुटिया तक आ गए हैं, वे अपने पति की दुष्टता और अत्याचारों के कारण तीव्र क्रोध से भर गईं। उसके जीवन को बरबाद करने से संतुष्ट न हुए तो अब उसके पुत्रों का जीवन भी बरबाद करने आ गए हैं।

राम ने उनसे क्षमा मांगी और महल लौटने के लिए अनुनय–विनय की। लेकिन सीता राम की तथाकथित दयालुता से ऊब चुकी थीं। उन्होंने उनके प्रस्ताव को ठुकरा दिया। अब वे कैसे उसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकारने का कष्ट सह सकते हैं? क्या वे उस पर अविश्वास नहीं करेंगे? लंका में तो उसे सुरक्षा में रखा गया था फिर भी उनके अविश्वास का पात्र बनी। अब तो वह दस साल के लंबे समय से स्वतंत्र रूप से जंगल में रह रही है, फिर क्या वे उसके चरित्र को पहले से अधिक संदिग्ध नहीं समझेंगे? अब वे उसे कैसे अपनी पत्नी के रूप में स्वीकार कर सकते हैं?

राम के पास इसप्रकार के कटाक्षों का कोई जबाब नहीं था। उनके पास केवल निष्कपट और अश्रुपूर्ण निवेदन का ही रास्ता था कि यदि वे उनके साथ नहीं जाना चाहतीं, तो इससे अच्छा वे उन्हें मार दें। लेकिन सीता ने उनके इन मधुर वचनों पर कोई ध्यान नहीं दिया और उन्होंने कहा कि वे राम की तरह नहीं हैं जो अपनी पत्नी को मारने का आदेश देने में भी नहीं हिचकिचाए।

सीता को किसी भी प्रकार से अपने साथ ले जाने में असमर्थ राम ने तब उनसे उनके पुत्रों के बारे में कहा ताकि वे उन्हें अपने साथ महल ले जा

सकें और उनका पालन–पोषण उन नियमों के अंतर्गत कर सकें जो एक राजकुमार के लिए उचित होते हैं। प्रस्ताव सीता को कष्ट देने का एक और नया कारण था। यद्यपि वे अपने पुत्रों से प्रेम करती थीं फिर भी वे अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए उन्हें अपने पास रखकर उनका भविष्य खराब नहीं करना चाहती थीं। विचलित हृदय से निकले आँसुओं के साथ उन्होंने अपने पुत्रों को अपने प्रतापी पिता के साथ जाने और अपने महान वंश का गौरव बढ़ाने की आज्ञा दी*।

---

*सीता के निर्वासन से मंकुट और लब के युद्ध तक की सारी कहानी वाल्मीकि रामायण की तुलना में बंगाली रामायण से अधिक मेल खाती है। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, राम ने सीता का निर्वासन प्रजा के रोष को शांत करने के लिए किया था। उन्होंने कुश और लव नाम के दो जुड़वाँ बच्चों को जन्म दिया था। उन्होंने राम के साथ कभी युद्ध नहीं किया था। वे केवल अश्वमेध यज्ञ में शामिल हुए थे जिसके दौरान उनका अपने पिता के साथ मिलन हुआ था। लेकिन बंगाली रामायण में सीता इसलिए निर्वासित कर दी गईं थीं क्योंकि उन्होंने राम की बहन की प्रार्थना पर, रावण की आकृति बनाई थी जिसे बाद में वह मिटा नहीं सकी थीं। वन में उनके एक पुत्र पैदा हुआ था लेकिन वाल्माकि ने कुस घास से दूसरे पुत्र का सृजन किया था। दोनों भाईयों ने अश्वमेध के घोड़े को पकड़ लिया था, अपने पिता पर विजय प्राप्त की थी और बाद में मिलन हो गया था। लेकिन भारत की किसी भी रामायण के रूपांतर में हम यह नहीं पाते हैं कि सीता को मृत्यु दंड दिया गया हो।

अध्याय 43

सीता का पाताल में प्रवेश

राम ने अपने दोनों पुत्रों के साथ अयुध्या के लिए प्रस्थान किया। उनका रास्ता उसी जंगल में से था, जिस कारण उनके कदम अपने आप ही आगे बढ़ रहे थे। लेकिन यह उनकी विषादपूर्ण यात्रा थी और कभी–कभी उनके अनिच्छुक कदमों को सीता की मधुर यादें पीछे खींच कर मंद कर देती थीं। जंगल में राम को अपनी पत्नी, मंकुट और लब को अपनी माता की याद दिलाने के लिए और भी कई चीजें थीं। वहाँ एक चिड़िया थी जो अपने छोटे बच्चों को वैसे ही खिला रही थी जैसे सीता अपने बच्चों को खिलाती थी। दोनों भाईयों ने उस चिड़िया को देखा और उनके संतप्त मन में अपनी बाल्यावस्था का दृश्य सामने आ गया, जब वे अपनी माता की प्यारी गोद में खुश थे। एक समुद्री पक्षी जंगल के ऊपर से उड़ा केवल राम को उस अलगाव के समुद्र की याद दिलाने के लिए, जो अब उनके और उनकी प्रिय पत्नी के बीच में है। क्या यह कभी पार हो पाएगा? उन्हें संदेह था।

उनके विचार अब भी सीता के चारों ओर ही घूम रहे थे, अंततः वे अयुध्या नगर में पहुँच गए जहाँ हार्दिक अभिनंदन उनकी प्रतीक्षा कर रहा था।

मंकुट और लब के दिन अपनी दादियों के उदारतापूर्वक उमड़े प्रेम में खुशी–खुशी आराम से बीतने लगे। फिर भी, उनके दिल की गहराईयों में अपनी दुखी माता के लिए उमड़ने वाले भाव बंद नहीं हुए। अंत में उनकी भावनाएं इतनी प्रबल हो गईं कि अयुध्या के महल ने भी उनके बाल मन को खुशी और शांति देना बंद कर दिया। इसलिए उन्होंने अपने पिता से अनुमति ली और अपनी माता के पास जाने के लिए उन्होंने जंगल की ओर प्रस्थान किया।

राम ने इस अवसर का लाभ उठाते हुए सीता के पास पुनः संदेश भेजा कि यदि वे आने में असमर्थ हुईं तो आँसू, जो इस समय उनके इकलौते साथी हैं, उन्हें मौत के मुँह में ले जायेंगे।

सीता ने अपने पुत्रों से इस संदेश को सुना। लेकिन उनका केवल एक ही उत्तर था कि यदि कभी राम पर ऐसा समय आया, तो वह उनके शरीर को अपनी आखिरी श्रद्धा अर्पित करने अवश्य आएगी।

दुखी मन से वे दोनों भाई राजधानी लौट आए और उन्होंने राम को सीता के उत्तर के बारे में बताया। उत्तर की गंभीरता उनके लिए कई निद्रारहित रातें लेकर आई। अंत में, फ्राया अनुजित के साथ मिलकर उन्होंने एक कपटभरी योजना गढ़ी जो सीता को महल में ला सकती थी।

फ्राया अनुजित सीता के पास यह झूठा समाचार लेकर गए कि सीता के प्रति राम के दुख ने आखिर उनके जीवन को समाप्त कर दिया। वास्तव में उनके पति की मृत्यु हो गई! मृत्यु! उनकी क्रूरता के बावजूद, मृत्यु ने उनके क्रोध और घृणा की सारी भावनाओं को मिटा दिया और इसके शिकार को सारी अच्छाईयों के साथ प्रस्तुत कर दिया। मृत्यु के समाचार से सीता उन सभी क्रूरताओं को भूल गईं जो कभी उन्हें राम से मिली थीं। उन्होंने केवल उसी विशेष प्रेम को याद रखा जो वे उनके लिए रखते थे। इसलिए वह अपने पति के अवशेषों को अंतिम श्रद्धांजलि देने के लिए शीघ्रता से महल की ओर चल दीं। वे शवकक्ष में गई जहाँ पर तथाकथित मृत शरीर एक पात्र में सुरक्षित रखा हुआ था और विलाप करने लगीं। उनका विलाप राम तक पहुँचा, जो परदे के पीछे छिपे हुए थे। वे उस छिपे हुए स्थान से बाहर आए और उस विलाप करते हुए रूप को खुशी से अपने ज्वलित हृदय से लगाने के लिए उस ओर दौड़े। लेकिन उनकी इस कपटी युक्ति ने सीता के मन में केवल रोष की ज्वाला को दोबारा प्रज्ज्वलित कर दिया जो अब बुझने वाली थी। जब उनकी अश्रुपूर्ण प्रार्थना सीता को महल में ठहरने के लिए मनाने में व्यर्थ सिद्ध हुई, राम ने बल का सहारा लिया। राम ने अपने सभी भाईयों और फ्राया अनुजित को बुलवाया और शवकक्ष के सभी निकास द्वारों को बंद करने का आदेश दिया ताकि उन्हें रहने के लिए विवश किया जा सके।

लेकिन तभी उनको पूरी तरह से हताश कर देने वाली एक घटना वहाँ पर घटी। उस स्थान पर, जहाँ सीता खड़ी हुई थीं, उनकी प्रार्थना से धरती फट गई, उस दरार में वे प्रवेश कर गईं और पाताल के राजा, नागाविरुन के नगर में चली गईं। धरती ऊपर से बंद हो गई और उस पर राम का मूर्च्छित शरीर पड़ा हुआ था।

अध्याय 44

राम का जंगल में प्रवास

जब राम अपने होश में आए, उन्होंने फ्राया अनुजित को पाताल भेजा। वानर को देखने पर उनका क्रोध और अधिक भड़क गया। चूंकि एक बार वे उनसे धोखा खा चुकी थीं, वे अधिक सावधान हो गई थीं और अपने यहाँ से उन्हें निकाल दिया। अंत में राम ने बिभेक से परामर्श किया, जिसने अपने ज्योतिषीय ज्ञान की सहायता से देखा कि अंधकारमय भविष्य राम को निगलने धीरे–धीरे उनके पास आ रहा है। ग्रहों के इस दुष्प्रभाव से छुटकारा पाने का एक ही रास्ता था कि राम महल को छोड़ दें, एक वर्ष के लिए जंगल में प्रवास बना लें और उस समय को राक्षसों को मारने में बितायें। एक वर्ष के बाद उदासी सदा के लिए समाप्त हो जायेगी और कभी कम नहीं होने वाला प्रकाश उनके जीवन को रोशन करेगा।

इसलिए राम अपने प्रिय भाईयों और निष्ठावान सेवकों के साथ जंगल में चले गए। वहाँ उनका सामना कुवेर के पुत्र त्रिपक्कन से हुआ जो लक्षण के बाण से मारा गया। अपने पुत्र के मारे जाने पर कुवेर अपनी शक्तिशाली सेना के साथ आया। लेकिन राम के बाण ने उसे उसके पुत्र के पास पहुँचा दिया।

फिर वे अपने रास्ते पर आगे बढ़ गए। बहुत शीघ्र वे कुंभंद नामक राक्षस से मिले। वास्तव में वह एक अर्द्ध–देवता था, जो ईस्वर द्वारा शापित होकर एक राक्षसी जीवन बिता रहा था। परंतु उसके उस जीवन का अंत तभी होता, जब राम उस पर उपकार करके अपनी कृपा बरसाते। कृपालु राम ने उसे उसके शापित जीवन से मुक्त किया और वे जंगल के सघन भाग की ओर बढ़ते गए। वहाँ चिड़िया के सिर वाले एक अजीब प्रकार के राक्षस से उनका सामना हुआ जिसने आकाश से नीचे आकर अचानक राम और लक्षण पर झपट्टा मारा और उन्हें पकड़ कर वापस आकाश में चला गया। लेकिन अपनी द्रुतगति के बावजूद वह अपने सगे–संबंधियों से अधिक कुछ न कर सका। सुग्रीव और हनुमान ने दोनों भाईयों को उसकी पकड़ से मुक्त करा लिया, जबकि अंगद और निलाबद ने उसका अंत कर दिया।

आगे बढ़ते हुए फिर वे एक विशाल तालाब पर पहुँचे, जिसकी लहरें खिले हुए कमलों के साथ नृत्य कर रही थीं। लेकिन वह सुंदर तालाब उनराज का घर था, जो एक समय में ईस्वर का सेवक था लेकिन अब एक शापित राक्षस। उसकी नियति में तय था कि राम के धनुष द्वारा छोड़ी गई कोक घास से उसे एक चट्टान से बाँध दिया जाएगा और दस लाख करोड वर्ष तक इसी स्थिति में रहेगा, एक मुर्गा उसकी निगरानी करेगा और एक कौआ भी। यदि घास कभी भी उसके वक्षस्थल से हटी, तभी एक स्त्री तेजी से आएगी और लोहे के हथौड़े से उसके वक्षस्थल को तब तक पीटती रहेगी, जब तक उसके शापित जीवन का अंत नहीं हो जाएगा।

एक साल के प्रवास का अंत अब पास आ गया था। इसलिए राम अयुध्या की ओर वापस चल दिए और इस आशा की किरण के साथ जल्दी ही राजमहल में पहुँच गए कि प्रवास के अंत के साथ ही ग्रहों का बुरा प्रभाव भी समाप्त हो जाएगा जो निकट भविष्य में उनकी प्रिय पत्नी सीता के प्रेम से धन्य एक नए जीवन–दर्शन को प्रकट करेगा।

कुंभंद

अध्याय 45

राम और सीता का पुनर्मिलन

इसी बीच कैलास पर्वत पर देवताओं की शतवार्षिकी सभा का आयोजन हुआ। दैदीप्यमान देवता संसार की स्थिति पर विचार–विमर्श कर रहे थे। इंद्र ने ईस्वर को बताया कि संपूर्ण सृष्टि शांति और आनंद में है, राम के पराक्रम ने दुष्ट राक्षसों को उनके छिपे हुए स्थानों से बाहर खींच कर **उन** सभी का सर्वनाश कर दिया है। अब जिस सुख और सुरक्षा का पूरी सृष्टि पर आधिपत्य है, उस पर किसी दुख अथवा भय की छाया नहीं पड़ी है। लेकिन वे, जिन्होंने सारे संसार को खुशी प्रदान की, आज स्वयं ही सबसे अधिक शोकसंतप्त जीवन व्यतीत कर रहे हैं, क्योंकि उनकी खुशी की स्त्रोत सीता ने क्रोधावेश में उन्हें अकेला छोड़ दिया है

इस पर दयालु देवता ने राम और सीता को बुलवाया ताकि वे स्वयं उन्हें किसी समझौते पर ला सकें जो अंततः उनके सुखद पुनर्मिलन में बदल जाए।

बहुत शीघ्र ही पति–पत्नी कैलास पर्वत पर पहुँच गए। शिव ने ध्यान से देखा कि सीता अपने पति के अनुचित ईर्ष्यालु और क्रूर व्यवहार पर अभी भी क्रोध में हैं। इसलिए व्यवहारकुशल देवता ने यही उपयुक्त समझा कि पहले वे राम को उनके दुर्व्यवहार के लिए डाँटें और फिर सीता से पुनर्मिलन के लिए कोमल भावनाएं रखने का अनुरोध करें।

पर व्यवहारकुशल राम को डाँटने की आवश्यकता नहीं हुई। उन्होंने अपने अपराध को खुशी से स्वीकार किया और सीता से माफी मांग ली।

किंतु सीता अब भी किसी प्रकार की दया दिखाने से कोसों दूर थी। वह इतनी अधिक आहत हो चुकी थी कि जल्दी से वह न तो माफ कर सकती

थी और न भूल सकती थी। जैसा कि उन्होंने कहा कि वे अब राम की समझदारी में पूरी तरह विश्वास खो चुकी हैं। उनके अच्छे और बुरे भाव इतनी तेजी से बदलते हैं कि वह स्वयं को ही राम के हाथों में सुरक्षित होने का विश्वास नहीं दिला सकती क्योंकि न जाने कौन से क्षण उनका कौन सा हाथ उठकर उस पर दुख बनकर गिर पड़े।

फिर भी, ईस्वर के अनुरोध करने पर अंततः उन्होंने समर्पण कर दिया और राम को स्वीकारने के लिए अपनी सहमति दे दी। ज्योंही सीता के मुख से शब्द बाहर आए, राम प्रसन्नता से अभिभूत हो गए। दुख ने उन्हें अपनी पकड़ से मुक्त कर दिया और उन्होंने फिर स्वयं को प्रसन्नता के असीम आकाश में स्वतंत्रता से उड़ते हुए पाया। सजीव–से राम अब अपने जीवन–अमृत तुल्य प्रेम के साथ थे, विश्व ने उन्हें एक विशाल कार्य–क्षेत्र प्रस्तुत किया–एक रंगमंच जिस पर उन्होंने अतुलनीय यश के लिए काम किए जो प्रसिद्ध और अमर होकर संपूर्ण सृष्टि को युगों–युगों तक प्रकाशित करते रहे*।

---

*कहानी फिर मंकुट और लब के साहसिक कार्यों को बताने के लिए चलती रही जो राजा कैयाकेश के आग्रह पर उनके देश उन राक्षसों का सर्वनाश करने के लिए गए थे जिन्होंने उनके राज्य पर आक्रमण किया था।

डॉ. करुणा शर्मा

जन्मः 11 दिसंबर 1957, रामनगर, नैनीताल (उत्तराखंड)।

शिक्षाः दिल्ली विश्वविद्यालय से हिंदी और संस्कृत में स्नातकोत्तर, हिमाचलप्रदेश विश्वविद्यालय से एम. फिल. दिल्ली विश्वविद्यालय से पी.एच.डी

समीक्षात्मक पुस्तकेंः कमलेश्वर के कथा साहित्य में
स्त्री–विमर्श, उपन्यासों के झरोंखे से–चित्रा मुद्गल।

लेखः विभिन्न विषयों पर केंद्रित विचारपरक, समीक्षात्मक एवं शोधपरक अनेक लेख निरंतर राष्ट्रीय स्तर की अनेक पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित।

शोधपत्रों की प्रस्तुति : अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर की अनेक संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों में शोध पत्रों की प्रस्तुति।

प्रमुख पुरस्कार :शिक्षा विभाग, दिल्ली सरकार का वर्ष 2007 के लिए 'राज्य शिक्षक पुरस्कार'। हिंदी अकादमी, दिल्ली का वर्ष 2007 के लिए 'हिंदी शिक्षक सम्मान'।

अध्यापनः वर्तमान में थम्मासॉट विश्वविद्यालय, बैंकॉक
(थाइलैंड) में अभ्यागत प्राध्यापक (हिन्दी चेयर) के रूप में अध्यापनरत।
:इससे पहले दिल्ली सरकार के शिक्षा विभाग में प्राध्यापक के रूप में अध्यापन।

संपर्क : karunajee1957@gmail.com